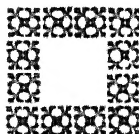
पवित्र जीवन

अर्थात्

जगद्गुरु श्री मुहम्मद जी महाराज

— का —

जीवन वृत्तान्त



लेखक :

एस. मुहम्मद यूसुफ़

सम्पादक—"नूर" क़ादियां

पवित्र जीवन

सदाचारकी प्रसिद्ध घटनाएँ

(नबव्वत से ४० वर्ष पूर्व)

—:o:-:o:—

जन्म—(५७१ ई०)—जन्म-तिथि २० अप्रैल सन् ५७१ ईस्वी, तदनुसार ६ रबी-उल-अव्वल है। पितामहा (दादा) ने मुहम्मद तथा माता ने अहमद नाम रक्खा।

खाना क़ाबा पर यमनके ईसाई लाट अबराह का आक्रमण—सन् ५७१ ई० में हुज़ूरके जन्मदिन या इससे ५२ दिन पूर्वकी घटना है। क़ुरैश ने मुक़ाबिला न किया; परन्तु आक्रमणकारी दल में माता (चीचक) फूट निकली। स्वयं अबराह को भी माता निकल आई। कुछ मर गए और कुछ एक पागल होकर भाग गए।

दूध पीने का काल—दो तीन दिन तक आप की माता ने दूध पिलाया, फिर सबीबह-अबु लाहब की दासी ने तथा इसके अनन्तर आप कबीला हवाज़न की एक बीबी हलीमा सादिया के सुपुर्द हुए। दो वर्ष के बाद दूध

पिलाने का काल समाप्त हो गया, परन्तु मक्के में बीमारी फैली होने के कारण आप पुनः उन्हीं के हवाले किए गए और छटे वर्ष तक वहीं रहे।

मदीने की यात्रा और माता का स्वर्गवास—(आयु ६ वर्ष)—छः वर्ष की अवस्था में आप की माता जी आप को लेकर मदीने गईं। वापिसी पर रास्ते में ही आप की माता जी का देहान्त हो गया।

अब्दुल मतलब के संरक्षण में--(आयु ८ वर्ष)—माता के देहावसान के अनन्तर आप अपने पितामहा अब्दुल मतलब की छत्र-छाया के नीचे रहे। आप की आयु आठ वर्ष की थी, जब कि पितामहा भी स्वर्गवास हो गए।

अबु तालब की संरक्षणता--पितामहा के बाद आप का पालन-पोषण अबु तालब के सुपुर्द हुआ, जो आप के पिता के बड़े भाई थे।

शाम की यात्रा तथा बहीरा राहब की कथा--(आयु १२ वर्ष)—आप की आयु १२वर्ष की थी, जबकि अबु तालब ने शाम की यात्रा की और आप को भी साथ ले गए। बहीरा राहब के मिलाप की घटना इसी यात्रा की बताई जाती है, परन्तु यह कथा प्रामाणिक नहीं।

व्यापार का बहलावा--आपने निर्वाह के लिए जो साधन बनाया वह व्यापार था। सौदागरी के लिए शाम, बसरा, यमन की कई यात्राएँ कीं। आप के प्रसिद्ध सत्य व्यवहार के कारण लोग अपनी जमा पूँजी हज़ूर के हवाले कर देते थे और आप उन से शिर्कत (हिस्सेदारी) कर लिया करते थे।

फ़जार का युद्ध--(आयु २० वर्ष)—५८० ई० और ५९० ई० के मध्यकाल में फ़जार का युद्ध हुआ अर्थात् कुरैश और कैस के क़बीलों में लड़ाई प्रारम्भ हो गई, जिसका नाम फ़जार का युद्ध पड़ा, क्योंकि हुरमत के (सत्कार योग्य) महीनों में यह लड़ाई हुई। इस युद्ध में आप ने भी भाग लिया। उस समय आप की आयु २० वर्ष की थी।

हलफ़ुल फ़ज़ूल--फ़जार के युद्ध की सन्धि हो जाने के बाद कुरैश के तीन क़बीलों के मध्य एक प्रतिज्ञा-पत्र लिखा गया जिसको हलफ़ुल फ़ज़ूल कहते हैं। प्रतिज्ञा यह थी कि प्रत्येक कुरैश जो इसमें सम्मिलित है, दीनों की सहायता करे उस समय तक कि उनके अधिकार दिला दे। हुज़ूर भी इसमें शामिल थे।

हज़रत ख़दीजा के साथ विवाह--(आयु २५ वर्ष)—२५ वर्ष की आयु में आप ने हज़रत (श्रीमती) ख़दीजा के

साथ, जो चालीस वर्ष की विधवा थीं, विवाह किया। उन से दो बालक हुए, जिनमें से बड़े का नाम क़ासिम था, जिस कारण से आप को अबु क़ासिम अर्थात् क़ासिम का पिता कहते हैं। तथा चार लड़कियाँ भी हुईं जिनके नाम—ज़ैनब, रूक़ीआह, उम्मकलसूम और फ़ातमा था। हज़रत (श्रीमती) फ़ातमा का विवाह हज़रत अली के साथ हुआ, इन्हीं से सय्यदों की पीढ़ी चलती है।

काबा का निर्माण--(आयु ३५ वर्ष, ६०५ ई०)—आप की आयु ३५ वर्ष की थी जब क़ुरैश ने खाना काबा को नए सिरे से बनवाया। असवद पत्थर आप के कर-कमलों द्वारा गाड़ा गया।

हरा की कन्दरामें एकान्तवास--नबव्वत से कुच्छ काल पूर्व आप हरा की कन्दरा में, जो मक्के से तीन मील पर है, एकान्तवास के लिए जाया करते थे। इस समय में आप को अधिकतया सत्य स्वप्न आने लग गए जो साथ ही साथ पूर्ण होते जाते थे।

————

मक्की जीवन १३ वर्ष



कुरान अवतीर्ण प्रारम्भ--(वर्ष बासत प्रथम, सन् ६०६ ई०)—आयु के ४० वर्ष समाप्त हो चुके थे, सन् ६१० ई० था। २५ रमज़ान लैल-तुल-क़द्र (सौभाग्य-शाली रात्रि) को सर्व प्रथम (सब से पहिली) आकाश-वाणी कुरान शरीफ़ की "अक़रा बइस्म रब्बकुल ज़ी खलक़" अर्थात् अपने प्रति पालक के नाम के साथ जिसने तुझे पैदा किया, उच्चारण कर " उतरी, और आप सारी सृष्टि में प्रचार के लिए नियुक्त हुए।

वही का रुकना--पहिली वही के अनन्तर कुच्छ काल तक जो छः मास से अधिक नहीं था, वही (आकाश-वाणी) रुकी रही।

पहिले मोमन (शिष्य)--(वर्ष बासत १ से ३, ६०६ से ६१२ ई०तक)—बासत (प्रकाश) के पहिले ही वर्षमें वही के उतरने पर श्रीमती खदीजा (धर्मपत्नी), अबु बकर (सब से परम मित्र), अली (चचा का पुत्र, भ्राता) और ज़ैद (आप का स्वतन्त्र किया हुआ दास), आप पर ईमान

ले आए। इसके अनन्तर ३ वर्ष के भीतर लगभग ४० मनुष्य ईमान ले आए, जिनमें हज़रत उस्मान, ज़बीर, अब्दुल रहमान बिन औफ़, तलहा, और बलाल सम्मिलित थे।

सफ़ा पर्वत पर प्रचार और समस्त कुरैश को निमन्त्रण--(वर्ष बासत ४, ६१३ ई०)—प्रारम्भ में लगभग तीन वर्ष तक आप खुला प्रचार करने के स्थान पर अलग अलग लोगों को बुला कर ईश्वरीय सन्देश सुनाते थे। चौथे वर्ष में आज्ञा हुई कि प्रचार को सर्व साधारण में कर दो। सफ़ा पर्वत पर चढ़ कर आप ने क़ुरैशों को आमन्त्रित किया और ईश्वरीय आज्ञा सुनाई, जिससे विरोधाग्नि भड़क उठी।

कुरैश को बुलाना—अब्दुल मतलब के घराने को आपने उसी वर्ष ही बुलाया और बतलाया कि यदि (तुम लोग) लोक-परलोक में सफलता प्राप्त करना चाहते हो तो मेरे साथ मिल जाओ। लोग हँस कर चले गए।

कुरैश का प्रतिनिधि-मण्डल (Deputation) अबु तालब के पास—कुरैश ने अबु तालब को कह भेजा कि आप, (हज़रत) मुहम्मद (साहिब) को प्रचार से रोक दो। उन्होंने साधारणतया आप को कह दिया। दूसरा प्रतिनिधि-मण्डल आया और मांग की गई कि या

तो अबु तालब आप (मुहम्मद साहिब) से अलग हो जाय, नहीं तो कुरैश के सब क़बीले बनी हाशम के साथ युद्ध करेंगे। अबु तालब ने आप को कहा तो आप ने उत्तर दिया कि सूर्य्य को मेरी बाईं और चन्द्रमा को मेरी दाईं ओर लाकर रख दो, तब भी मैं इस कार्य्य को नहीं छोड़ूँगा। तीसरा वैसा ही मण्डल आया कि (हज़रत) मुहम्मद (जी) के स्थान पर अमारा बिन वलीद (एक सुन्दर युवक) को ले लो, किन्तु अब्बू तालब ने इसे न माना।

अकरम का गृह—कुरैश के आप को अधिक कष्ट देने के कारण आप ने अकरम नामक एक सहाबी का घर बासत (प्रकट होने) के चौथे वर्ष में नमाज़ और भजन, उपासना आदि के लिए नियत किया!

हबश को जाना—(वर्ष बासत ५, ६१५ ई०)— प्रकट होने के पांचवें वर्ष रजब के महीने सन् ६१४ ई० में ११ साथी, जिनमें हज़रत उस्मान और उनकी धर्मपत्नी रकीआ (आप की सुपुत्री) थे, हबश की ओर चल पड़े। कुरैश ने पीछा किया किन्तु यह लोग जहाज पर चढ़ कर चल चुके थे। फिर नजाशी-हबश के बादशाह के पास प्रतिनिधि-मण्डल भेजा कि इनको वापिस कर दो; परन्तु उसने भी सब समाचार जानकर और इस्लाम के प्रचार को

सुन कर इन्कार कर दिया। तब अन्य साथी भी चले गए। यह हबश की दूसरी हिजरत कहलाती है। सारे १०१ पुरुष तथा स्त्रियाँ हबश में एकत्रित हो गए।

हज़रत हमज़ा और उमर का ईमान ले आना—(वर्ष बासत ६, ६१५–१६ ई०)—बासत के छटे वर्ष में पहिले हज़रत हमज़ा तथा फिर उमर ने इस्लाम को स्वीकार किया। इनके कारण इस्लाम और भी बलवान् हो गया और खाना क़ाबा में जमात समेत (श्रेणी बद्ध) निमाज़ पढ़ी गई।

क़ुरैश की ओर से उतबा की विनय—जब असहनीय कष्ट आप को तथा आप के साथियों को डिगा न सके तब काफ़िरों ने आप को लोभ देना चाहा और उतबा को सन्देश देकर भेजा कि हमारी अध्यक्षता स्वीकार कर लो, जितना चाहो धन एकत्रित कर देते हैं। सुन्दर से सुन्दर स्त्री विवाह के लिए भेंट कर सकते हैं। आप ने क़ुरान शरीफ़ पढ़ कर सुनाया कि मैं शुभ समाचार बताने और ईश्वरीय भय देने वाला हूं। इन वस्तुओं की मुझे आवश्यकता नहीं।

शअ़ब अब्बी तालबकी कन्दरामें घिर जाना—(बासत वर्ष ७, ६१६ ई०)—समस्त प्रयत्नों में असफल

होने के कारण, अन्त में क़ुरैश के सब क़बीलों ने बनी हाशम के विरुद्ध परस्पर अहिद (प्रतिज्ञा) करके क़ाबे में लटका दिया कि न इनके साथ विवाह शादी का सम्बन्ध करेंगे और न ही खाने पीने की सामग्री इनके पास पहुंचने देंगे। यहाँ तक कि हज़रत मुहम्मद जी को क़त्ल करने के लिए हमारे हवाले कर दें। प्रकाश के सातवें वर्ष में बनी हाशम एक दर्रे में, जो शअ्‌ब अब्बी तालब के नाम से प्रसिद्ध था, घिर गए और तीन वर्ष तक भयानक दुःखों और भूख का सामना किया। इन दिनों में श्रीमान् जी केवल हज्ज के दिनों में ही प्रचार कर सकते थे।

शअ्‌ब अब्बी तालबकी कंदरामें से निकलना–

(वर्ष बासत १०, ६१६ ई०)—प्रकाश के दसवें वर्ष में एक ओर तो अहिदनामे (प्रतिज्ञापत्र) को दीमक खा गई और दूसरी ओर जनता विरुद्ध हो गई और बनी हाशम ने छुटकारा पाया।

हज़रत ख़दीजा और अब्बू तालब की मृत्यु–

(दिसम्बर ६१६ ई०, जनवरी ६२० ई०)—घेरे में से निकलने के थोड़े ही दिन बाद प्रकाश के दसवें वर्ष में अब्बू तालब और ख़दीजा एक दूसरे के पीछे काल के ग्रास हो गए। इसी कारण यह वर्ष आमुल हुज़न (शोक का साल) कहलाता है।

ताइफ़की यात्रा—(जनवरी ६२०ई०)— इस दसवें वर्षमें आप ताइफ़को प्रचारके लिए चले गए; किन्तु वहाँ भी लोगोंने बहुत तङ्ग किया और आप घायल होकर वापिस लौट आए।

मदीने के लोगों में इस्लाम का प्रारम्भ—(बासत वर्ष ११, ६२०ई०)—हज्ज की ऋतुमें जब आप भिन्न २ क़बीलों में फिर कर इस्लाम का सन्देश पहुंचा रहे थे तब मदीने की जाति (क़ौम) खज़रज के छः मनुष्यों ने इस्लाम स्वीकार कर लिया।

उकबा की पहिली बैत—(बासत वर्ष १२, अप्रैल ६२१ ई०)—प्रकाश के बारहवें वर्ष हज्ज की ऋतु में बारह पुरुष मदीने से आए और उकबा के स्थान पर हज़ूर के मुरीद (सेवक) हुए। इस्लाम के प्रचार के लिए आप ने मसअब बिन अमीर को मदीने भेजा और अगले वर्ष तक इस्लाम घर घर फैल गया। यह बैत इस बात पर थी कि चोरी, द्वेष, बलात्कार, बच्चों को मारना और झूठे आरोप (तोहमत) लगाने आदि अवगुण त्याग देंगे।

उकबा की दूसरी बैत—(बासत वर्ष १३, मार्च ६२२ ई०)—प्रकाश के तेरहवें वर्ष में मदीने से अच्छे २ आदमी आए, जिन में दो स्त्रियाँ भी थीं, और उकबे के स्थान पर भक्त बने। यह इस बात की बैत थी कि हज़ूर की रक्षा इस प्रकार करेंगे जैसे अपने परिवार की।

साथियों की हिजरत—(बासत वर्ष १४, अप्रैल ६२२ ई०)——चौदहवें वर्ष बासत के पहिले डेढ़ महीनेके भीतर सारे साथी एक-एक, दो-दो कर के मदीने हिजरत कर गए।

दारुल नदवा में आप के क़त्ल का परामर्श——जब कुरैश ने देखा कि आप के साथी सब जा रहे हैं तो दारुल नदवा में परामर्श किया गया। अन्त में यह निश्चय हुआ कि कुरैश के प्रत्येक कबीले का एक २ युवक निकले और सारे मिल कर रात्रि के समय नबी करीम के गृह को घेर लें और जब आप प्रभात के समय निमाज़ के लिए निकलें तो एकदम हल्ला करके आप को मार दें।

नबी जी की हिजरत——इस समय सर्वान्तर्यामी परमात्मा की ओर से आप को हिजरत की आज्ञा मिली। आप घेरा डालने वालों की आँखों में धूल झोंक कर उनके मध्य से निकल गए और हज़रत अबू बकर को साथ लेकर मक्के के बाहिर सौर की कन्दरा में—जो मक्के से तीन मील की दूरी पर है—छिप गए और तीन दिन उस के भीतर रहे। काफ़िर ढूँढते, तलाश करते यहाँ तक पहुँचे परन्तु आप को न देख सके। तीन दिन के अनन्तर आप ने मदीने का रास्ता लिया। यह चौदहवें वर्ष बासत सफ़र के महीने के अन्तिम दिन थे।

मदनी जीवन—दस वर्ष

—०:-:०—

क़बामें विश्राम—(सन् हिज़री १, ६२२ और ६२३ ई०) ८ रबीउल-अव्वल सोमवार के दिन जून ६२२ ई० के अन्तिम दिनों में आप मदीने पहुंचे और मदीने से तीन मील बाहिर की आबादी में जो क़बा कहलाती है, उतरे।

क़बा की मस्जिद का निर्माण—चौदह दिन तक आप यहाँ रहे और इन दिनों में क़बा की मस्जिद की नींव रक्खी गई।

नबी की मस्जिद का निर्माण—मदीने पहुंचते ही आप ने सब से पहिले मस्जिद के लिए स्थान लिया और नबी की मस्जिद बनाई गई। मस्जिद के साथ ही, मस्जिद में खुलते हुए हज़ूर के गृह आदि के लिए हुजरे बनाए गए और एक सिरे से निर्गृह दीनों के लिए, जो असहाबे-सुफ़ा कहलाते थे, छतदार चबूतरा बनाया गया।

बांग (अज़ान) और जुमा—मदीने पहुंच कर

हज़ूर ने जुमे की पहिली निमाज़ पढ़ी और बांग का प्रारम्भ भी यहीं से किया।

भ्रातृपन—मस्जिद के निर्माण के साथ ही दूसरा काम आप ने यह किया कि एक-एक महाजर को एक-एक अनसारी का भाई बना दिया और जब तक महाजरों ने अपने मकान न बनवाए, वह सब इनके साथ ही रहते रहे।

यहूदियों के साथ वचन—इसी वर्ष मदीने के यहूदियों के साथ भी आप ने प्रतिज्ञा की जिस के अनुसार यह निश्चय हुआ कि दोनों आपस में एक दूसरे के धर्म से घृणा न करेंगे। शत्रु के मुक़ाबिले में एक दूसरे की सहायता करेंगे। मदीने के अन्दर एक-दूसरे का रक्त न बहाएँगे। सब झगड़ों का अन्तिम निर्णय हज़ूर करेंगे।

बदर का युद्ध-(रमज़ान सन् २ हिजरी, जनवरी ६२४ ई०)—यह युद्ध १७ रमज़ान सन् २ हिजरी में बदर के स्थान पर हुआ, जो मदीने से तीन और मक्के से दस पड़ाव है। क़ुरैश मक्के पर चढ़ आए थे। हज़ूर ने महाजरों और अनसारियों की सम्मति अनुसार बाहिर निकल कर इनका मुक़ाबिला किया। क़ुरैश एक हज़ार शस्त्रों से सुसज्जित योद्धा थे। मुसलमान ३१३ शस्त्रों

से हीन और युद्ध-विद्या से पूर्णतया अनभिज्ञ। फिर भी मुसलमानों की जीत हुई, क़ुरैश के सात बड़े २ सरदार मारे गए। कुल ७० का वध हुआ और ७० बन्दी हुए। मुसलमान १४ शहीद हुए। बन्दी दण्ड धनराशि लेकर छोड़ दिए गए।

बनी कीनकाह को देश निकाला--(शवाल २ हिजरी, फ़र्वरी ६२४ ई०)-इसी वर्ष यहूदियों के क़बीला बनी कीनकाह ने वचन भंग किया, इन को घेर लिया गया और इस बात का निश्चय हुआ कि मदीना छोड़ जाएँ। वह शाम में जा बसे।

उहुद का युद्ध-(शवाल ३ हिजरी, जनवरी ६२५ई०) बदर का बदला लेने के लिए अगले वर्ष अबू सफ़ीआन ने तीन हज़ार योद्धा लेकर फिर मदीने पर चढ़ाई की और उहुद के नीचे मदीने से तीन मील उत्तर की ओर ६ शवाल वीरवार के दिन डेरे लगाए। हज़ूर ने सलाह की और निश्चय हुआ कि बाहिर निकल कर शत्रु का मुक़ाबिला किया जावे। एक हज़ार व्यक्ति आप के साथ निकले; परन्तु अब्दुल-बिन-अबी, जो मुनाफ़िकों का नेता था अपने तीन सौ आदमियों सहित रास्ते से ही लौट गया,

केवल ७०० मुक़ाबिले के लिए रह गए। शनि के दिन युद्ध हुआ, मुसलमानों की जीत हुई; परन्तु इन के अनुयधारियों की एक टोली ने जो एक दर्रे पर नियत थे, आज्ञा भंग की और शत्रुओं के पीछे दौड़ गए। खालद ने दो सौ अश्वारोहियों सहित मुसलमानों पर पीछे से हल्ला किया और दौड़ती हुई काफ़िरों की सेना सामने मुक़ाबिले पर आ गई। मुसलमान दोनों ओर से घिर गए। हज़ूर ने इनको आवाज़ देकर एकत्रित किया, काफ़रों ने आप पर ज़ोर से आक्रमण किया। आप घायल हो गए और गिर पड़े; परन्तु मुसलमानों ने इकट्ठे होकर हज़ूर के आस-पास घेरा डाल लिया। काफ़िर इस घेरे रूपी दीवार को तोड़ने का निष्फल प्रयत्न करके अन्त में पीछे हट गए और युद्ध-भूमि को छोड़ कर मक्के को चले गए। अगले दिन हज़ूर ने इनका पीछा किया।

बअर मऊनी की घटना—(सफ़र ४ हिजरी)—सफ़र ४ हिजरी में एक आदमी अबूबरा ने हज़ूर से विनती की कि अपने प्रचारकों को मेरे साथ भेजो, मेरी जाति मुसलमान होना चाहती है। आप ने ७० क़ारी (पाठी) भेजे जिनको धोखा देकर बअर मऊनीके स्थान पर क़त्ल कर दिया गया।

रजीह—रजीह के स्थान पर इसी प्रकार धोखा देकर आप के १० कारी (पाठी) क़त्ल किए गए।

बनी नज़ीर का देश निर्वासन–(रबी-उल-अव्वल ४ हिजरी, जून ६२६ ई०)----इसी वर्ष यहूदियों की जाति बनी नज़ीर ने वचन भंग किया और शत्रुओं के साथ मिल गए। हज़ूर ने इनको घेर लिया और अन्त में वह मदीना छोड़ कर यात्रा के लिए मान गए। कुच्छ खैबर में और कुच्छ शाम में जा बसे।

बनीउल मुस्तलिक़ के साथ युद्ध–(शाबान ५ हिजरी, दिसम्बर ६२६ ई०)—शाबान ५ हिजरी में मुस्तलिक़ जाति के मदीने पर हमला करने की तय्यारी का पता लगने पर आप ने इन पर चढ़ाई की। ६०० बंदी हाथ आए। हारस की बेटी जबेरिया भी इनके साथ थी, वह मुसलमान होकर हज़ूर के माननीय महलों में प्रविष्ट (दाख़िल) हुई, और मुसलमानों ने सब बंदियों को छोड़ दिया।

अहज़ाब का युद्ध–(ज़ीक़ाद ५ हिजरी, फर्वरी ६२७ ई०)—उहुद की हार को धोने के लिए क़ुरैश ने एक और बड़ी तय्यारी की और अरब के सारे क़बीलों

को उभार कर दस हज़ार से चौबीस हज़ार तक फ़ौज के साथ ज़ीक़ाद सन् ५ हिजरी में मदीने को घेर लिया। हज़ूर ने रक्षा के लिए खाई खुदवाई। क़ाफ़िर जब हमला करते तो पीछे हट जाते। एक मास तक इसी प्रकार पड़े रहे। मुसलमानों और हज़ूर को इन दिनों बड़े-बड़े उपवास सहन करने पड़े, अन्त में एक रात घोर अन्धेरी के चलने से क़ाफ़िरों के होश उड़ गए और रात्री में ही भाग गए।

बनी क़रेज़ की कृतघ्नता और दण्ड—

(ज़ुलहज़ ५ हिजरी, मार्च ६२७ ई०)—एहजाब की लड़ाई के भयानक हल्ले में जब मुसलमान अत्यन्त चिन्ताजनक परिस्थिति में थे, बनी क़रेज़ ने—जो अब यहूदियों की एक ही जाति मदीने में रह गई थी,—कृतघ्नता की और यदि क़ाफ़िरों के दल का रत्ती भर भी हाथ ऊपर होता दिखाई देता तो वह लोग भीतर ही भीतर मुसलमानों के विरुद्ध उठने का और उन को मार देने का निश्चय कर चुके थे। इसलिए एहजाब के युद्ध के पीछे इनको घेर लिया गया। इनके साअ़द बिन मअ़ज़ को जो पहिले इनके हलीफ़ (साथी) थे, हाकम माना। साअ़द ने इस कृतघ्न जाति के लिए तौरेत का

दण्ड नियत किया कि वह आदमी जो गिनती में ३०० के लगभग थे, क़त्ल किए जांए, स्त्रियां और बच्चे बन्दी बनाए जाएं।

हदीबा का सन्धिपत्र–(ज़ीक़ाद ६ हिजरी, मार्च ६२८ ई०)—ज़ीक़ाद ६ हिजरी में हज़ूर १४०० सज्जनों सहित हज्ज के विचार से निकले। मक्के से एक पड़ाव के फासले पर हदीबा के स्थान पर क़ुरैश ने रोक दिया और युद्ध के लिए तय्यार हो गए। आप जी ने थोड़ी ही देर में–एक के बाद दूसरा–इस प्रकार दो पत्र-वाहक भेजे कि हम युद्ध के विचार से नहीं आए परन्तु इनको क़ैद कर लिया गया। दूसरे पत्र-वाहक हज़रत उसमान थे। अन्त में हज़ूर ने अपने साथियों से वचन लिया, जो "रज़वान की बैत" के नाम से प्रसिद्ध है, कि वह अपना जीवन बलिदान कर देंगे। तब क़ुरैश सन्धि के लिए तय्यार हो गए, परन्तु उस वर्ष हज्ज न करने दिया। अगले वर्ष हज्ज की आज्ञा दे दी और यह शर्त हुई कि यदि क़ुरैश में से कोई मुसलमान होकर मदीने आवे तो आप उसको वापिस कर दें और यदि कोई मुसलमान क़ुरैश के साथ जा मिले तो वह उसको वापिस नहीं करेंगे। लौटते हुए हज़रत जी पर क़ुरान शरीफ़ की सूरत फ़ातिहा उतरी और इसमें इस सन्धि का नाम फ़तिहा मुबीन (प्रत्यक्ष जीत)

रक्खा गया और बताया गया कि यह चढ़ती कलाओं (उन्नति) वाली सफलताओं के चिह्नों (निशानों) का प्रारम्भ है।

बादशाहों के नाम पत्र--(सन् ७ हिजरी ६२८ई०)—हदीबा से लौट कर आपने नीचे लिखे बादशाहों के नाम निमत्रन्ण-पत्र लिखे—कैसर रूम, कसरा, अजीज़ मिस्र, नजाशी, अरब के आस-पास के कई रईस। अज़ीज़ मिस्र के नाम का अस्ली खत (पत्र) मिल गया है। इसने उत्तर में सौगातें भेजीं। कैसर के नाम का पत्र हरकल के पास पहुँचा। उसने अबु सुफ़ीआन को, जो उस समय शाम में व्यापार के लिए गया हुआ था, बुला कर हज़ूर के हालात पूछे और अबु सफ़ीआन के उत्तर सुनकर यह तत्त्व निकाला कि हज़ूर सत्य पर हैं, परन्तु पादरियों ने विरोध किया। कसरा ने पत्र को फाड़ कर फेंक दिया और हज़ूर को पकड़ने के लिए सिपाही भेजने की आज्ञा दी। यह सिपाही मदीने पहुँचे तो आपने उनको पता दिया कि तुम्हारा बादशाह मारा गया है। इस खबर की पीछे पुष्टि हुई। नजाशी मुसलमान हो गया।

खैबरका युद्ध–(मुहर्रम ७ हिजरी, अगस्त ६२८ई०)–यहूदी जो अब लगभग सभी के सभी खैबर में बसते थे, जो मदीने से दो सौ मील के फ़ासले पर है,—क़ुरैश की हार

देख कर बहुत दुःखित थे। अन्त में क़बीला ग़तफ़ान के साथ गुप्त सलाह की कि मदीने पर हमला करें। हज़ूर ने इस खबर की पुष्टि की और ६०० साथियों के साथ मुहर्रम सन् ७ हिजरी में ख़ैबर पर हमला किया। यहूदियों के यहां बड़े पक्के क़िले थे; परन्तु इस्लामी वीरता के आगे सब गिर पड़े और अन्त में आधी पैदावार देने की शर्त पर दासता स्वीकार कर ली। फिर भी एक यहूदी स्त्री द्वारा आप को विष दिलवाया गया। युद्ध के कैदियों में हज़रत (श्रीमती) सफीआ भी थीं, उनको स्वतन्त्र करके हज़ूर ने उनके साथ विवाह कर लिया, ताकि इस जाति की शरारत रुक जावे। परन्तु भलाई का बदला बुराई के रंग में मिला। अन्त में हज़रत उमर के समय में सब यहूदियों को देश निकाला दे दिया गया।

मूता का युद्ध—(जमादी-उल-अव्वल, ८ हिजरी सितम्बर ६२९ ई०)—जो पत्र हज़ूर ने अरब के रईसों के नाम लिखे, उनमें से एक शरजील रईस बसरी के नाम था। उसने पत्र-वाहक को क़त्ल कर दिया। यह युद्ध का डंका था। आप ने तीन हज़ार सेना पर ज़ैद बिन हारस को नियुक्त करके जमादी-उल-अव्वल, सन् ८ हिजरी में शाम की सीमाओं की ओर भेजा, जहाँ एक लाख फौज मुक़ाबिले के लिए तय्यार थी। तीन सरदार—एक के पीछे

दूसरा–शहीद हुए, अन्त में खालद बड़ी चतुरता से सेना को निकाल लाए।

मक्के की जीत–(रमज़ान ८ हिजरी, जनवरी ६३० ई०)—हदीबिया की सन्धि की शर्तों को कुरैश ने तोड़ दिया अथवा मुसलमानों के हलीफ़ (साथी) खज़ाईया के विरुद्ध अपने हलीफ़ बनू बकर की सहायता की और हरम में खज़ाईयाको मार दिया। खज़ाईया ने हज़ूरके पास फ़रियाद की। आप ने कुरैश को कहलवा भेजा कि या तो खून का दण्ड भुगतो अथवा बनू बकर से अलग हो जाओ, नहीं तो हदीबिया की सन्धि टूटी समझी जावेगी। कुरैश ने कहा तीसरी बात स्वीकार है। अन्त में हज़ूर, १० हज़ार साथियों सहित १० रमज़ान सन् ८ हिजरी को चल पड़े। कुरैश ने अपने आप को युद्ध के योग्य न पाया। अबु सफ़ीआन क्षमा याचना के लिए उपस्थित हुआ। आपने ढिंडोरा पिटवा दिया कि जो आदमी काअ़बा में दाखिल हो जावे या अपना द्वार बन्द कर लेवे अथवा अबु सफ़ीआन के घर चला जाए, वह सुखी रहेगा। यह बड़ी भारी विजय बिना लहू की एक बूंद बहाए प्राप्त हुई। आपने मक्के वालों को इकट्ठा करके कह दिया कि आज मैं तुम्हें तुम्हारी अधिकताओं के लिए फटकारता नहीं, यह क्षमा उसी समय दी गई जब वह सारे कुफ़्र (मनमुखता) की

अवस्था में थे । हज़ूर के सदाचार और इस्लामी शिक्षा को देख कर पीछे वह मुसलमान होने लग पड़े । हां खाना-क़ाअ़बा मूर्तियों से साफ किया गया ।

हुनैनका युद्ध--(शवाल ८ हिजरी, फर्वरी ६३०ई०)—हुनैन मक्के के पास ही है । मक्के की विजय के साथ ही हवाज़न जाति वहां एकत्रित होनी आरम्भ हो गई । इसलिए हज़ूर १२००० सेना के साथ आगे बढ़े । मुसलमान सेना इनके तीरों के सामने ठहर न सकी । सेना में दो हज़ार मक्का वासी भी थे । पहिले वह भागे । फिर शेष सारी सेना भाग खड़ी हुई । आप अकेले ही अब्बास के साथ शत्रु की ओर बढ़ते चले जा रहे थे । आप के कारण सेना फिर एकत्रित हो गई और शत्रु को हार हुई । छः हज़ार बन्दी हाथ आए । पुनः सब के सब आपने बड़ी कृपा करते हुए छोड़ दिए । हुनैन की विजय के बाद शत्रु ताइफ में जा छिपा । आपने घेरा डाल लिया, परन्तु यह देख कर कि वह इस्लामी सेना को क्षति पहुँचाने में समर्थ नहीं है, घेरा उठा लिया ।

तबूकका युद्ध--(रजब ९हिजरी, सितम्बर ६३०ई०)—हज़ूर को पता लगा कि शाम देशमें ईसाई दलका संगठन हो रहा है, आप ने भी क़बीलों को मुक़ाबिले के लिए

बुलाया और तीस हज़ार सेनाके साथ रजब सन् ६ हिजरी में शाम की ओर चल पड़े, परन्तु शत्रु वहां न मिला, इसलिए आप ने शत्रु के देश पर आक्रमण न किया। सीमा पर कुच्छ ईसाई रईसों के साथ प्रतिज्ञाएँ हो गईं, जिन के कारण सीमा प्रदेश में शान्ति स्थापित हो गई।

मुसलमानों का हज्ज करना--(ज़ुलहज ६ हिजरी, मार्च ६३१ ई०)—सन् ६ हिजरी में मुसलमानों ने हज़रत अबु बकर के नेतृत्व में हज्ज किया। हज़रत अली को इसके पीछे यह कहने को भेजा कि आगे के लिए कोई द्वैत-वादी खाना काअ़बा का हज्ज नहीं करेगा। अगले वर्ष तक सारा अरब मुसलमान हो गया और कोई काफ़िर हज्ज करने वाला न रहा।

प्रतिनिधियों (Deputations) का आना—मक्का की विजय पर हुनैन के युद्ध के पीछे अरब के भीतर लड़ाईयाँ बन्द हो गईं और जब शान्ति स्थापित हो गई तो बहुत सी जातियों और क़बीलों के प्रतिनिधि (Deputations) आने लगे, ताकि इस्लाम की शिक्षा को देखें। कई इस्लाम को झटपट मान लेते थे और कई झगड़ा करने के पीछे, कई विरोध भी करते, परन्तु नौवें और दसवें साल हिजरी के भीतर लगभग सारे का सारा अरब मुसलमान हो गया।

अन्तिम हज्ज—(१ जुलहज़ १० हिजरी, मार्च ६३२ ई०)—दसवें वर्ष में अरब मुसलमान हो चुका था, हज़ूर भी हज्ज के लिए गए। एक लाख चौबीस हज़ार मनुष्य एकत्रित थे। सारा अरब देश अब न केवल आप का दास ही था, किन्तु सब लोग झूठे बिश्वासों और बुरे रस्म-रिवाज़ों को छोड़ कर एकता के प्रेमी बन गए थे। उरफ़ात के पर्वत पर आपने खुतबा पढ़ा (उपदेश किया)। वही (आकाश-बाणी) हुई कि अब धर्म पूरा हो गया और यह कि जब लोग जत्थों के जत्थे दीन इस्लाम में सम्मिलित हो गए, तब आप का कार्य भी समाप्त हो गया।

हज़ूर का वसाल (स्वर्गारोहण)--(रबी-उल-अव्वल ११ हिजरी, जून ६३२ ई०)—सन् ११ हिजरी, सफ़र मास के अंतिम दिनों में आप बीमार हुए। बीमारी की अवस्था में भी मस्जिद में आते रहे और निमाज़ पढ़ाते रहे। जब कमज़ोरी बढ़ गई तो हज़रत अबु बकर को इमाम बना दिया। सोमवार के दिन १ या २ रबी-उल-अव्वल को देह त्याग कर स्वर्ग सिधारे (जोति-जोत समाए)।

१—अरब, हजाज़, मक्का, काअबा

—:०-×-०:—

"पहिला स्थान जो भक्ति आदि के लिए नियत किया गया, वह सचमुच वही है जो मक्के में है। बरकत की बख्शश और सभी जातियों के लिए हिदायत।

(आल अमरान ६५)

अरब की चारों दिशाएँ—वह देश जहां संसार के अन्तिम पैग़म्बर और धार्मिक-नेता श्री जगत् गुरु मुहम्मद जी महाराज ने जन्म लिया, अरब या अरब के टापू के नाम से प्रसिद्ध है और भू-खण्ड के तीनों बड़े २ मण्डलों अर्थात् एशिया, यूरुप और अफरीका का यह एक प्रकार का केन्द्र है। इसकी तीन दिशाओं पर सागर है अर्थात् पूर्व की ओर फ़ारस की खाड़ी, दक्षिण में हिन्द महासागर और पश्चिम में अहमर सागर। लम्बाई लगभग १४०० मील और चौड़ाई भिन्न २ है। दक्षिण में अधिक और उत्तर में कम होती चली गई है। १२ लाख वर्ग मील में से

अढ़ाई लाख वर्ग मील दक्षिण की ओर केवल रेत ही रेत है। शेष भी अधिकतया रेतीली या शुष्क पहाड़ियां हैं। पश्चिम की ओर कुलज़म सागर के साथ मिली हुई पर्वतों की एक श्रेणी है जो पूर्व की ओर क्रमशः ऊँची होती चली गई है और छः साढ़े छः हज़ार फ़ुट की ऊँचाई पर पहुँच कर पूर्व की ओर एक मैदान टीलों की आकृति का चला गया है।

अरब के बड़े २ भाग—अरब देश का ईरानके देश के साथ मिलता हुआ भागजो अराक़अरब के नाम से प्रसिद्ध है और जि में बसरा और कूफ़ा के प्रसिद्ध इस्लामी नगर हैं—और शाम के साथ मिलता हुआ भाग जो अरब-शाम कहलाता है तथा हलब तक चला गया है. अब के देश-विभाजन में अरब से अलग दिखाई देते हैं। दूसरे बड़े २ भाग निम्नलिखित हैं :—

दक्षिण-पश्चिम के कोने में यमन जो पहाड़ी नालों के कारण प्रफुल्लित है। अहक़ाफ़ भी इसी का ही भाग है। यहां कभी आदि की बलवान जाति निवास करती थी; जिसके नष्ट होने की कथा क़ुरान शरीफ़ में आती है। नज्जद जो समुद्र की तह से तीन सहस्र फ़ुट ऊँचा हरा-भरा मैदान; अरब देश के मध्य में है; यमामा इसके दक्षिण

की ओर है पूर्व की ओर अमान जिसकी राजधानी मसकत है और इसके उत्तर में फारस की खाड़ी के साथ मिला हुआ बहरैन का देश है।

हजाज़—पश्चिम में अहमर सागर के साथ मिला हुआ चौकोन आकृति में हजाज़ का प्रसिद्ध पर्वतीय प्रदेश है, जिस में सत्कार योग्य मक्का और प्रकाशमान मदीना स्थित हैं और जो पूर्व की ओर पहाड़ की चोटियों तक पहुँच कर नज्जद के साथ मिल गया है, इसमें दो बड़ी बन्दरगाहें हैं अर्थात् जद्दा, जहां से लोग सत्कार-योग्य मक्के को जाते हैं और यबूह, जहां से प्रकाशमान मदीने को जाते हैं। तौरेत में इस देश को फारान के नाम से बताया गया है।

कुच्छ प्रसिद्ध स्थान—अन्य वर्णनीय स्थानों में से हजर का पर्वतीय प्रदेश है जहां किसी समय समूद जाति बसती थी। यह मदीने की उत्तर दिशा में है। तबूक के प्रसिद्ध युद्ध पर जाते हुए हज़ूर पुर-नूर का गुज़ार इस स्थान की ओर से हुआ था। अब तबूक और हजर दोनों हजाज़ रेल्वे के स्टेशन हैं। हज़र के पश्चिम की ओर मदीअन है जो हज़रत शऐब का स्थान है और जहां हजरत मूसा

१—अरब, हजाज़, मक्का, काअबा

——:०-×-०:——

"पहिला स्थान जो भक्ति आदि के लिए नियत किया गया, वह सचमुच वही है जो मक्के में है। बरकत की बखशश और सभी जातियों के लिए हिदायत।

(आल अमरान ६५)

अरब की चारों दिशाएँ—वह देश जहां संसार के अन्तिम पैग़म्बर और धार्मिक-नेता श्री जगत् गुरु मुहम्मद जी महाराज ने जन्म लिया, अरब या अरब के टापू के नाम से प्रसिद्ध है और भू-खण्ड के तीनों बड़े २ मण्डलों अर्थात् एशिया, यूरुप और अफरीका का यह एक प्रकार का केन्द्र है। इसकी तीन दिशाओं पर सागर है अर्थात् पूर्व की ओर फारस की खाड़ी, दक्षिण में हिन्द महासागर और पश्चिम में अहमर सागर। लम्बाई लगभग १४०० मील और चौड़ाई भिन्न २ है। दक्षिण में अधिक और उत्तर में कम होती चली गई है। १२ लाख वर्ग मील में से

अढ़ाई लाख वर्ग मील दक्षिण की ओर केवल रेत ही रेत है। शेष भी अधिकतया रेतीली या शुष्क पहाड़ियां हैं। पश्चिम की ओर कुलज़म सागर के साथ मिली हुई पर्वतों की एक श्रेणी है जो पूर्व की ओर क्रमशः ऊँची होती चली गई है और छः साढ़े छः हज़ार फ़ुट की ऊँचाई पर पहुँच कर पूर्व की ओर एक मैदान टीलों की आकृति का चला गया है।

अरब के बड़े २ भाग—अरब देश का ईरानके देश के साथ मिलता हुआ भागजो अराक़अरब के नाम से प्रसिद्ध है और जि मेंं बसरा और कूफ़ा के प्रसिद्ध इस्लामी नगर हैं—और शाम के साथ मिलता हुआ भाग जो अरब-शाम कहलाता है तथा हलब तक चला गया है. अब के देश-विभाजन में अरब से अलग दिखाई देते हैं। दूसरे बड़े २ भाग निम्नलिखित हैं :—

दक्षिण-पश्चिम के कोने में यमन जो पहाड़ी नालों के कारण प्रफुल्लित है। अहक़ाफ भी इसी का ही भाग है। यहां कभी आदि की बलवान जाति निवास करती थी; जिसके नष्ट होने की कथा क़ुरान शरीफ़ में आती है। नज्जद जो समुद्र की तह से तीन सहस्र फ़ुट ऊँचा हरा-भरा मैदान; अरब देश के मध्य में है; यमामा इसके दक्षिण

की ओर है पूर्व की ओर अमान जिसकी राजधानी मसकत है और इसके उत्तर में फारस की खाड़ी के साथ मिला हुआ बहरैन का देश है।

हजाज़—पश्चिम में अहमर सागर के साथ मिला हुआ चौकोन आकृति में हजाज़ का प्रसिद्ध पर्वतीय प्रदेश है, जिस में सत्कार योग्य मक्का और प्रकाशमान मदीना स्थित हैं और जो पूर्व की ओर पहाड़ की चोटियों तक पहुँच कर नज्जद के साथ मिल गया है, इसमें दो बड़ी बन्दरगाहें हैं अर्थात् जद्दा, जहां से लोग सत्कार-योग्य मक्के को जाते हैं और यबूह, जहां से प्रकाशमान मदीने को जाते हैं। तौरेत में इस देश को फारान के नाम से बताया गया है।

कुछ प्रसिद्ध स्थान—अन्य वर्णनीय स्थानों में से हजर का पर्वतीय प्रदेश है जहां किसी समय समूद जाति बसती थी। यह मदीने की उत्तर दिशा में है। तबूक के प्रसिद्ध युद्ध पर जाते हुए हज़ूर पुर-नूर का गुज़र इस स्थान की ओर से हुआ था। अब तबूक और हजर दोनों हजाज़ रेल्वे के स्टेशन हैं। हज़र के पश्चिम की ओर मदीअन है जो हज़रत शएब का स्थान है और जहां हज़रत मूसा

हिजरत करके चले गए थे। इसके उत्तर की थोड़ा पश्चिम में सीना पहाड़ है जहां हजरत मूसा पर आकाश वाणी उतरी। प्रकाशमान मदीने के उत्तर में, एक प्रसिद्ध स्थान खैबर है जो अरब के यहूद का केन्द्र था। नज़रान जहां का ईसाई प्रतिनिधि हज़ूर पुर-नूर की सेवा में उपस्थित हुआ, यमन का भाग है।

ताइफ़--हजाज़ के तीन बड़े नगर मक्का, मदीना और ताइफ़ हैं। ताइफ़ की प्रसिद्धी इसलिए है कि वहां पर्वत के पैरों में एक हरा-भरा और ठण्डा स्थान है जहां पानी के चश्में और फल बहुत हैं, यह पूज्य स्थान मक्के से पूर्व की ओर कुच्छ दक्षिण दिशा में स्थित है। हजाज़ के अमीर अधिकतया गर्मियां ताइफ़ में व्यतीत करते हैं। हज़ूर पुर-नूर भी हिजरत से पहिले प्रचार के लिए यहां गए थे।

मदीना--प्रकाशमान मदीने का पुराना नाम यसरब है। जब हज़ूर मक्के से हिजरत करके यहां पधारे तो इसका नाम मदीना-तुल-नबी या मदीना हो गया। कई ऐतिहासिक अनुसन्धानों (खोजों) द्वारा पता लगता है कि यह नगर मसीह से सोलह सौ वर्ष पूर्व से भी पहिले का

बसा हुआ है और पहिले इसमें अमालीक बसे। इनके पीछे औस और खज़रज जो एकही कहतानी क़बीले की दो शाखें थीं तथा यहूदी यहां बसे। हज़ूर गुरुत्व (गुरु होने) से तेरह वर्ष गुज़रने के पीछे मक्के से हिजरत करके यहां आ गए और आप के जीवन के अन्तिम दस वर्ष यहां ही व्यतीत हुए। यहां ही आपने शरीर त्याग किया और इसी स्थान पर आप का पवित्र रौज़ा (समाधि) है यहां ही इस्लाम की सबसे पहिली राजधानी बनी। मदीना, मक्के से दो सौ सत्तर मील उत्तर की ओर स्थित है और मक्के की भांति बिल्कुल खुश्क नहीं। यहां खेती-बाड़ी भी होती है और मेवे के वृक्ष भी बहुत हैं। शरद् ऋतु में मक्के शरीफ से सर्दी भी अधिक होती है।

मक्का--मक्का शरीफ़, हजाज़ की राजधानी है। यह एक उजाड़ बियाबान प्रदेश में स्थित है और इसके चारों ओर खुश्क पहाड़ियां हैं। यदि अरब देश अपने अन्दर विजेताओं के लिए कोई विशेष आकर्षण नहीं रखता, तो इस देश में शहर मक्का विशेषतया सभी बाहर के खिंचाव की सामग्रियों से रहित है। इसकी आधुनिक जन-संख्या लगभग पच्चास हज़ार है। इसके तीन नाम मक्का,

उम्मुलक़ुरा, और अलबलद, क़ुरान करीम में लिखे हैं। उम्मुलकुरा अर्थात् बस्तियों की माता, इसको इस वास्ते माता क़हा जाता था कि यह प्राचीन समय से सारे अ़रब देश का आत्मिक और धार्मिक केन्द्र चला आता है, जिसके कारण इसमें ख़ाना काअ़बा और अरज़ हरम (पवित्र-स्थान) स्थित हैं। इसकी आबादी का प्रारम्भ हजरत इस्माईल के समय से है; परन्तु इससे भी पहिले यह यमन और शाम के मध्य सें यात्रा करनेवाले क़ाफ़िलों के लिए ठहरने का स्थान था। इसी नगर में श्री जगत्-गुरु मुहम्मद जी महराज......ने जन्म लिया।

अरज़ हरम--मक्के की विशेष प्रसिद्धी और मान अरज़ हरम और काअ़बा के कारण है। अरज़ हरम वह पवित्र भूमि है जो मक्का और इसके आस-पास कई मीलों तक फैली हुई है। इसमें मना और उरफ़ात के प्रसिद्ध स्थान हैं। इस पवित्र भूमि के अन्दर युद्ध बन्द है। कितनी भी भयानक लड़ाई दो जातियों के मध्य हो रही हो इन पवित्र सीमाओं के अन्दर वह बन्द हो जाती थी और भयानक से भयानक शत्रु पर भी इस पवित्र भूमि पर तलवार नहीं उठाई ज़ाती थी। यह सारे अ़रब देश में ही नहीं, अपितु समस्त संसार में शान्ति का स्थान रहा है, जहां जातियां

और व्यक्ति विशेष अपने आप युद्ध से रुक जाते हों। किसी प्रतिज्ञापत्र द्वारा यह आशय सिद्ध नहीं हो सकता था क्योंकि युद्ध के आवेश में सब प्रतिज्ञापत्र धरे ही रह जाया करते हैं। यह ईश्वरीय-शक्ति का चमत्कार था कि अरब जैसे देश के भयानक योद्धा जातियों को इस पवित्र भूमि के सत्कार के लिए इस प्रकार रोके रक्खा था। यह एक चिह्न था कि इस पुनीत शान्तमयी भूमि से परमात्मा की एकता और इस के भक्तों के एकत्रित होने का वह सन्देश उच्च स्वर से सुनाया जाएगा; जो संसार में सच्ची शांति स्थापित करने का कारण बनेगा।

काअ़बा--इस भू-खण्ड का यह सत्कार खाना काअ़बा के कारण ही है जो संसार में एक परमेश्वरकी भक्तिका सब से प्रथम गृह है क़ुरान क़रीम ने इसको साफ शब्दों में "बैतुल अव्वल" माना है अथवा सबसे पहिला गृह जो लोगों की भक्ति के लिए नियत किया गया और इसका नाम 'बैतुल अतीक" भी रक्खा है अर्थात् पुराना और स्वतन्त्र गृह। "अलबैतुल मुहर्रम" भी इसका नाम है अर्थात् सत्कार योग्य गृह। इसका नाम बैतुअल्लाह या अलबैत भी है। यह ग़लत है कि इसको सबसे पहिले हज़रत इब्राहीम ने बनाया। अपितु जब हज़रत इब्राहीम ने हज़रत

इस्माईल को यहां छोड़ा तो उस समय भी यह गृह मौजूद था*। हां उस समय यह टूटा-फूटा था। हज़रत इब्राहीम और इस्माईल ने इसको पुनः बनाया और तीसरी बार हज़ूर के प्रकाश से कुच्छ पहिले क़ुरैश ने इस को नए सिरे से बनाया, जब हजरे असवद हज़ूर पुर-नूर के कर कमलों द्वारा गड़वाया गया। ख़ाना काअ़बा की क़दामत (प्राचीनता) न केवल कथाओं और क़ुरान क़रीम से ही सिद्ध होती है अपितु इतिहास भी इसी निर्णय पर पहुंचता है, यहां तक कि सर विलियम म्यूर ने अपनी पुस्तक "लाइफ़ आफ़ मुहम्मद" में इसका वर्णन नीचे लिखे शब्दों में किया है--

मक्के के धर्म के प्रसिद्ध सद्गुणों के आरम्भ के लिए एक अत्यन्त प्राचीन समय नियत करना पड़ता है डाईड वर्स सकोलस सन् ईस्वी से आधी शताब्दी पूर्व-लिखता हुआ-अरब का वर्णन करते हुए, जो अहमर सागर पर स्थित है, लिखता है कि इस देश में एक भक्ति-योग्य स्थान है जिसका मान सब अरब निवासी करते हैं।"

---

*हे परमेश्वर ! मैंने अपनी कुच्छ सन्तान को तेरे इस माननीय घर के पास बसाया है, जहां खेती नहीं। (इब्राहीम ३७)

इन शब्दों में सचमुच खाना काअ़बा का जो मक्के में है, वर्णन किया गया है क्योंकि और किसी भक्ति स्थान का अ़रब में नाम भी नहीं, जिसका मान अ़रब में सर्व साधारण में होता हो। दन्तकथाओं से भी सिद्ध होता है कि सबसे प्राचीन समय से खाना काअ़बा का हज्ज अ़रब की हर दिशा के लोग करते रहे हैं। यमन और हज़रमौत से, फ़ारस की खाड़ी के किनारे से, शाम के रेगस्तान से, हेरा तथा अ़राक़ अ़रब से लोग हर वर्ष मक्के में एकत्रित होते हुए मिलते थे। *इतने सत्कार का साधारणतया सारे देश में प्राप्त होना सचमुच एक ऐसे प्राचीन समय से होना चाहिए जिससे परे कोई अन्य प्राचीन समय नियत नहीं हो सकता।

---

* इससे साफ़ प्रकट होता है कि पुराने दिनों से अ़राक़ अ़रब और अ़रब शाम अ़रब देश के ही भाग रहे हैं।

२—रसालत का सूर्य्य उदय होने से पहिले का काल



जल स्थल में ऊधम मच गया

(अलरूम ४१)

एकता गुम हो चुकी थी—श्री जगत् गुरु मुहम्मद जी महाराज के प्रकट होने से पूर्व समस्त संसार में अज्ञान रूपी अन्धकार छाया हुआ था। न केवल संसार की विद्या तथा सदाचार सम्बन्धी उन्नति रुक चुकी थी, अपितु इन दोनों गुणों से सारा संसार खाली रहकर घोर नरक की दशा तक पहुंचा हुआ था। वह ज्ञान रूपी दीपक जो सर्व-शक्तिमान् प्रभु की ओर से आए महापुरुषों ने अपने २ समय में भिन्न २ देशों तथा जातियों के लिए जलाए थे, सभी के सभी बुझ चुके थे और किसी में भी वह प्रकाश शेष नहीं रहा था जो सृष्टि के लिए शिक्षा का कारण होता। सारी सृष्टि में कोई

देश या धर्म ऐसा नहीं था जिसमें केवल एकता का विश्वास बाकी रह गया हो। हिन्दु धर्म में तैंतीस करोड़ देवता बन चुके थे। बुद्ध-मत में ईश्वर की सत्ता से ही इन्कार था, ज़रतुश्त मत में दो ईश्वर राज्य करते थे, ईसाई धर्म ईश्वर की एकता के विश्वास को त्याग कर तसलीस (तीन) के पूरे अधिकार में आ चुका था। यहूदी मत जिसने अपनी सभी निर्बलताओं के होते हुए भी एकता के विश्वास को चिरकाल तक स्थापित रक्खा था, ईसाई मत के पीछे लग कर अब अज़ीज़ को अल्लाह के बेटे के स्थान तक पहुंचाने लग पड़ा। शेष संसार पर भी मूर्ति पूजा ही नहीं, अपितु जिस किसी को ईश्वर मानने का रिवाज चल पड़ा था। चाहे पत्थर हो या वृक्ष, अथवा पक्षी, पृथिवी का कोई मनुष्य हो या आकाश का कोई नक्षत्र, एकता को सृष्टि समूल ही गंवा बैठी थी और यदि श्री जगत् गुरु मुहम्मद जी महाराज संसार में पुनः एकता की ज्योति न लाते तो संसार सदा सर्वदा के लिए इस सिद्धान्त से, जो सब शुभ गुणों का मूल है, खाली रह जाता। इसी प्रकार जातीय-एकता का नियम भी संसार भुला चुका था और सारे देशों में आपस के फ़साद तथा लड़ाई-झगड़े के साथ जातियां अपने-आप को निर्बल कर

रही थीं और इस से बड़ा नियम अर्थात मनुष्य-जाति की एकता की ओर तो अभी संसार ने पैर भी नहीं बढ़ाया था।

भारत वर्ष की दशा—विद्या तथा सदाचार सम्बन्धी रंग में यदि संसार के अलग अलग देशों की अवस्था देखी जावे तो चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार दिखाई देता था। भारत-वर्ष—जो प्राचीन सभ्यता का केन्द्र था,—की दशा इतनी गिर चुकी थी, कि हर प्रकार की विद्या का लोप हो चुका था। विचार की स्वतन्त्रता का तो समूलोन्मूलन हो चुका था, मनुष्यों के साथ पशुओं से भी अधिक बुरा बर्ताव होता था। जाति-पांति के भेद-भाव ने मनुष्य के स्थान को, सीमा से भी नीचे गिरा दिया था। इसका शेष आजकल अछूतों के रूप में प्रकट होता है। सदाचार की अवस्था यहां तक गिर चुकी थी कि हर प्रकार के निकृष्ट कर्म, मिथ्या-भाषण, व्यभिचार आदि ऋषियों, महापुरुषों और देवताओं के सिर मढ़े जाने लगे और पवित्र पुस्तकों में ऐसी गन्दी कथाएँ उल्ट-पुल्ट करके लिखी गईं। ऐसी हीनावस्था में सत्य के लिए कोई आकर्षण बाकी न रहा। शाक्त-मत जैसे मत उत्पन्न हो गए, जिन में माता और

बहिन तक का सतीत्व बाकी न रह सका। यहां तक कि व्यभिचार को कोई पाप ही नहीं समझा गया। अपितु नियोग के रंग में इसको धार्मिक-नियमों में प्रविष्ट किया गया। स्त्रियों तथा पुरुषों के वह अङ्ग जो नीच से भी नीच जातियां परदे में रखती हैं, उनके नग्न-चित्र मन्दिर में रक्खे जाते, जहां पुरुष तथा स्त्रियां इनको देखते और साथ ही साथ इनकी पूजा भी करते। विश्वासानुसार यह दशा थी कि पृथिवी की बुरी से बुरी वस्तु मनुष्य के लिए पूज्य समझी जाती थी, जिसकेसमक्ष वह झुकता और उसके पास विनती करता और उनको अपने से अधिक शक्तिवान् समझता। भला ऐसी अवस्था में विद्या-सम्बन्धी खोज तथा उन्नति का अस्तित्व कैसे शेष रह सकता था। विद्या की उन्नति केवल उसी अवस्था में हो सकती है जब पुरुष को अपने ऊपर पूर्ण विश्वास हो और वह अपने अन्तर्गत यह शक्ति समझे कि वह सब सृष्टि की शक्तियों पर प्रबल है और इनको अपने काम में ला सकता है*।

*यही कारण है कि क़ुरान करीम ने न केवल मनुष्य को देवताओं का पूजनीय बना कर ईश्वरीय-सृष्टि में इसको सबसे ऊंचा स्थान दिया अपितु खुले शब्दों में यह भी बता दिया कि जो कुछ तुझे पृथिवी मे

ईरान की दशा—चीन और ईरान की दशा इससे बढ़ कर नहीं थी। वहां भी कभी परमात्मा का नूर चमका था, और मनुष्य-जाति को अपने ईश्वर के साथ मिलने और नेकी तथा सदाचार की शिक्षा दी गई थी। परन्तु समय व्यतीत होने पर अवस्था बदल चुकी थी। ईरान में व्यभिचार का प्रचार बहुत अधिक था, जिसने स्त्रियों को सांझी-जायदाद मानकर व्यभिचार का द्वार चौपट खोल दिया था। फिर जहां पाप का परमात्मा अलग माना जाता हो, वहां पाप उन्नति क्यों न करे ?

यूरुप तथा ईसाई मत की दशा—यूरुप की इस समय की अवस्था के सम्बन्ध में चुप ही भली है। इसका बहुत सा भाग पशुओं की दशा को पहुंचा हुआ था और ईसाई मत को मानने वाली इन जातियों ने शताब्दियों तक किसी प्रकार की सदाचार अथवा विद्या सम्बन्धी उन्नति की ओर पग भी नहीं बढ़ाया था। हां एक रोमन एम्पायर (राज्य) में कुच्छ सभ्यता का प्रकाश था। पर वह भी धीरे २ घटता चला गया। तीन सौ वर्ष से यह

आकाश पर्य्यन्त दिखाई देता है यह सब तेरी सेवा के लिए ही उत्पन्न किया गया है। संसार की कोई शक्ति तेरे पर राज्य नहीं करेगी अपितु सभी शक्तियों को आप अपना दास बना सकते हो।

(अलजासीआ १३)

राज्य पूर्ण रूपेण ईसाई मत के प्रभाव के अन्तर्गत आ चुका था, परन्तु सदाचार तथा विद्या की ओर से अपने प्रथम स्थान से गिरता चला गया। स्वतन्त्र विचार का अधिकार दिन प्रति दिन कम होता चला गया और विद्या केवल हज़रत ईसा के परमात्मा अथवा मनुष्य होने के झगड़ों के घेरे में ही आ गई। कहलवाती तो वह पुस्तकें थीं, परन्तु उनका न होना, होने से अच्छा होता। इन झगड़ों ने न केवल प्राणीमात्र के प्रेम का सत्यानाश किया अपितु मनुष्य की शक्तियों को ऐसी अधोगति को पहुंचा दिया कि इनकी बढ़ने-फूलने की शक्ति बिल्कुल ही दब गई। रहबानीयत (गृहस्थ त्याग) ने धार्मिक नेताओं में ऐसी बुराईयां पैदा कर दीं कि साधारण जनता को बुराई से बचाने के स्थान पर वह उन्हें उस में धकेलने वाले बन गए। ऊपर से तो वह यति दृष्टिगोचर होते थे परन्तु भीतर से घोर पापी थे। एक ईसाई ने इस दशा का चित्र इन शब्दों में खैंचा है कि कंवारी लड़कियां पादरियों से अपने पापों के प्रतिशोध के लिए जातीं, परन्तु अपना कुमारपन गंवाए बगैर वापिस नहीं आ सकती थीं। मनुष्यता असीम अधोगति को प्राप्त हो चुकी थी। एक पादरी उस समय के ईसाई मत के सम्बन्ध में लिखता है कि घरेलू लड़ाईयों के

कारण आसमानी राज्य (ईसाई मत) पूर्णकष्ट अपितु ठीक नरक का नमूना बन रहा था। सर विलियम म्यूर लिखते हैं, 'सातवीं शताब्दी का ईसाई मत स्वयं गिरा हुआ और बिगड़ा हुआ था। इसको आपस में लड़ने-भिड़ने वाले समूहों ने बिल्कुल थोथा कर छोड़ा था और आरम्भिक समय के पवित्र और उच्च धर्म का स्थान अनाधिकारी वस्तुओं की पूजा ने ले लिया था।"

अरब और मूर्खता का काल—अरब की इस दशा का नाम जो श्री जगद्गुरु मुहम्मद जी महराज जी के प्रकट होने से पूर्व थी क़ुरान करीम ने "जमानाए जाहिलियत" (मूर्खता का काल) रक्खा है। और वास्तव में जब उन देशों में भी जो इससे पहिले सभ्यता तथा विद्या के केन्द्र रह चुके थे, अज्ञानता का अन्धकार छा गया था तो अरब जो सारे संसार से अलग का अलग पड़ा था और जहां पर यदि कोई नबी आवे भी तो भी किनारों पर ही आवे, इसकी अवस्था का अनुमान करना कठिन नहीं है। सही उसूल (सत्य नियम) विद्या और सदाचार सब नष्ट हो चुके थे। बुराइयों पर मान किया जाता था और ढोल-ढमक्के के साथ उत्सवों में उस का वर्णन किया जाता था। एक ईसाई, मुसलमानों को

इस समय का नाम "मूर्खता का समय" रखने पर झूठ बोलने का लांछन लगाता है और कहता है कि अरबों को लिखने की विद्या आती थी और उनके कविता के ढङ्ग ऊँची चोटी पर पहुंचे हुए थे। इस्लामसे पूर्वकी कविता उच्च कोटि की विद्वत्ता और अत्युत्तम कवित्व शक्ति प्रकट करती है। परन्तु यह बात स्मरण रखनी चाहिए कि चाहे लिखने की कला से अरब अनजान नहीं थे फिर भी लिखने का रिवाज इनमें कहीं २ पर ही था। यहां तक कि इनकी कविता तक भी लिखने से रह जाती थी। और मूर्खता के समय की समस्त कविता सिवाए "मुअलकात" अर्थात् जिसको लिख कर खाना काअबा पर लटकाया गया था, कण्ठस्थ कथाओं में ही चली आती थी। अब रही कवित्व-शक्ति सो इसको कभी किसी ने, सभ्यता की कसौटी माना ही नहीं, अपितु प्रत्येक सभा की प्रारम्भिक अवस्था में कविता के साथ लोगों को विशेष स्नेह होता है और इसका कारण प्रकट है कि इस समय मन को आकर्षित करने के अन्य साधन मौजूद नहीं होते जो सामाजिक जीवन और सभ्यता से उत्पन्न होते हैं। कविता में भाषा का रस हर समय मिल सकता है; परन्तु विचार की उड़ान सभ्यता से उत्पन्न

होती है और अरब की कविता विचार की उड़ान रूपी पत्तों से रहित है।

अरब के गुण—इसमें भी सन्देह नहीं कि अरबों में कतिपय श्रेष्ठ गुण भी थे। अतिथि-सेवा, स्वतन्त्रता का प्रेम, साहस, पुरुषत्त्व, जातीय-भक्ति, दान देना आदि कई गुणों में वह उस काल में अपने समान कोई नहीं रखते थे। परन्तु कुच्छ ऐसे गुणों का किसी जाति में मिलना जब कि इसके समत्त मूर्खता और पशुपन की अवस्था शिखर पर पहुंची हुई हो, सभ्यता नहीं कहलाती। यदि किसी दरिद्र पथिक के साथ उच्च कोटि की अतिथि-सेवा का वर्ताव होता था तो दूसरी ओर रास्ता चलते लोगों को लूट लेना भी इनकी एक प्रसिद्ध रीति थी। जातीय-भक्ति चाहे इन में एक बड़ा भारी गुण था परन्तु इसी का यह परिणाम था कि छोटी-छोटी बातों पर जहां किसी जाति के एक व्यक्ति से अन्य जाति के किसी मनुष्य को कुच्छ थोड़ा सा नुकसान पहुंच जाता था, वह किसी बात को अपनी मान-हानि समझ लेता तो ऐसे भयङ्कर युद्ध छिड़ जाते जो जातियों की जातियों का अस्तित्व मिटा देते और जातीय वैमनस्य बीस २ और पचास २ वर्ष तक न जाता।

अच्छे गुण, इस भयानक अन्धकारमयी रात्रि में जो इस्लाम से पहिले उस देश पर छाई हुई थी, किसी उस धुंदले नक्षत्र के प्रकाश के समान थे जो बादल फाड़ कर कहीं से दिखाई दे देता और पुनः झटपट छिप जाता।

अरब की धार्मिक अवस्था—अरब की वास्तविक अवस्था क्या थी? प्रथमतः धर्म को लें। वह एक परमात्मा को अवश्य मानते थे परन्तु क्रियात्मिक रूप में नहीं। परमात्मा की पूजा के स्थान पर वे मूर्ति पूजा करते थे। उनका विचार था कि ईश्वर ने भिन्न भिन्न कार्य्यों में सफलता प्रदान करने के लिए भिन्न २ मूर्तियां और देवी देवता बना रखे हैं। अतः वह प्रत्येक बात में इन देवी देवताओं की ओर झुकते थे। बस इनका एक परमात्मा के होने का विश्वास साधारणतः बिल्कुल व्यर्थ और मुर्दा विश्वास था। फिर वह न केवल मूर्ति पूजा करते थे, अपितु वायु, रवि, शशि और नक्षत्र आदि की पूजा भी इनमें प्रचलित थी। इससे बढ़ कर यह कि पत्थरों, वृक्षों और ढेरों की पूजा भी की जाती थी। जहां कहीं इनको बढ़िया और उत्तम पत्थर दिखाई दे देता उसको नमस्कार करते और यदि पत्थर न मिलता

तो रेत के एक ढेर पर ऊंटनी का दूध चोकर ही पूज लेते। फ़रिश्तों को वह देवियां समझ कर उनको ईश्वर की पुत्रियां कहते। बड़े २ प्रसिद्ध पुरुषाओं के नाम पर मूर्तियां घड़ कर उनकी पूजा करते थे। केवल घड़े हुए पत्थरों की ही नहीं अपितु अनघड़े पत्थरों की पूजा भी करते थे। जब यात्रा पर जाते तो चार पत्थर साथ ले जाते, क्योंकि रेतीले प्रदेश में सैकड़ों मीलों तक पत्थर मिल नहीं सकता था। इन चार पत्थरों में से तीन चूल्हे का काम देते और चौथा पूजा-पाठ के काम आता। कई बार तीन पत्थर ही साथ रख लेते और रोटी पका कर जब चूल्हा खाली हो जाता तो इसके पत्थरों में से एक को उठा कर उसी की पूजा कर लेते। खाना काअ़बा की ३६० मूर्तियों के अतिरिक्त कबीले अपनी अलग मूर्तियां भी रखते थे, अपितु प्रत्येक घर में अलग २ मूर्ति रहती थी। जहां दूध आदि वस्तुएँ के चढ़ावे चढ़ते थे, वहां कोई पुरोहित न होने के कारण इन वस्तुओं को कुत्ते खा जाते थे। संक्षेप तो यह है कि मूर्ति पूजा इन लोगों के लहू में ऐसी रची हुई थी कि इनके प्रतिदिन के जीवन के सब कार्य्यों और व्यवहारों पर इसका प्रभाव था। इनका यह विश्वास था कि परमात्मा ने

संसार के सब कार्य, व्यवहार और अपनी सब महिमाओं को—यथा रोगी को स्वस्थ करना, सन्तान प्रदान करना, अकाल तथा रोग आदि का दूर करना—दूसरों के ज़िम्मे लगाया हुआ है तथा यह भी कि मूर्ति पूजा करने से मनुष्य परमात्मा के निकटवर्ति हो जाते हैं। वह मूर्तियोंको नमस्कार भी करते थे और इनके इर्द-गिर्द परिक्रमा भी करते थे, इन पर भेंट चढ़ाते थे, खेतों की पैदावार और पशुओंकी नसल में से इन के लिए मन्नतें मानते थे और चढ़ावे-चढ़ाते थे। इस प्रतिष्ठा भंग करनेवाली मूर्तिपूजा से श्री जगत् गुरु मुहम्मद जी महाराज ने बीस वर्ष के थोड़े से काल में सारे अरब देश को स्वतन्त्र कर दिया और न केवल सदा के लिए मूर्ति-पूजा अरब देश से चली गई, अपितु एकता की एक ऐसी अग्नि इनके हृदयों में भड़का दी कि वह चारों ओर संसार में फैल गई और परमात्मा के नाम को हर ओर मान मिला। मूर्ति-पूजक, मूर्ति-तोड़ बन गए। बारह लाख वर्गमीलों में से ऐसी गहरी और पुरानी मूर्ति-पूजा को बीस वर्ष के थोड़े से समय में ऐसा निकालना कि फिर इसका नाम तक वहां न आवे, मनुष्य की शक्ति में नहीं था।

चाहे मूर्ति-पूजा इनका सर्व साधारण व्यवहार

था, परन्तु इन में से कई लोग नक्षत्रों की पूजा भी करते थे। और इसी कारण अरब में यह भी सर्व साधारण का विश्वास हो गया था कि नक्षत्रों के चक्र का प्रभाव मनुष्यों की प्रारब्ध पर पड़ता है। वर्षा होना आदि सब बातें, जो मनुष्य की बुराई-भलाई के साथ सम्बन्ध रखती हैं, का कारण नक्षत्र ही समझते थे। इनमें अधार्म्मिक और नास्तिक लोग भी थे। जहां एक ओर अधम मूर्ति-पूजा ने साधारणतया लोगों को अपना दास बना रक्खा था, वहां दूसरी ओर कुच्छ लोग परमात्मा का अस्तित्व, आत्मा का अमर होना और बदले के दण्ड से भी इन्कार करते थे और धर्म्म की कुच्छ भी सत्ता नहीं समझते थे, अपितु मूर्ति-पूजा करने वाले कई बार मूर्तियों के साथ ठट्ठा-मखौल कर लेते थे। यहां तक कि प्रसिद्ध कवि इमरलकैस की कथा लिखी है कि जब उसका पिता मारा गया तो उसने अरबों की प्रथानुसार मूर्ति के आगे जाकर फ़ाल निकाली कि वह अपने पिता के खून का बदला ले या न ले? फ़ाल निकालने की यह विधि था कि जब कभी कोई बड़ा काम करना होता था तो तीन तीर लिए जाते थे, जिनमें से एक पर 'ला' लिखा होता था अर्थात्

नहीं, दूसरे पर 'नाअ्म' अर्थात् हां, और तीसरा खाली होता था। यदि 'ला' वाला तीर निकलता तो वह काम नहीं किया जाता था, 'नाअ्म' वाला निकलता तो कर लिया जाता और यदि खाली निकलता तो फिर फ़ाल निकाली जाती। जब इमरलकैस ने फ़ाल निकाली तो तीनों बार 'ला' वाला तीर निकला तो उस ने खीझकर तीर को फैंक दिया और मूर्ति को सम्बोधन करके कहा कि 'कमबख्त ! यदि तेरा पिता मारा जाता तो फिर तू बदला लेने के लिए 'ला' की आज्ञा न देता।' एक बार यमन के एक बादशाह ने ईसाई पादरियों के विश्वास 'कफ़ाराए मसीह' को हँसी में उड़ा कर लज्जित किया। कुछ पादरी महोदय बादशाह के दर्बार में कफ़ारा के सिद्धान्त का वर्णन कर रहे थे अर्थात् यह कि किस प्रकार मसीह, जो परमात्मा और परमात्मा का पुत्र था, सूली की निकृष्ट मृत्यु स्वीकार करके मनुष्यों के पापों को ले गया। इतने में वज़ीर ने धीरे से बादशाह के कान में कोई बात कही जिसको सुन कर बादशाह के मुख पर बहुत शोक और उदासीनता छा गई। पादरियों ने हैरान होकर पूछा कि आप ने कौन सा कष्टप्रद समाचार सुना है

कि इतने उदासी के चिह्न आप के मुख पर प्रकट हो गए ? तो बादशाह ने धैर्य से उत्तर दिया कि मुझे अभी ही समाचार मिला है कि 'मेकाईल' फ़रिश्ता मर गया। तब पादरी लोग अपनी चतुराई का उदाहरण देने के लिए झट बोले कि यह समाचार तो महाराज मानने योग्य नहीं। आप इस पर शोक न करें क्योंकि फ़रिश्ते मनुष्यों की भांति नहीं मरते। बादशाह ने झट उत्तर दिया कि आप तो अभी ही मुझ को कह रहे थे कि खुदा मर गया। यदि फ़रिश्ता नहीं मर सकता तो ख़ुदा किस प्रकार मर सकता है ? पादरी महोदयों का ज्ञान और युक्तियाँ समाप्त हो गयीं और लज्जित होकर चुप हो रहे।

अरब और नागरिकता—यदि धर्म्म में अरबों की यह दशा थी और अत्यन्त बुरी मूर्ति-पूजा ने उनको मनुष्यत्व की पदवी से गिरा रक्खा था तो बाक़ी बातों में भी इनकी अवस्था पशुपन की अवस्था से ऊँची नहीं थी। सभ्यता का सबसे बढ़ कर प्रभाव सामाजिक जीवन पर होता है, परन्तु यदि विचार किया जावे तो वह लोग सामाजिक-जीवन के प्रारम्भिक नियमों से भी अनभिज्ञ थे और सामाजिक जीवन, इनमें उत्पन्न भी

ऐसे हो सकता था, जहां रात दिन एक दूसरे के साथ युद्ध छिड़ा ही रहता था और एक मिनट के लिये भी यह तसल्ली नहीं थी कि अमुक जाति से अमुक समय युद्ध न छिड़ जायगा। पहिले तो अरब के निवासी बहुत से बद्दवी थे, जो खानाबदोशों (अस्थिर-गृही) की अवस्था में रहते थे। जहां पशुओं के लिए हरियाली और चारा देखा, वहां ही ऊँट के चमड़े का तम्बू लगा लिया और कुच्छ दिन काट लिए; वहां चारा समाप्त हुआ और दूसरी जगह जा डेरा लगाया। बहुत कम लोग ग्रामों के रूप में और उनसे भी कम नगरों में बसते थे। ऐसे स्थानों में सामाजिक जीवन कैसे उत्पन्न होता? फिर यह नुक़स था कि उनमें सङ्गठन का नाम तक नहीं था। सारे देश में एक छत्र राज्य तो एक ओर रहा, प्रान्तों में भी जो राज्य थे वहां भी न्याय का कोई प्रबन्ध न था। अपना अधिकार दूसरों से प्राप्त करने के लिए केवल इनका बाहुबल ही काम आता था। प्रत्येक जाति या क़बीले का भिन्न नेता था, जो इनको किसी दूसरी जाति या क़बीले से अधिकार प्राप्त कराने के लिए युद्ध के लिए ले जाता। जाति में मनुष्य और देश में जातियां साधारणतया किसी क़ानून के जुए के नीचे

अपनी गर्दन को नहीं समझती थीं। एक कट्टर ईसाई हज़ूर पुर-नूर के जीवन के समाचारों को लिखता हुआ साफ़ शब्दों में इस बात को मानता है—

"सबसे प्रथम विशेषता जो हमारी वृत्ति को खींचती है, वह अरबों का बहुत से जत्थों में बँटे हुए होना है जो एक ही भाषा के बोलने वाले और अपने रहन-सहन आदि में लगभग एक हैं, परन्तु प्रत्येक अपने स्थान पर स्वतन्त्र है। कभी अपनी अवस्था पर संतोष नहीं करते और बहुधा एक दूसरे के साथ लड़ाई में लगे रहते हैं। अपितु जहां सम्बन्ध आदि के कारण या किसी लाभ की सम्भावना से एक जाति का दूसरी जाति से मेल-जोल भी पैदा हुआ है, वहां भी छोटी-छोटी बातों पर मेल-जोल तोड़ने और युद्ध करने के लिए हर समय तत्पर रहते हैं। यही अवस्था इस्लाम के समय तक चली आई है कि कभी यदि किन्हीं दो जातियों में मिलाप हुआ भी है तो थोड़े दिनों में ही वह भयानक युद्ध में फँस गए हैं और सारे प्रयत्न, जो इस्लाम से पूर्व इनको एकत्र करने के लिये किए गए, व्यर्थ और निष्फल सिद्ध हुए।"

क़ुरान शरीफ़ ने इन शब्दों में कैसा चित्र इस सर्व-

नाश का खींचा है जिस में अरब देश पड़ा था ......
....."आप अग्नि के गढ़े के किनारे पर यहां तक थे कि मानों भस्म ही होने वाले थे।" युद्ध छिड़ पड़ता तो पच्चास २ वर्ष तक चला जाता और एक सन्तति नष्ट हो जाती तो दूसरी नसल बदले का जोश अपने खून में लिए उठती और एक ठट्ठे-मखौल का वचन अथवा घोड़-दौड़ में थोड़ी सी शरारत सहस्रों मनुष्यों की मृत्यु का कारण बन जाती और फिर इन युद्धों में जो पूर्णतया वश में हो जाते या पकड़े जाते, वह विजयी जाति के दास-दासियां बन जाते। फिर इस मनुष्य के उपकार को देखो जिसने शताब्दि के पांचवें भाग में पूर्व से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण तक सब जातियों को एक ऐसी एकता की लड़ी में पिरो दिया जिसकी उपमा अरब के आपस में लड़ाई-झगड़ों की भांति नहीं मिलती। इस एकता का उदाहरण भी नहीं मिलता।

अरब का रहन-सहन और स्त्री जाति से व्यवहार—सामाजिक जीवन से उतर कर रहने-सहने के ढंग, जाति की सभ्यता या मूर्खता का निर्णय करते हैं। सो इस दृष्टिकोण से अरब का जीवन इसी मूर्खता के शीर्षक के नीचे आता है जिसके नीचे वह अपने

धर्म और सामाजिक जीवन के अनुसार है। अरब देश में स्त्रियों की अवस्था यहां तक बुरी थी कि सिवाए इस के कि कामचेष्टा के लिए कोई अपनी प्रियतमा की स्तुति में कविता लिखता, व्यवहार में इनके साथ पशुओं का सा वर्ताव होता था। एक स्त्री के एक से अधिक पति होने का रिवाज, जो अति नीच जातियों में मिलता है, इनमें प्रचलित था। एक पुरुष जितनी स्त्रियों से चाहे विवाह कर सकता था और इससे भिन्न, जैसा कि यूरोप में रिवाज है अपने लिए दासी भी रख सकता था। व्यभिचार यूरुप के बहुत से नगरों की भांति पेशे के तौर पर इनमें जारी था और दासियों से अथवा अन्य जातियों की पकड़ी हुई स्त्रियों से जहां अन्य नीच काम लेते थे, वहां उनसे व्यभिचार करवा कर इस पाप कर्म्म की कमाई को अपनी उचित आय समझते थे। नियोग की रस्म जो भारत-वर्ष में मिलती है और जिस पर इस विद्या और प्रकाश के काल में आर्य्य समाज के प्रवर्त्तक स्वामी दयानन्द जी ने अधिक बल दिया है, वह भी इनमें प्रचलित थी। और इसके लिए वह शब्द 'इसतबजाह' वर्ता करते थे, जिसके अर्थ में कोष वाले लिखते हैं कि स्त्री केवल सन्तान की इच्छा से अपने पति से भिन्न

दूसरे पुरुष के साथ भोग कर ले। इसके साथ यह भी लिखा है कि स्वयं पुरुष अपनी स्त्री या दासीको कह देता था ....'अमुक को बुला भेजो और उससे सन्तान प्राप्त करने के लिए, उसके साथ भोग विलास करो।'

स्त्री केवल एक सम्पत्ति के समान समझी जाती थी और न केवल इसका अपने स्वर्गवासी पति या संबंधियों की संपत्ति में से कोई भाग न समझा जाता था, अपितु वह स्वयं पिछली सम्पत्ति का एक भाग बन कर अधिकार में चली जाती, और उत्तराधिकारी चाहता तो स्वयं उसके साथ विवाह कर लेता, यदि चाहता तो किसी अन्य के साथ करा देता, यहां तक कि पिता की स्त्रियों को पुत्र उक्त सम्पत्ति का भाग समझ कर उनके साथ विवाह कर लेते और उनको ननु-नच करने का कोई अधिकार नहीं था। तलाक देने की प्रथा भी बड़ी अन्यायपूर्ण थी। एक पुरुष यदि चाहता तो सहस्र बार भी अपनी स्त्री को तलाक देकर पुनः इद्दत (नियत समय) के भीतर ही उसके साथ मिलाप कर लेता। कई बार यूंही सौगन्ध खा लेता कि मैं इसके समीप नहीं जाऊँगा। और वह स्त्री न तलाक देने वाले की आज्ञा में होती और न निकाह ही कर सकती। कई बार

स्त्री को माता कह दिया जाता और इस प्रकार उसको बीच में ही लटकने की अवस्था में छोड़ दिया जाता। इस प्रकार के सारे तरीक़े वर्तने से स्त्री एक ऐसी दुःखित अवस्था में हो जाती, जिसमें से निकलने के लिए उसके पास कोई साधन न होता। इसका कारण यह था कि वह इस बात को अपनी ग़ैरत के विरुद्ध समझते थे कि उनकी स्त्री तलाक़ लेकर दूसरे पति के पास जावे। इस बात के होते हुए भी पुरुष और स्त्री के सम्बन्ध में निकृष्ट अवस्था की गन्दगी थी। प्रेम, प्यार और अनुचित सम्बन्ध की अत्यन्त गन्दी कथाएँ खुली कविता में बड़ी शान से वर्णन की जाती थीं। बड़ी २ प्रसिद्ध कविताएँ (स्तुति की) जो अपने रस के कारण अपूर्व समझी जाती हैं, इनमें ऐसे गन्दे और नग्न शब्दों में इन सम्बन्धों का वर्णन है कि जिसे जिह्वा और कान सहन नहीं कर सकते। फिर उच्च घराने की स्त्रियों के साथ 'तशबीब' करना अर्थात् उनको सम्बोधन करके प्रेमपूर्ण कविता में उनका वर्णन करने का इनमें खुला रिवाज था। इन सब से बढ़ कर पशुपन की अत्यन्त हीनावस्था, कन्या को जीतेजी दबा देने की प्रथा थी। पांच छः वर्ष की कन्याओं को पिता जंगल की

अरब में मद्य-प्रयोग—यदि अरब वालों की साधारणतया अवस्था को देखा जावे तो वही मूर्खता का चित्र दृष्टिगोचर होता है। जूए बाज़ी इनके लिये उसी तरह प्रतिष्ठाकी बात थी, जिस प्रकार सभ्यता निपुण यूरुप इस पर गर्व करता है। जो जूआ न खेले उसको कंजूस समझते थे। शराब पीने का रिवाज इतना प्रसिद्ध और खुला था कि कोई घर इससे ख़ाली नहीं था और दिन में कई २ बार मद्य-सेवन किया जाता था। प्रत्येक गृह में शराब के मटके रहते थे। यहां तक लिखा है कि जब क़ुरान शरीफ़ में निषेध की आज्ञा उतरी तो मदीने की गलियों में शराब इस प्रकार बहती थी जिस प्रकार वर्षा का जल। यहां भी वही शक्ति काम करती दिखाई देती है जो मनुष्य की विचार-शक्ति से परे है, कि किस प्रकार शताब्दियों के मद्य-सेवी पलमात्र में इसे छोड बैठे। यहां तक कि शराब के पुराने बर्तनों तक भी घर में न रहे।

भ्रम-पूजा—पशुपन की पराकाष्टा के कारण अरब निवासी भांति २ के भ्रमों में फँसे पड़े थे। वे देवताओं तथा भूत-प्रेतों को मानते थे। निर्जन स्थानों में जिन्नों और भूतों की मूर्तियां इन्हें दिखाई देती थीं।

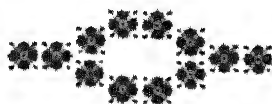
ओर ले जाता और एक गढ़े के किनारे पर—जो इसी मतलब के लिए पहिले ही खोदा हुआ होता था—खड़ी करके उसे धक्का देकर उसमें फेंक देता और रोती-पीटती अपनी जिगर की बोटी के ऊपर मिट्टी डाल कर उस पाषाण हृदय का परिचय देता, जिसके सामने पत्थर भी लज्जित हों। जब हमारे नबी करीम जी·········के सामने एक ऐसी कथा का वर्णन एक साथी ने किया तो आपके नेत्रों में अश्रु आ गए। यह इस सहानुभूति के कारण था जो आप के हृदय में मनुष्यमात्र की भलाई के लिए थी। कई बार नकाह के समय यह प्रतिज्ञा कर ली जाती थी कि यदि लड़की पैदा हो जावेगी तो उसको मार दिया जावेगा। इस अवस्था में बेचारी माता से यह पशुपन का कार्य्य कराया जाता था और इस दशा में परिवार की सब स्त्रियों को इकट्ठे करके उनके सामने यह अत्याचार कराया जाता। केवल एक इसी बातको लें तो कितना बड़ा उपकार श्री जगत् गुरु मुहम्मद जी महाराज···········का मनुष्य जाति पर है कि न केवल इस खूनी पशुपन को अरब देश में से एक आवाज़ से समाप्त कर दिया अपितु स्त्री की मान-मर्य्यादा को शिखर पर पहुँचा दिया।

कई रोगों को भी भूत-प्रेतों द्वारा उत्पन्न हुए मानते थे और इनसे बचने के लिए कई प्रकार के यन्त्र, टूणे और मन्त्र वर्तते थे। मनुष्य की आत्मा को एक छोटा सा पक्षी समझते थे, जो मनुष्य के जन्म के समय इस के शरीर में प्रवेश कर लेता है और फिर बढ़ता रहता है। मृत्यु के समय यही शरीर से निकल कर कबर के आस-पास घूमता रहता है। उस वर्ष जब वर्षा न हो—वर्षा बरसाने के लिए यह टूणा समझा जाता था कि एक गौ की पूँछ के साथ सूखा हुआ घास तथा कांटे आदि बांध कर इन को आग लगा देते और ऐसी गौ को पहाड़ों पर छोड़ देते। वह समझते थे कि जलती हुई अग्नि बिजली की चमक के साथ मिलती जुलती है, अतः इस प्रकार वर्षा होगी। कोई विपत्ति पड़ जाय तो गृह में द्वार की ओर से प्रवेश नहीं करते थे अपितु पीछे की दिशा से आते थे। पक्षी के उड़ने से भला, बुरा शकुन मानते थे। यदि बाईं ओर से दाईं दिशा को पक्षी मार्ग काट जाए तो उस को अच्छा शकुन, यदि दायें से बायें को काट जाय तो उसको कुलक्षण समझते थे। जो लोग मृत्यु से पीछे जीवन को मानते थे उनमें से यदि कोई मर जाता तो उसकी

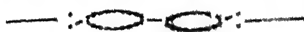
क़बर पर एक ऊँट बाँध देते तथा उसको भूखा-प्यासा रख कर मारते ताकि प्रलय के दिन तक मृतक इसी पर सवार हो। यह भी इनका विश्वास था कि मृतक की आत्मा क़बर पर उल्लू के रूप में उड़ती रहती है और यदि मृतक क़त्ल किया हुआ हो तो वह 'असकिनी, असकिनी' पुकारता रहता है, जब तक कि उसका बदला न लिया जावे। वे जादूगरों और रमल वालों पर बड़ा विश्वास रखते थे। यह जादूगर इनके परमेश्वर बने हुए थे। यह जो कुच्छ भी कहते वह सत्य मान लेते। इस प्रकार के और भी बहुत से भ्रम आदि थे जिनके विस्तार पूर्वक वर्णन करने का यह स्थान नहीं। अगमता, रोग आदि में भूत-प्रेत अथवा जिन्नों का विचार, दुष्ट आत्माओं का मनुष्य शरीर पर अधिकार, जादू आदि कई प्रकार के भ्रमों की थोड़े से काल में ऐसी सफाई श्री जगत् गुरु मुहम्मद जी महाराज ने की, कि मानों इस देश में यह बातें कभी थीं ही नहीं और मनुष्यमात्र को भ्रम-पूजा की क़ैद से छुड़ा कर, सभ्यता और विद्या के उच्च शिखर पर पहुंचाया। इतिहास में किसी ऐसे मनुष्य का उदाहरण मिलना असम्भव है, जिसने कई प्रकार के विश्वासमूलक अथवा वास्तविक रोगों की ऐसे

बड़े देश में इतने थोड़े से काल में ऐसी चतुराई से चिकित्सा की हो और इन रोगों से छुड़ा कर फिर इन लोगों को आरोग्यता और शक्ति के उच्च शिखर तक पहुंचा दिया हो। इसलिये यही पुरुष, मनुष्यों का शुभ-चिन्तक कहलाने का अधिकारी है।

सृष्टि का शुभ-चिन्तक है वह;
साथ ही सभी रसूलों का।
अन्त हो जाता यहां पहुंच कर,
सारे ही मकबूलों का॥



३—हज़रत साहिब से पूर्व अरब देश के सुधार के यत्न



"जो लोग किताब वालों में से काफ़िर हैं तथा द्वैतवादि स्वतन्त्र होने वाले नहीं थे, यहां तक कि उनके पास स्पष्ट युक्ति आए अर्थात् अल्लाह की ओर से रसूल जो पवित्र किताबें पढ़ता है।"

(अलबइय्यना १, २)

अरब के चारों ओर पैग़म्बर—अरब देश के चारों ओर हज़रत इब्राहीम के समय से पूर्व और पश्चात् कई नबी आते रहे, जिनमें से कई एकका वर्णन क़ुरान शरीफ़ में पाया जाता है। इनमें से दो अर्थात् हज़रत हूद जो आदि की जाति की ओर भेजे गए (जो यमन देश के अहक़ाफ़ प्रान्त में निवास करती थी) और हज़रत सालिह जो समूद जाति या दूसरी आदि की जाति की ओर भेजे गए (जो मदीने की उत्तर दिशा में हजर के प्रान्त में निवास करती थी) हज़रत

इब्राहीम से पहिले गुज़रे हैं और दो अर्थात् हज़रत इस्माईल, जिनका कई कथाओं के कारण यमन वालों की ओर भेजा जाना ज्ञात होता है और हज़रत शुऐब जो मदीने में (जो हज़र से पश्चिम की ओर है) भेजे गए, हज़रत इब्राहीम से पीछे आए। बीच का भाग अथवा हज्जाज़ देश सदा खाली रहा है, परन्तु हज़रत इब्राहीम जी महाराज के मक्के में आने और हज़रत इस्माईल जी को यहां छोड़ जाने से इब्राहीमी धर्म की यादें यहां पक्की तरह से स्थापित हैं।

यहूदी धर्म का प्रचार—बनी इसराईल के नबियों के समय अरब में मूर्ति-पूजा पराकाष्टा तक पहुंची हुई थी। हज़रत सुलेमान ने यमन की एक रानी को एकता की शिक्षा पर स्थित किया। नबी के प्रकाश के समीप के काल में यहूदी अरब देश में आकर बसे। लगभग यह वही काल था जब पांचवां शताब्दि मसीह से पूर्व, बुख्त नसर, यहूदियों की बरबादी के पीछे पड़ा। इसी के अत्याचार से तङ्ग आकर और कुछ इसलिए भी कि अन्तिम नबी के अरब में प्रकट होने के अगम्य समाचार सर्व साधारण में प्रसिद्ध थे, इन लोगों ने अरब देश को अपना घर बना लिया

और खैबर यहूदियों का खालिस निवास-स्थान हो गया। जब इनकी ताक़त यहां पर पक्की हो गई तो इन्होंने अपना धर्म फैलाना आरम्भ किया। यहां तक कि हज़रत मसीह से लगभग साढ़े तीन सौ वर्ष पूर्व यमन के बादशाह ज़ूनवास ने यहूदी धर्म्म ग्रहण कर लिया। और इस काल में कुच्छ राज्य के प्रभुत्व से, और कुच्छ बलात्कार से यहूदी मत का हाथ अच्छी तरह ऊपर हो गया। परन्तु सब यत्नों के होते हुए भी अरब वासी उसी प्रकार ही मूर्ति-पूजा में फँसे रहे और यहूदी मत का प्रभाव कुच्छ दिन ज़ोर पकड़नेके अनन्तर फिर घाटे की ओर मुड़ गया और अरब का राष्ट्रधर्म वही ही रहा जो यहूदियों के आने और उन के प्रचार से पहिले था।

इसाई मत का प्रचार—दूसरा बड़ा प्रयत्न, जो श्री जगत् गुरु मुहम्मद जी महाराज के समीप के काल में अरब देश के सुधार के लिए हुआ, वह ईसाईयों का यत्न था। ईसाई अरब में तीसरी शताब्दि में आना आरम्भ हुए। सबसे प्रथम यह नजरान में रहने लगे और प्रचार का यत्न आरम्भ किया। ईसाईयों के प्रयत्नों को दोनों ओर से बड़ी सहायता मिली, एक

हबश की ओर से, जहां पर राष्ट्रीय और राज्यधर्म ईसाई था और दूसरे उत्तर में रोमन राज्य की ओर से, जिसका राज्य धर्म चौथी शताब्दि ई० के प्रारम्भ में ही ईसाई हो चुका था और इसके साथ ही बहुत से लोग ईसाई धर्म में प्रविष्ट हो चुके थे। इस प्रभाव और फिर ईसाई प्रचारकों के प्रयत्नों का फल यह निकला कि नजरान के बहुत से निवासियों ने ईसाई धर्म ग्रहण कर लिया। दूसरे कबीलों यथा हमीर, गसान, रबीअ, तगलब आदि तथा हीरा में जो अराक—अरब के साथ मिलता है, कुछ व्यक्तियों ने ईसाई मत को अपनाया, परन्तु कोई बड़ी सफलता अरब के अन्दर ईसाई धर्म को प्राप्त न हुई। बस ईसाई मतके यत्न भी अरब देश के सुधार के कार्य्य में बिल्कुल निष्फल सिद्ध हुए।

हनीफ़—तीसरी धार्मिक लहर जो अरब के सुधार के लिए उठी, वह एक घरेलू लहर थी। इस्लाम के प्रकट होने से थोड़ा समय पूर्व एक मत उत्पन्न हुआ जिसको 'हनीफ़' कहते हैं। यह लोग न अरब की मूर्ति-पूजा पर क़ायम थे और न ही यहूदी तथा ईसाई मत को मानते थे। वह केवल एक ईश्वर के उपासक थे और इससे बढ़ कर रस्मों और रिवाजों के

सुधार से इन को कोई लगाव नहीं था। इसमें सन्देह नहीं कि कई लोग, जिन के हृदयों में उस समय मूर्ति-पूजा से घृणा उत्पन्न हुई, ईसाई मत में भी प्रविष्ट हुए, यथा वरका बिन नौफ़ल जो श्रीमती ख़दीजा जी का चचेरा भाई (चचा का पुत्र) था और अब्दुल्ला बिन जाअ्श जो हज़रत हमज़ा का भानजा था; परन्तु इनके बड़े भाग की यहूदी और ईसाई मत तसल्ली न कर सके। इन लोगों में से जैद बिन अमर, बिन नफ़ैल, हज़रत उमर के चचा हैं और उमीया बिन अबी सलत जो एक प्रसिद्ध कवि और ताइफ़ का धनी पुरुष था। परन्तु इस बात की गवाही मिलती है कि इन से भिन्न अन्य लोग भी थे और चाहे यह लोग प्रचार के लिये कोई विशेष उत्साह नहीं रखते थे, परन्तु इसमें भी सन्देह नहीं कि वह मूर्ति-पूजा को बिल्कुल ही पसन्द नहीं करते थे। और एकता को, जिस को वह 'इब्राहीमी मत' कहते थे, स्पष्टतया सद्धर्म्म घोषित करते थे। अन्य रस्मों तथा रिवाजों के साथ इनको कोई लगाव नहीं था और मूर्ति-पूजा के स्थान पर केवल ईश्वरीय एकता को मानना इनका वास्तविक

मन्तव्य था। परन्तु अरब के मत में इस आन्दोलन से इतना अन्तर भी न पड़ा जितना ईसाई मत से। अपितु जिस प्रकार ईसाई मत की लहर यहूदी मत से निर्बल सिद्ध हुई, इसी प्रकार इस हनीफ़ी-मत की लहर ईसाईयत से भी निर्बल सिद्ध हुई।

इन तीनों की निष्फलता और अरब के पापों की दासता—नबी जी के प्रकट होने से पूर्व तीन भिन्न २ धार्मिक लहरों के लिए, जिन सभी का मन्तव्य अरब देश का सुधार था, कारणों का उत्पन्न होना और फिर इन तीनों का कुछ अवस्थाओं में शताब्दियों तक काम करके प्रत्येक प्रकार का सामान, यहां तक कि राज्य का दबदबा, प्राप्त होते हुए भी निष्फल रहना और फिर इन तीनों के पीछे एक अकेले मनुष्य का एकाकी होने की दशा में उठना और अकेलेपन की अवस्था में ही छोड़े जाना तथा अन्त में कुछ वर्षों में ही अरब देश के न केवल धर्म्म, किन्तु इसकी आदतों, रहन-सहन, सदाचार तथा अन्य सब अवस्थाओं को ऐसा बदल देना कि मानों इस देश की काया ही पलट दी, यह एक ऐसा अद्भुत कार्य्य है जिसका अन्य कोई

उदाहरण देने में संसार का इतिहास असमर्थ है। यहूदियों का बनी ईसराईल या अरब के लोगों के साथ भ्रातृत्व का सम्बन्धथा। इनकी भाषाएँ, इनकी आदतें बहुत कुच्छ आपस में मिलती-जुलती थीं। नबियों के बड़े पुरुषा हजरत इब्राहीम जी महाराज को दोनों जातियां एक समान मान की दृष्टि से देखती थीं। यमन के बादशाह तक ने यहूदियों के मत को मान लिया। अनन्त सांसारिक पदार्थ मिल चुके थे कि अरब देश सारे का सारा इस प्रभाव के नीचे यहूदियों के मत को मान लेता; परन्तु यह सभी पदार्थ अरब देशकी साधारण दशा में कोई परिवर्तन न कर सके। इस से पीछे ईसाई मत आया और एक नया संदेश लाया। इसकी बनावटी एकता, कुच्छ २ अरब की बनावटी एकता के साथ मिलती-जुलती थी। जिस प्रकार की मूर्ति-पूजा इन में प्रचलित थी, उसी प्रकार की यूनानी-मूर्ति पूजा के प्रभाव के नीचे ईसाई मत का सिद्धान्त तसलीस (बाप, बेटा, रुहुल्कुद्दस) पला था और वर्तमान् ईसाई मतके प्रवर्त्तक पौलूस ने बनी इसराईल के नबियों की एकता तथा मूर्ति-पूजा पर ऐसा रङ्ग चढ़ाया था कि मूर्ति-पूजक जातियों के समूहों के समूह इस मत में प्रविष्ट होने प्रारम्भ हो गए थे। फिर ईसाई मत में आचार

का कोई बन्धन नहीं था, और अरबों के स्वभाव भी आचार से बन्धे हुए न होने के कारण तथा प्रत्येक प्रकार की मौज-बहार में पड़ जाने से ईसाईयों की भांति ही इन बातों को उत्तम समझने लग गए थे। इस प्रकार अरब के लोगों के लिए ईसाई मत सब से सुगम मत था। इसके अतिरिक्त ऊपर से एक ऊंचे प्रभावशाली रूम के राज्य और अरबी जातियों का प्रभाव जो अरब-शाम में रहती थीं, इस मत को स्वीकार कर लेना, यमन की ओर से हबशी ईसाई बादशाहों का प्रभाव, यमन के एक भाग का ईसाई हो जाना, और गसान आदि के राज्यों पर भी ईसाई मत का हाथ ऊंचा होना, यह वह बड़े प्रबल कारण थे, जो स्यात् ही कभी किसी मत को प्राप्त हुए हों और इन के कारण अरब का ईसाई हो जाना थोड़े दिन का कार्य प्रतीत होता था। परन्तु सिवाए अरब के मद्य-सेवन, जूआ, और पुरुष-स्त्री के बुरे सम्बन्धों के बढ़ाने के, अन्य कोई प्रभाव, समष्टिरूप से इस मत का अरब देश पर न हुआ। इन दोनों के पीछे तीसरी लहर, जो हनीफी-मत के नाम से प्रसिद्ध है, एक घरेलू लहर थी और

अरब के रस्मों रिवाजों में किसी प्रकार का परिवर्तन करना इस का मन्तव्य नहीं था, प्रत्युत अरब वासियों को मूर्ति-पूजा से निकाल कर केवल एकता पर स्थित करना ही इसका मन्तव्य था । परन्तु इसके लिए अरब का जल-वायु इतना भी हितकर सिद्ध न हुआ जितना कि यहूदी और ईसाई मत के लिए हुआ था, और यह लहर सब से अधिक निर्बल सिद्ध हुई । स्यात् इसका यह कारण था कि इस की पीठ पर कोई ऐसी सांसारिक शक्ति नहीं थी जैसी कि यहूदी और नसरानी मत की पीठ पर थी । अरब की ऐसी भयानक, पापों की दासता की दशा की ओर क़ुरान की वह आइत निर्देश करती है जो इस अध्याय के शीर्षक (Heading) में लिखी हुई है । अर्थात् किताब (पुस्तक) वाले और मुशरिक़ (द्वैतवादी) सभी के सभी ऐसे पापों की दासता में फँसे हुए थे कि वह इस योग्य नहीं थे कि किसी सांसारिक प्रयत्न द्वारा इस दासता से छुटकारा पा सकें । इसलिए इनको इस दासता से निकालने के लिए अल्लाह (परमात्मा) के एक रसूल की आवश्यकता थी जो पवित्र पुस्तकें पढ़ कर इनको, इन बुराईयों में से निकालता ।

रसूल-अल्लाह की सफलता—इन सब अवस्थाओं को सम्मुख रखते हुए एक गहरी दृष्टि वाली आंख तथा सोच-विचार वाला हृदय चकित रह जाता है कि जगत् गुरु श्री मुहम्मद जी महाराज अकेले, असहाय मनुष्य के पीछे इसकी पुष्टि करने के लिए कौनसी ऊंची शान वाली शक्ति थी कि आपने बीस वर्ष के अल्पकाल में अरब देश की पृथिवी तथा आकाश को परिवर्तित कर दिया और एक ऐसी उथल-पुथल कर दिखाई जिसकी उपमा किसी सुधारक के प्रयत्नों में दृष्टिगोचर नहीं होती। इस बात को शत्रु भी मानता है। सर विलियम म्युर लिखता है—

"नबी जी के यौवन के दिनों में अरब देश की दशा किसी तब्दीली या उन्नति करने के योग्य नहीं थी। स्यात् इस से पूर्व किसी समय में इन लोगों के सुधार से इतनी निराशा उत्पन्न नहीं हुई, जितनी आप के समय में हुई। कई बार जब एक कारण को एक कार्य्य के लिये अधूरा समझ लिया जाता है तो इसके लिए अन्य कारण एकत्रित किए जाते हैं। यथा श्री जगत् गुरु मुहम्मद जी महाराज के बारे में लिखा जाता है कि इनका उठना था कि

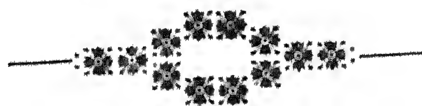
साथ ही समस्त अरब देश एक नवीन तथा आत्मिक ईमान के लिये उठ खड़ा हुआ । और इस से यह परिणाम निकाला जाता है कि अरब उस समय बड़े भारी परिवर्तन के लिए जोश में था और इस को स्वीकार करने के लिए बिल्कुल तय्यार था । परन्तु जब ठण्डे हृदय से इस्लाम के इतिहास का अवलोकन किया जावे तो यह इस परिणाम को झूठा सिद्ध करता है । पांच शताब्दियों पर्य्यन्त ईसाईयों के निरन्तर प्रयत्नों तथा प्रचार का यह फल निकला था कि कुच्छ व्यक्ति, कतिपय जातियों में से, इस मत में प्रविष्ट हो गए । इस प्रकार अरब की धार्मिक सतह पर ईसाई मत के निर्बल से प्रयत्नों की कभी २ कोई छोटी सी तरङ्ग प्रकट हो जाती थी । कई बार अत्यन्त गहरी तरङ्गों में यहूदी मत का प्रभाव प्रकट होता था; परन्तु असली मूर्ति-पूजा और इस्माईली भ्रमों के तरङ्ग अत्यन्त ऊँचे थे ।"

और दूसरे स्थान पर वह लिखता है :—

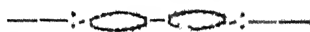
"हज़रत जी के प्रकाश से पूर्व अरब की दशा धार्मिक परिवर्तनको स्वीकार करनेसे इतनी दूर पड़ी हुई थी जितनी कि यह आपस में मेल-मिलाप पैदा करने से दूर थी ।

अरबों के मत की नींव ऐसी सख़्त मूर्ति-पूजा पर थी, जिसकी जड़ें अत्यन्त गहरी लग चुकी थीं, जिसने शताब्दियों तक मिश्र और शाम के ईसाईयों के प्रयत्नों का ऐसा विरोध किया कि मानों इनका, उस पर कोई प्रभाव ही नहीं था।"

इस प्रकार जगत् गुरु श्री मुहम्मद साहिब जी महाराज एक ऐसी जाति के सुधार के लिए नियत हुए, जिस ने पहिले किसी सुधार को स्वीकार न किया और इस जाति की अवस्था को परिवर्तित करके आपने बता दिया कि आप की धार्मिक-शक्ति इस उच्चता को पहुंची हुई थी कि जिस को न तो आप से पहिले और न ही आप से पीछे किसी व्यक्ति की धार्मिक-शक्ति पहुंची है। संक्षिप्त में यह कि आप सभी सत्यवादियों के मुखिया और मनुष्य मात्र के सब से बड़े नेता हैं।



४—हज़रत साहिब के प्रकट होने के शुभ समाचार



" वह लोग जो रसूल नबी उम्मी का अनुकरण करते हैं जिस को वह अपने पास तौरेत और अञ्जील में लिखा हुआ पाते हैं।"

(अल-आहिराफ़ ७, १५७)

हज़रत साहिब के शुभ समाचार—इस बात से पूर्व कि हम श्री जगत् गुरु मुहम्मद जी महाराज के प्रकट होने के सम्बन्ध में कुच्छ लिखें, यह बता देना आवश्यक है कि आप के आने के शुभ समाचार, न केवल आप से पूर्व की पवित्र पुस्तकों में मिलते थे, अपितु इन जातियों में भली प्रकार से प्रसिद्ध थे और सम्भव नहीं कि यहूदियों और ईसाईयों के अरब देश में आकर बसने के कारणों में से एक बड़ा कारण कृत प्रतिज्ञ नबी के आने की प्रतीक्षा भी हो;

क्योंकि भविष्य वाणियों में साफ़ २ अरब का नाम भी आता है। यहां अति संक्षेप से उनमें से केवल थोड़ी सी भविष्य वाणियों का वर्णन किया जाता है—

क़ुरान करीम ने यह दाअ़वा किया है कि हज़रत मुहम्मद साहिब के प्रकट होने का वचन संसार के समस्त नबियों को दिया गया था और प्रत्येक नबी के द्वारा उस की उम्मत से प्रतिज्ञा ली गई थी कि इस समय आप को किताब तथा चतुराई दी जाती है। फिर आप के पास एक ऐसा रसूल आवेगा जो संसार के समस्त नबियों की तसदीक़ (प्रौढ़ता) करेगा। उसके ऊपर आप को ईमान लाना पड़ेगा*। और फिर आदेश किया कि मुहम्मद रसूल अल्लाह के प्रकट होने की भविष्य वाणियां, पहिले नबियों की पुस्तकों में मौजूद हैं×। नए अहदनामे की पुस्तक ऐमाल के अध्याय ३, दरस २१ से भी इस विषय की पुष्टि होती है। मानों अल्लाह तआला ने उस समय, जब कि एक जाति, दूसरी जाति से अलग पड़ी हुई थी और आपस में मेल-मिलाप के रास्ते बहुत कम थे, प्रत्येक जाति तथा देश में भिन्न २

*देखो सूरत आल अमरान ८०। ×देखो सूरत शुअ़रा १९६।

नबी, इनकी शिक्षा के लिये भेजे और फिर उन समस्त मतों को एक करने के लिये तथा मनुष्यमात्र को एक उच्च प्रतिष्ठा वाले पुरुष के झण्डे के नीचे लाकर, इन में एकता और बराबरी पैदा करने के लिए, एक नबी को समस्त संसार के लिए भेजा और इस के प्रकट होने का शुभ समाचार प्रत्येक नबी को पहिले ही दे दिया और जिस प्रकार प्रत्येक नबी को इस का समाचार दिया उसी प्रकार इन को संसार के सभी नबियों की प्रौढ़ता के लिए नियत किया, क्योंकि मुहम्मद रसूल अल्लाह.................. संसार के एकमात्र रसूल और नबी हैं जिन्हों ने जहां अपने पर ईमान लाना धर्म्म के नियमोंमें प्रविष्ट किया वहां संसार के समस्त नबियों पर ईमान लाना भी इसी प्रकार धार्मिक नियमों में दाखल किया* । तथा साथ ही यह भी बता दिया कि संसार की प्रत्येक जाति में नबी आ चुके हैं× और यह भी प्रत्यक्ष कह दिया कि इन सबों के नाम क़ुरान शरीफ़ में नहीं, कई रसूलों का वर्णन हम ने क़ुरान में कर दिया है और कईयों का नहीं+ । बस जिस प्रकार संसार में अन्य कोई नबी

*देखो सूरत बक़र ४० । ×देखो सूरत फ़ातह २४ । +देखो सूरत अनस्सा १६४ ।

नहीं जिस के सम्बन्ध में संसार के समस्त नबियों ने भविष्य वाणियां की हों तथा उस के प्रकट होने का शुभ समाचार अपनी २ जाति को दिया हो, इसी प्रकार सिवाय मुहम्मद रसूल अल्लाह .... के अन्य कोई नबी नहीं, जिसने संसार के समस्त नबियों पर ईमान लाना आवश्यक किया हो। वह सभी भविष्य वाणियों का पुष्टि-कर्त्ता और सब की सत्यता का गवाह भी है। इसलिए वह रसूलों का नेता और अन्तिम रसूल भी हुआ।

तौरेत तथा अञ्जील का आधिक्य--

परन्तु यह कोई छिपी हुई बात नहीं कि पुराने मतों की पुस्तकों में बहुत कुछ परिवर्तन तथा अधिकताएँ और न्यूनताएँ हो चुकी हैं; यहां तक कि तौरेत तथा अञ्जील में भी। हां, अन्यों की अपेक्षा तौरेत तथा अञ्जील का काल भी निकट है और इन में परिवर्तन भी इतना नहीं हुआ और भविष्य वाणियां भी इन में सब से अधिक हैं। इसलिए कुरान करीम ने तौरेत तथा अञ्जील का वर्णन विशेषतया किया है और मैं भी नमूने के तौर पर कुछ शुभ समाचारों का वर्णन इन पुस्तकों में से ही करूँगा।

इब्राहीम के साथ वचन--बनी ईसराईल अर्थात् यहूदी और बनी इस्माईल अर्थात् अरबी दोनों के बड़े पुरुषा हज़रत इब्राहीम हैं और इन को अपनी सन्तान के बारे में बड़ी २ शुभ सूचनाएँ दी गईं, जिनका कुच्छ वर्णन आधुनिक तौरेतकी सञ्चिका पैदाइश नामक पुस्तक में पाया जाता है। चाहे हज़रत इब्राहीम जी की असली पुस्तकें अब पूर्णतया गुम हो गई हैं तो भी हज़रत इब्राहीम को अपने दोनों पुत्रों इस्माईल तथा इस्हाक़ के सम्बन्ध में शुभ समाचारों का दिया जाना इस पुस्तक में वर्णित है। तथा क़ुरान क़रीम ने भी संकेत किया है कि हज़रत इब्राहीम जी को यह बताया गया था कि इनकी सन्तान में नबव्वत तथा इमामत की पदवी रहेगी*। इसी प्रकार हज़रत इब्राहीम और हज़रत इस्माईल की प्रार्थना में भी इसी की ओर संकेत है×। पैदाइश नामक पुस्तक में हज़रत इब्राहीम के साथ हज़रत इस्माईल और इस्हाक़ दोनों के पैदा होने से पूर्व यह वचन था. "मैं तुझे एक बड़ी जाति बनाऊँगा और तुझे उत्तम तथा तेरा नाम बड़ा करूँगा और उनको जो तुझे बर्कत देते हैं, बर्कत दूँगा।" (पैदाइश १२, २, ३)

---

*देखो सूरत बक़र १२४। ×देखो सूरत बक़र १२६।

विचार किया जावे तो बनी इस्माईल ही इस भविष्य वाणी को असली सच्चा सिद्ध करने वाले बनते हैं, क्योंकि सिवाय मुसलमानों के कोई जाति इब्राहीम को सच्चे हृदय के साथ बर्कत देने वाली नहीं। मुसलमान पांचों समय अपनी निमाजों में यह पढ़ते हैं "हे अल्लाह! मुहम्मद और मुहम्मद की सन्तान को बर्कत दे, जिस प्रकार कि तू ने इब्राहीम और इब्राहीम की सन्तान को बर्कत दी।" फिर इसी पुस्तक में हजरत इस्माईल का नाम लेकर आदेश किया, "और इस्माईलके हकमें मैं तेरी सुनी, देख, मैं इस को बर्कत दूंगा और इस को बड़े भाग्य वाला करूँगा तथा इसको बहुत बढ़ाऊँगा और इस से बारह सरदार पैदा करूँगा तथा मैं इसको बहुत बड़ी जाति बनाऊँगा।" (पैदाइश १७, २०)। यहां हजरत इस्माईल और इसकी सन्तान के हक में ठीक वही वचन है जो हजरत इब्राहीम और इसकी सन्तान के हक में था। फिर इस वचन में एक और भी प्रत्यक्षता है अर्थात् पैदाइश नामक पुस्तक के इस वचन के दो पक्ष वर्णन किए गए हैं—प्रथम "मेरा वचन जो मेरे और तेरे मध्य और तेरे पीछे तेरी सन्तति के साथ है, जिसको तू स्मरण रख, वह यह है कि तुम में से प्रत्येक नर-बच्चे का खतना किया

जावे .... और यह इस वचन का चिह्न होगा, जो मेरे और तेरे मध्य है। अब यदि यह खतना, एक काल तक बनी इसराईल और बनी इसमाईल में एक सांझा चिह्न चला आया है तो अब मुहम्मद रसूल अल्लाह .... की आत्मिक (रूहानी) सन्तान के सामने जिन की गणना चालीस कोटि तक पहुंची हुई है, बनी इसराईल किसी गिणती में भी नहीं। बस जो जाति इस बाहिर के (प्रत्यक्ष) चिह्न को पूरा करती है, वही वचन की वास्तविक अधिकारिणी है।" दूसरा पक्ष इस वचन का इस प्रकार वर्णन किया गया है, "और मैं अपने तथा तेरे मध्य और तेरे पीछे तेरी सन्तति में इनकी पीढ़ीयों तक अपनी प्रतिज्ञा जो "सदैवी प्रतिज्ञा" हो, करता हूं कि मैं तेरा और तेरे पीछे तेरी सन्तति का खुदा होऊँगा। और मैं तुझे और तेरे पीछे तेरी सन्तति को किनआन का सारा प्रदेश जिस में तू परदेशी है, देता हूं कि सदा के लिए तेरा देश हो।" (पैदाइश १७. ७. ८)।

अब प्रत्यक्ष है कि जब से हज़रत मुहम्मदजी महाराज ... . संसार में प्रकट हुए, इस प्रतिज्ञा वाली भूमि बनी इसराईल या इसराईल के नबियों के सेवकों से लेकर हज़रत मुहम्मद जी महाराज ....

के सेवकों को दी गई और तेरह सौ वर्ष से इन्हीं के पास चली आ रही है। सलीबी युद्धों का सब से बड़ा मन्तव्य यही था कि इस प्रतिज्ञा वाली भूमि को मुसलमानों के हाथों से ले लिया जावे, परन्तु चाहे थोड़े काल के लिए वह भूमि हाथसे निकल गई, परन्तु फिर अल्लाह तआला ने अपने पुरातन वचन अनुसार वह मुसलमानों को दिला दी। फिर भी यदि कभी इसी प्रकार छिन जावे, तो वह केवल थोड़ी देर की बात होगी और इस के स्वामी मुसलमान ही होंगे, चाहे वह इस प्रकार होवे कि अल्लाह तआला अपनी सर्व शक्ति के साथ यह मुसलमानों को दिलवा दे और चाहे इस प्रकार कि इस के लेने वालों को वह मुसलमान कर दे। हर प्रकार इस वचन के दोनों पक्ष नबी जी महाराज की सत्यता पर एक ऐसी दोहरी गवाही का काम देते हैं, जिसके विरुद्ध कोई यहूदी या ईसाई एक शब्द भी मुख से नहीं निकाल सकता और यह भविष्य-वाणी इन की सभी दलीलों का मुँह बंद करने के लिए अकेली ही पर्याप्त है।

मसील मूसा की भविष्य वाणी—दूसरी भविष्य वाणी जो अपनी प्रतिष्ठा और सफाई की शान में इसी प्रकार सर्वोपरि है, वह है जो हजरत मूसा की जिह्वा से

बनी इसराईल को पहुंचाई गई, "मैं इनके लिए इनके भाईयों में से तेरे जैसा एक नबी पैदा करूँगा और अपनी वाणी इसके मुख में डालूँगा।" (अस्तस्ना १८, १८) अब बनी इसराईल में हज़रत मूसा के काल से लेकर हज़रत ईसा के समय तक जब नबव्वत का सिलसिला इन में से बंद हो गया, किसी नबी ने, ऐसा नबी होने का दाअवा नहीं किया, जैसा कि इस शुभ सूचना में वर्णित तथा प्रत्यक्ष है कि हज़रत मूसा के खलीफ़ों में से मूसा जैसा कोई नबी नहीं हो सकता और यह भविष्य-वाणी इलहामी पुस्तकों में मौजूद होने के अतिरिक्त सर्व साधारण में प्रसिद्ध भी थी और यहूदी बराबर मूसा जैसे एक नबी के आने की प्रतीक्षा में चले आते थे, जैसा कि युहन्ना १९, २२ में है कि लोगों ने युहन्ना बिपतस्मा देने वाले से पूछा कि क्या तू मसीह है? तो उसने कहा कि नहीं। फिर उन्होंने पूछा कि क्या तू अलीआस है? तो इसने कहा कि नहीं। फिर उन्होंने पूछा कि क्या तू वह नबी है? तो उस ने कहा कि नहीं। इससे साफ़ प्रकट है कि इनको एक तो मसीह की प्रतीक्षा थी और एक अलीआस के दुबारा आने की तथा तीसरे किसी 'उस नबी की' जिसकी इतनी प्रसिद्धि थी कि

वहां नाम लेने की भी आवश्यकता नहीं थी। अब साफ़ प्रकट है कि मसीह और अलीआस के दोबारा आने के सिवाए जो भविष्य वाणी इनके पास थी वह केवल मूसा के समान नबी की थी, जो असतसना में वर्णित है और यह केवल कल्पना ही नहीं अपितु यह एक सच्ची घटना है, जिसकी गवाही स्वयं अञ्जीलों से मिलती है जहां "वह नबी" के प्रश्न पर असतसना १८, १८ का हवाला समस्त बाईबलों की हाशिये पर मौजूद है। इससे साफ़ ज्ञात हुआ कि हज़रत मसीह के प्रकट होने से पहिले यहूदी तीन नबियों की प्रतीक्षा में थे और इस समय तक इन तीनों भविष्य वाणियों के पूर्ण करनेवाला कोई प्रकट नहीं हुआ था। एक मसीह का, एक अलीआस के दोबारा आने का और एक मूसाकी भांति नबी का। अब हज़रत ईसा ने मसीह होने का दाअ़वा किया। हज़रत याहया, अलीआस के दोबारा आने के पूरा करने वाले माने गए, परन्तु वह वाअ़दा किया गया नबी मूसा जैसा होने का दाअ़वा न हज़रत मसीह ने किया, न हज़रत याहया ने और न इनको किसी ने वह इक़रार किया गया असतसना वाला नबी माना।

इस से पीछे बनी इसराईल में नबव्वत का सिलसिला समाप्त हो जाता है। बस कोई भी नबी, मिसल मूसा वाली भविष्य-बाणी का पूरा करनेवाला बनी इसराईल में प्रकट नहीं हुआ। सारे नबियों के जीवन चरित्रों को पढ़ लीजिये और सभी पवित्र धार्मिक पुस्तकों के पत्रों को उलट देखिये, इस भविष्य वाणी के पूर्ण-कर्त्ता होने का दाअ़वा श्री जगत् गुरु मुहम्मद जी महाराज के बिना अन्य किसी ने नहीं किया। न क़ुरान के अतिरिक्त किसी पुस्तक ने किसी नबी को इस भविष्य बाणी का पूर्ण-कर्त्ता माना। बस यह दूसरी प्रत्यत्त शुभ-सूचना श्री जगत् गुरु मुहम्मद जी महाराज के प्रकट होने की है, जिस का पूर्ण-कर्त्ता संसार में अन्य कोई नहीं हो सकता और क़ुरान क़रीम ने बार बार यह दाअ़वा पेश किया है कि श्री मुहम्मद जी महाराज, मूसा के समान हैं* ।

---

*अर्थात् हम ने तुम्हारी ओर ऐसा रसूल भेजा जैसा फ़िरऔन की ओर भेजा था (सूरत मुजमल १५) बनी इसराईल के एक उच्च प्रताप वाले गवाह ने अपने समान गवाही दी थी (सूरत अहक़ाफ़ १०) कहो अल्लाह की आज्ञा यह है कि किसी को उस के समान दिया जावे जो तुम्हें (बनी इसराईल को) दिया गया। (आल अमरान ७२)

दस हज़ार कदूसियों वाली भविष्य-वाणी—तीसरी अत्यन्त प्रत्यक्ष शुभ-सूचना अस्तसना ३३, २ में दर्ज है—"परमेश्वर सीना से आया और शअ़ईर से इन पर उदय हुआ। फ़ारान ही के पर्वत से वह प्रकट हुआ, दस हज़ार कदूसियों (पवित्र मनुष्यों) के साथ आया और इस के दाएँ हाथ में एक आतशी शरीअ़त इन के लिए थी।" सीना से आना, हज़रत मूसा का प्रकट होना है जो सीना पर हुआ और शअ़ईर से उदय होना हज़रत ईसा का प्रकट होना है, जिसके ऊपर बनी इसराईल का सिलसिला समाप्त हो गया। और फ़ारान, हजाज़ का नाम है। पुराने नामों में बहुत कुछ गड़बड़ हो गई है, परन्तु दस हज़ार कदूसियों के साथ आने वाला एक ही मनुष्य संसार में है अर्थात् जगत् गुरु श्री मुहम्मद जी महाराज.......................जो दस हज़ार चुने हुए साथियों के साथ मक्के में प्रविष्ट हुए और वही आतशी शरीअ़त वाला नबी है, जिस की शरीअ़त आज भी शरीअ़त बैज़ा (रोशन) के नाम से प्रसिद्ध है, क्योंकि इसने सभी बातों पर प्रकाश डाला है।

चौथा शुभ समाचार साफ़ तौर पर अ़रब के

सम्बन्ध में है, देखो यसाइया २१, १३, १५ ।

यसाईआह की भविष्य-वाणी और हिजरत—अरब की बाबत ईश्वरीय वाणी, "अरब के रेतीले स्थान में तुम रात काटोगे, हे दीवानोंके समूहो! पानी लेकर प्यासे का स्वागत करने के लिए आओ; हे तीमा की भूमि के वासियो! रोटी लेकर दौड़ने वाले के मिलने को निकलो, क्योंकि वह तलवारों के सामने से नंगी तलवार से और खेंची हुई कमान से और युद्ध के कष्ट से भागे हैं ।"

पहिले शब्द अरब, फिर भागने वाले का वर्णन, संसार के इतिहास में एक ही वह भागनेवाला है जिस का भागना, संसार के इतिहास में एक ऊँची शान वाली घटना है अर्थात् श्री जगत् गुरु मुहम्मद जी महाराज, आप की हिजरत अर्थात् मक्के से भागना एक ऐसी अलौकिक घटना है कि इसी से इस्लामी संवत् का प्रारम्भ होता है । यह मान, संसार के इतिहास में और किसी को नहीं मिला । फिर वही नंगी तलवार के सामने से भागने वाला है क्योंकि इतिहास से सिद्ध है कि नबी जी............उस

समय अपने घर से निकले जब शत्रु नङ्गी तलवार लेकर आप के घर का घेरा डाल चुके थे और सभी के सभी एक ही बार आप पर टूट पड़ने को तय्यार थे ।

हज़रत ईसा की भविष्य वाणियां—हज़रत दाऊद, हज़रत सुलेमान, हबक्कूक नबी और हज्जी नबी आदि की पुस्तकों में भी हज़रत मुहम्मद साहिब जी··· ·········के प्रकट होने की प्रत्यक्ष भविष्य वाणियां हैं, परन्तु इस विषय को संक्षिप्त करने के लिए मैं यहां केवल बनी इसराईल के अन्तिम नबी हज़रत ईसा ·········जी·················की एक भविष्य वाणी का वर्णन करता हूं जिसकी ओर कुरान शरीफ़ ने भी संकेत किया है । "मैं एक रसूल की शुभ सूचना देता हूं जो मेरे पीछे आवेगा, उस का नाम अहमद है ।" (सूरत सफ़ा ६)—

"यदि आप मुझे प्रेम करते हैं तो मेरी आज्ञाओं का पालन करो और मैं अपने पिता के पास विनती करूँगा और वह आप को दूसरा शान्ति देने वाला बख्शेगा कि सदा तुम्हारे साथ रहे अर्थात् रूहेहक्क (ईश्वरीय आत्म सत्ता) ।" (युहन्ना १४ : १५, १७) ।

"परन्तु वह शान्ति देने वाला जो रूह-उल-क़ुद्दस है जिस को पिता मेरे नाम से भेजेगा व तुम्हें सभी चीजें समझा देगा।" (युहन्ना १४ : २६)

"परन्तु मैं तुम से सत्य कहता हूं कि तुम्हारे लिए मेरा जाना ही लाभकारी है, क्योंकि यदि मैं न जाऊँ तो तसल्ली देने वाला तुम्हारे पास नहीं आवेगा, किन्तु यदि मैं जाऊँ, तो मैं उसे तुम्हारे पास भेज दूँगा।" (युहन्ना १६ : ७)।

"मेरी अन्य भी बहुत सी बातें हैं कि मैं तुम्हें कहूं, परन्तु अब तुम उन का बोझ नहीं सहार सकते परन्तु जब 'वह' अर्थात् रूहे हक़ (ईश्वरीय आत्म-सत्ता) आवे तो वह तुम्हें सारा सत्य का मार्ग दिखा देगी।" (युहन्ना १६ : १२, १३)

चाहे यह भविष्य वाणी भी अत्यन्त सफ़ाई के साथ हज़रत ईसा के अनन्तर एक अन्य नबी के आने की सूचना देती है, परन्तु इसाईयों ने इस को तोड़-मरोड़ कर रूह-उल-क़ुद्दस पर लगाना चाहा है। यद्यपि भविष्य वाणी के शब्द इस परिणाम को साफ़ रद्द करते हैं:—"यदि मैं न जाऊँ तो तसल्ली देने वाला तुम्हारे पास नहीं आवेगा।" वास्तव में रूह-

उल-क़ुद्स पहिले नबियों पर उतरता रहा। हज़रत याहया माता के पेट से ही रूह-उल-क़ुद्स के साथ भरे हुए उत्पन्न हुए जैसा कि अञ्जील में लिखा है। स्वयं हज़रत ईसा पर रूह-उल-क़ुद्स के कबूतर की आकृति में उतरने का वर्णन अञ्जील में मौजूद है। यदि किसी मनुष्य के हृदय में हज़रत ईसा का मान हो तो वह इस बात पर ईमान ले आयेगा कि हज़रत ईसा ने हवारियों (संगियों) के मन को शुद्ध करके इनको भी अपने जीवन काल में ही रूह-उल-क़ुद्स के उतरने का अधिकारी बना दिया। क़ुरान शरीफ़ में सुहाबा (साथियों)..............पर रूह-उल-क़ुद्स के आने का साफ़ वर्णन है*। इसलिए यह कहना कि हज़रत ईसा ने रूह-उल-क़ुद्स के आने की अगम्य सूचना दी थी, व्यर्थ है। हां! रूहे-हक़ के स्थान पर शब्द रूह-उल-क़ुद्स भी भविष्य वाणी में आ गया है जो यदि भूल नहीं तो केवल यह बात बताने के लिए है कि उस आने वाले पैग़म्बर के साथ, रूह-उल-क़ुद्स का ऐसा घनिष्ट संबंध होवेगा कि उसका आना, मानों स्वयं रूह-उल क़ुद्स का आ जाना है और भावार्थ के तौर पर ऐसा कहा भी जा सकत

*देखो सूरत मजादला २२।

है। भविष्य वाणी के शब्द साफ़ बताते हैं कि वह दूसरे शान्ति देने वाले नबी, श्री मुहम्मद जी महाराज ही हैं। इस का विशेषण है कि वह सदा तुम्हारे साथ रहेगा अर्थात् इसके पीछे कोई दूसरा नबी नहीं आवेगा, क्योंकि दूसरे नबी के आने से पहिले नबी की नबव्वत का काल समाप्त हो जाता है। फिर लिखा है, वह समस्त बातें सिखलाएगा और क़ुरान शरीफ़ ने दाअ़्वा किया है जो किसी अन्य पुस्तक ने इस से पूर्व नहीं किया कि आज के दिन मैंने तुम्हारा धर्म्म, तुम्हारे लिए पूरा कर दिया* । वास्तव में हज़रत ईसा अपने लिए साफ़ इक़रार करते हैं कि मैं सब बातें नहीं कर सकता, मानों उस समय धर्म्म अभी शिखर पर नहीं पहुंचा था, फिर इसको रूहे हक़ कहा गया और क़ुरान शरीफ़ में इसी बात की ओर संकेत है जो कहा कि हक़्क़ (सत्य) आ गया और बातिल (असत्य) नष्ट हो गया+। अन्य भी चिह्न इस भविष्य-बाणी में हैं, जैसा कि "वह मेरी बड़ाई करेगा।" क्योंकि हज़रत ईसा के लांछनों की सफ़ाई हज़रत श्री जगत् गुरु मुहम्मद जी महाराज ने ही की है।

*देखो सूरत माइदा ३०। +देखो सूरत बनी इसराईल ८१ ।

५—सिलसिला नसब (वंश परम्परा) और जन्म



"हे मेरे परमात्मा ! मैंने अपनी सन्तान का एक भाग, तेरे सत्कार योग्य गृहके समीप, उस वादी (उजाड़) में बसाया, जहां खेती नहीं ।"

(इब्राहीम ३७)

बनी इस्माईल तथा बनी इस्राईल—

हज़रत इब्राहीम की सन्तान में से दो ऊँची-शानवाली जातियां हुई हैं, एक बनी इस्माईल, दूसरी बनी इस्राईल। आप का सब से बड़ा पुत्र इस्माईल था, जो आप की धर्म्मपत्नी श्रीमती हाजरा के पेट से था और इस से छोटा इस्हाक़ था; परन्तु इस्हाक़के नाम को इतनी प्रसिद्धि प्राप्त नहीं हुई, जितनी इस्हाक़ के पुत्र याक़ूब को। याक़ूब का ही दूसरा नाम इस्राईल है और बनी इस्राईल इसी के नाम से प्रसिद्ध हुए।

इसी प्रकार से बनी इस्माईल और बनी ईस्राईल दो भाई-भाई जातियां हैं और इसी की ओर उस भविष्य-वाणी का संकेत था, जो हज़रत मूसा ने अपने समान एक नबी के प्रकट होने के सम्बन्ध में की थी, जिस में बनी इस्राईल को सम्बोधित करके कहा था, कि तेरे भाईयों में से वह नबी होगा, अर्थात् बनी इस्माईल में से। परन्तु पीछे इन दोनों जातियों में कुच्छ ऐसा सौतपने का विचार उत्पन्न हो गया कि यहूदियों ने अपनी पुस्तकों में उलट-फेर करके जहां और बहुत सी झूठी बातें लिख दीं और कई नबियों के सन्बन्ध में तरह २ की गन्दी कथाएँ इन में दर्ज कर दीं यथा यह कि हज़रत नूह शराब पीकर उन्मत्त हो गए; कि हज़रत लूत ने अपनी पुत्रियों के साथ भोग विलास किया; हज़रत सुलेमान ने मूर्तियों को प्रणाम किया; हज़रत दाऊद ने अदरिया की धर्म्म-पत्नी के साथ मुँह काला किया; हज़रत हारून ने शिरक (एक से अधिक ईश्वरों का मानना) किया* इत्यादि। वहाँ बनी इस्माईल के साथ शत्रुता करके

---

*इन समस्त कटाक्षों से क़ुरान क़रीम ने इन नबियों को पवित्र सिद्ध किया है।

श्रीमती हाजरा को, जो मिश्र देश की एक शाहज़ादी और हज़रत इब्राहीम की धर्म्मपत्नी थीं, दासी बना दिया और हज़रत इस्माईल के बारे में कई अनुचित शब्द लिख दिये, परन्तु श्रीमती हाजरा के बारे वर्त्तमान् परिवर्तित बाईबिल में भी ऐसे शब्द शेष हैं, जिनसे ईश्वर की नज़रों में इनकी मान प्रतिष्ठा हज़रत सारा से किसी प्रकार कम दृष्टि-गोचर नहीं होती, प्रत्युत कुछ बढ़ कर ही है। ईश्वर के फ़रिश्ते उसके समक्ष आते और ईश्वरीय वाणी उसको पहुंचाते। क्या यह पदवी किसी दासी को उपलब्ध हो सकती थी ? फिर अल्लाह तआला इसकी दुःख-पीड़ा को सुनता है और अपना फ़रिश्ता इस को आश्वासन प्रदान करने के लिए भेजता है। यही वह उच्चाति उच्च स्थान है जो किसी उत्तम स्त्री को मिला। यदि वह दासी ही थीं, तो भी ईश्वर की दृष्टि में उन को वह स्थान प्राप्त था जो स्त्री को भी नहीं था। संक्षेप में यह कि श्रीमती हाजरा, हज़रत इब्राहीम की उत्तम स्त्री थीं और इसी पवित्र स्त्री के पेट से हज़रत इब्राहीम का प्रथम पुत्र हज़रत इस्माईल उत्पन्न हुआ।

बनी इस्माईल को ईश्वराज्ञा से अरब देश में बसाया—इसी प्रकार, बाईबल का यह ब्यान भी असत्य है कि हज़रत इब्राहीम ने हज़रत सारा के कहने पर हाजरा और इस्माईल को घर से निकाल कर किसी जङ्गल में छोड़ दिया। इब्राहीम जैसे मुस्लिम सत्यवादी पुरुष पर यह झूठा आरोप है और क़ुरान शरीफ़ ने उनको ऊपर लिखी आयत में इस लांछन से मुक्त माना है और वास्तविक भेद की सूचना दी है। अर्थात् यह ईश्वरीय इच्छा थी कि हज़रत इब्राहीम के घराने की बड़ी शाखा, सब से बढ़कर पुरस्कारों की उत्तराधिकारिणी होवे और इसी वंश से दो जहान का सर्दार उत्पन्न होवे। इसलिये ईश्वरीय सद्भावना ने यह चाहा कि इस वंश को इस पवित्र घर के निकट बसाया जाय जहां से एकता का अन्तिम और सदा जारी रहने वाला स्रोत फूटना था। इसलिये हज़रत इब्राहीम को आज्ञा हुई कि इस्माईल और हाजरा को इस पवित्र गृह के निकट आबाद कर दे, जहां चाहे खेती नहीं, किन्तु सर्व-शक्तिमान् परमात्मा वहां हर प्रकार के फल पहुंचाएगा* और

---

*सूरत बक़र १२६।

इस स्थान का चुनाव इसलिए किया कि सांसारिक जनों के लिए, जो बातें मोह का कारण होती हैं, वह वहां न हों; वह संसार की आकर्षण भूमि तो बने, परन्तु अपनी सुन्दरता, हरियाली या सांसारिक लाभ के कारण नहीं, अपितु केवल सदाचार और आत्मिक बल के कारण। नबी जी महाराज ने हज़रत इस्माईल और हाजरा के मक्के में आने का वर्णन करते हुए स्पष्टतया कहा है कि जब हज़रत हाजरा ने हज़रत इब्राहीम से पूछा कि क्या आप परमेश्वर की आज्ञा से हमें यहां छोड़ते हैं? तो आप ने कहा 'हां'। तब हज़रत हाजरा ने कहा, 'फिर परमेश्वर हमें नष्ट नहीं करेगा? और सम्भव है कि हज़रत इस्माईल के ज़िबह करने में इन की इसी हिजरत की ओर संकेत था और यहां भी पुस्तक वालों ने भ्रम से हज़रत इस्हाक़ का ज़िबह होना माना है। वास्तव में जहां बाईबल में यह आज्ञा आती है वहां स्पष्ट शब्द हैं—"कि अपने इकलौते पुत्र को ज़िबह करो।" (पैदाइश २२-२)। अब इस्हाक़ किसी प्रकार भी इकलौता पुत्र नहीं कहला सकता क्योंकि वह इस्माईल के पीछे उत्पन्न हुआ। इकलौता पुत्र इस्माईल

था जब तक कि इस्हाक़ उत्पन्न नहीं हुआ था और इस का उत्तर पुस्तक वालों के पास कुछ भी नहीं और न ही इस बात का कोई उत्तर है कि पुत्र के ज़िबह की वह बड़ी स्मृति अर्थात् दुंबे का कुरबान करना—यह इस्माईल की संतान में क्यों चला आया और मक्के में इसका क्यों स्मृति-चिह्न स्थापित रहा और इस्हाक़ की सन्तान में इसकी क्यों कोई छोटी से छोटी स्मृति भी नहीं मिलती। संक्षेपतया यह कि निर्जन स्थान में परन्तु हरि के द्वार के निकट हज़रत इस्माईल को रखने में वही संकेत था जिसका वर्णन स्वयं बाईबिल की भविष्य वाणियों में पाया जाता है कि इस की संतान यहां अलग रहकर बढ़े फूले और सांसारिक तौर पर रद्दी किए गए वंश में से वह ऊँची शान वाला पुरुष पैदा होवे, जो संसार का अन्तिम शिक्षक माना जाना था। वह पत्थर जिसे राजों ने रद्दी किया, वही कोने का सिरा हुआ (मती २१-४२)। यह एक सर्व शक्तिमान् परमेश्वर की बातें थीं जो अपने समय पर पूर्ण हुईं। जब अन्तिम नबी श्री जगत् गुरु मुहम्मद जी महाराज ने आकर संसार को बताया कि आप ही नबुव्वत

रूपी महल के कोने के पत्थर हैं* और परमात्मा की आज्ञा से यह विभाजन हुआ कि इस्राईल की संतान फ़िलस्तीन के देश में बसे और इस्माईल की सन्तान अरब में। और इस बड़े खानदान को यह सब से बड़ी और अन्तिम बरकत मिले कि इन में अन्तिम नबी उत्पन्न हो।

आप का वंश—हज़रत इस्माईल के बारह पुत्र थे, जिस के लिए तौरेतकी साक्षी है। इनमें से एक क़ीदार थे, जिन की सन्तति हज्जाज़ में फैली। क़ीदार का सम्बन्ध अरब के साथ या अरबों का क़ीदार की सन्तान होना, यह तौरेत में एक मानी हुई और सुप्रसिद्ध बात है और अदनान का जो लगभग हज़रत इस्माईल से कोई चालसवीं पीढ़ी में थे, हज़रत इस्माईल की संतान होना, अरब निवासियों के लिए एक प्रामाणिक बात है और अदनान तक श्री मुहम्मद जी महाराज की वंशावलि नाम प्रतिनाम निश्चित तौर पर पहुंचा हुआ मौजूद है जिस में आज तक किसी को रत्ती भर भी भ्रम नहीं।

अदनान से नवीं पीढ़ी में नज़र-बिन-कनाना

*मैं वह पत्थर हूं और मैं अन्तिम नबी हूं।

हैं जिन से क़ुरैश वंश की नींव पड़ी। और इस घराने का मान पहिले से दुगुना हो गया। इन की संतान की नौवीं पीढ़ी में क़ुसय्य हुए, जिन के सुपुर्द काअ्बा के संरक्षण का कार्य्य हुआ जो अरब में सब से बढ़ कर प्रतिष्ठा का स्थान समझा जाता था। यह अब्दुल मतलब के प्रपितामहा थे। इस प्रकार अरब में सज्जनता और मान-प्रतिष्ठा के दृष्टि कोण से श्री मुहम्मद जी महाराज का वंश उच्च से उच्च स्थान पर था यहां तक कि इस से ऊँचा और कोई वंश था ही नहीं।

अब्दुल मतलब और इस की सन्तान—

आप के प्रपितामहा हाशम ने मदीने में बनी नजार के वंश में विवाह किया। इसलिए यह आपके ननिहाल हुए। इन के पेट से हाशम के घर अब्दुल मतलब पैदा हुए। इनके दस पुत्र थे जिनमें से निम्न प्रसिद्ध हैं:—

अबूलहब जो हज़रत साहिब के विरोध में सीमा को भी लांघ गया। अबु तालब, जिन्हों ने आप का पालन-पोषण किया। हज़रत हमज़ा जो इस्लाम के प्रारम्भिक काल में ही आप पर ईमान ले आए और सय्यद-उल-शाहदा (शहीदों के अधिपति) के

नाम से प्रसिद्ध हैं, उहद के युद्ध में शहीद हुए । हज़रत अब्बास जो चाहे ऊपर २ से, एक समय तक कुफ़र पर रहे; परन्तु आप के साथ प्रारम्भ से ही प्रेम रखते थे और अन्त में ईमान ले आए तथा अब्दुल्ला जो आप.................के पिता थे। अब्दुल्ला का विवाह ज़ुहरा कबीले में वहब बिन अबदमनाफ की सुपुत्री से हुआ, जिन का शुभ नाम श्रीमती आमिना था। यह दम्पत्ति न केवल वंश परम्परा की मान और प्रतिष्ठा की दृष्टि से शिखर पर पहुंचे हुए थे, अपितु इस समय में जबकि भ्रम और अज्ञान का अन्धकार चारों ओर फैला हुआ था, इन को परम पिता परमात्मा ने एक पवित्र स्वभाव प्रदान किया था। इसीलिए क़ुरान करीम में आप के पुरुषाओं को साजदीन (प्रणामी) के शब्द के साथ याद किया गया है। बात क्या, आप का वंश न केवल सज्जनता की दृष्टि से ही उच्च पदवी पर पहुंचा हुआ था, अपितु पवित्रता के कारण भी मान्यवर है।

पिता का देहान्त—विवाह के कुच्छ ही दिन पीछे, अब्दुल्ला ने व्यापार के लिए शाम देश की यात्रा की। लौटती बार रास्ते में रुग्ण हुए और अन्त

में मदीने पहुंच कर चल बसे। श्री जगत गुरु मुहम्मद जी महाराज, अभी माता के गर्भ में ही थे अर्थात् उत्पन्न होने से पहिले ही आप के पिता की छत्र-छाया आप के सिर पर से हट गई। यह दो मान आप के साथ विशेषतया किए गए कि अनाथ होते हुए आप बड़े उच्च स्वभाव के स्वामी हुए। अत्यन्त दर्जे के अकेलेपन में पैदा होकर ऊँचे से ऊँचे स्थान पर पहुंचे और उम्मी अर्थात् अनपढ़ होते हुए भी चतुराई और ज्ञान की वह नदियां बहाईं कि जिन के समक्ष, आज तेरह सौ वर्ष पीछे भी संसार के मस्तक झुकते हैं।

शुभ जन्म और नाम–हज़रत जी के जन्म की प्रसिद्ध तारीख़ १२ रबीह-उल-अव्वल है, परन्तु यह मानी हुई बात है कि आप दोशंबा* के दिन पैदा हुए और दोशंबा ९ रबीह-उल-अव्वल, तदनुसार २० अप्रैल सन् ५७१ ईस्वी को है। आप के जन्म से पूर्व आप की माता को स्वप्न में दो जहान के सरदार के आने का दृश्य दिखाया गया। कई बातों से पता लगता है कि पितामहा ने आप का नाम

*सोमवार।

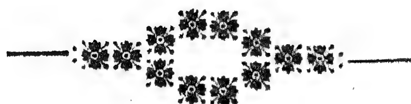
मुहम्मद (जी महाराज) और माता ने अहमद रखा। यह दोनों नाम स्वप्न के अनुसार थे। दोनों का वर्णन क़ुरान शरीफ में आया है। आप के दोनों नाम प्रामाणिक हदीसों में आप की पवित्र जिह्वा द्वारा सिद्ध हैं.................. आप के दोनों नाम मुहम्मद और अहमद, कविता में भी आए हैं; चाहे अधिक प्रसिद्ध नाम मुहम्मद (जी महाराज) ही था, आप अपने नाम के गुणों की मूर्ति थे। संसार में वह पुरुष जिस की सब से बढ़ कर प्रशंसा की गई, आप ही हैं। आप के सदाचार ने आप के चोटी के वैरियों से भी शोभा प्राप्त की है। इसलिए आप मुहम्मद कहलाए और सब से बढ़ कर हमद (ईश्वर के गुणगान) करने वाले भी आप ही थे। जितनी ईश्वर की बड़ाई आप ने की, संसार में अन्य किसी पुरुष ने नहीं की। यहां तक कि आप के प्रत्येक शिष्य के मुख से सर्व शक्तिमान् परमात्मा की प्रशंसा कम से कम चालीस बार एक दिन में निकलती है। इसलिए आप अहमद कहलाए।

विचित्र चिह्नों का प्रकट होना—आप के जन्म के साथ क्या २ विचित्र चिह्न संसार में प्रकट हुए ?

विस्तार पूर्वक बताने का यह स्थान नहीं। आप के संसार में आने के केवल एक चिह्न का वर्णन किया जाता है। इसी वर्ष जब आप उत्पन्न हुए, यमन के ईसाई शासक ने अपनी राजधानी मनआ़ नामक में एक उच्च कोटि का गिरजा बनवा कर यह दृढ़ निश्चय कर लिया कि ख़ाना काअ़बा को नष्ट-भ्रष्ट करके, अ़रब देशका शारीरिक और आत्मिक-केन्द्र इस गिरजे को बनाए। वास्तवमें यह तसलीस (बाप, बेटा, रूह-उल-कुद्दस) और तौहीद (एकता) का एक युद्ध था। अबरह एक बड़ा भारी दल लेकर जिस में कुच्छ हाथी भी थे, ख़ाना क़ाअ़बा को गिराने के विचार से चल पड़ा। जब मक्के से केवल तीन पड़ाव की दूरी पर रह गया तो वहां डेरा जमाया और कहला भेजा कि मेरा विचार केवल क़ाअ़बा को गिराने का है। इसी समय अब्दुल मतलब के कुछ ऊँट पकड़े गए। अब्दुल मतलब स्वयं अबरह के दर्बार में उपस्थित हुआ। इनकी आकृति और स्वरूप आदि का अबरह पर बड़ा प्रभाव पड़ा। उस ने पूछा, तेरी क्या विनती है? तो आप ने उत्तर दिया कि आप की सेना ने मेरे कुच्छ ऊँट पकड़ लिए हैं, वह छोड़ दिए जावें।

अबरह चकित हो कर कहने लगा, तुझे अपने ऊँटों की चिन्ता पड़ी है तुम ने मुझ से यह प्रार्थना क्यों नहीं की, कि मैं मक्के को न गिराऊँ ? आप ने उत्तर दिया, मैं ऊँटों का स्वामी हूं, इसलिए मुझे उनकी ही चिन्ता लगी है, काअ़बे का स्वामी काअ़बे की स्वयं चिन्ता कर लेगा। इस से पीछे क़ुरैश ने अपने आप को अबरह की सेना से टक्कर लेने के अयोग्य पाकर मक्के को खाली कर दिया और निकट की पहाड़ियों में डेरे लगा दिये। चलते हुए अब्दुल मतलब ने काअ़बे के पर्दों को पकड़ कर प्रार्थना की कि हे परमेश्वर ! यह तेरा घर है, हम इसकी रक्षा की सामर्थ्य अपने में नहीं पाते, अब तू ही इस की रक्षा कर। इतिहासकार कहते हैं कि उसी समय अबरह की सेना में चीचक (माता) की भयानक महामारी फूटी, जिस से इस की सेना का अधिकतर भाग नष्ट हो गया और शेष होश भुला कर भाग गए। क़ुरान शरीफ़ ने इस घटना का वर्णन सूरा फ़ील में किया है। यह चिह्न आप के जन्म के साथ ही दिखा दिया गया, ताकि ज्ञात हो जाए कि इस पवित्र गृह को कोई नष्ट नहीं कर सकता। यदि आप के जन्म

के साथ ईसाई मत को ऐसी पराजय खानी पड़ी तो फ़ारस के आतिश-कदह (हवन-स्थान) का बुझ जाना, यदि चिह्न के स्वरूप में प्रकट हुआ हो तो कौनसी बड़ी बात है; क्योंकि वास्तव में भावी इसी प्रकार थी कि आप के प्रकट होने के साथ प्रत्येक असत्य नष्ट हो जाए ।



प्रकट होने से पूर्व के हालात



"मैं तुम्हारे बीच इससे पहिले एक आयु व्यतीत कर चुका हूँ तो क्या तुम बुद्धि से काम नहीं लेते।"

(सूरत यूनस १६)

दूध पीने का समय—अरब निवासियों में यह प्रथा थी कि रईस और धनाढ्य लोग अपने अपने बच्चों को दूध पिलाने के लिये ग्रामों में भेज दिया करते थे। श्री जगत् गुरु मुहम्मद जी महाराज के जन्म पर उन की माता जी ने दो तीन दिन तक आप को दूध पिलाया। इसके पीछे दो तीन दिन अबु-लहब की दासी सूवीबा ने और इस के पश्चात् दूध पिलाने के लिए आप क़बीला बनी साअ़द की एक स्त्री हलीमा के सुपुर्द कर दिए गए। श्रीमती हलीमा साअ़दीआ ने आप को दो बर्ष तक दूध पिलाया। इस के पश्चात् वह श्रीमती आमिना के

पास बच्चे को लाए, परन्तु मक्के में महामारी के कारण आपने इनको फिर श्रीमती हलीमा ही के सुपुर्द कर दिया। छः वर्ष तक आप उन्हीं के पास रहे। इस के पीछे जल्दी ही आप की माता आप को साथ लेकर मदीने गईं। आप के जाने का कारण, अपने पति की क़बर का दर्शन करना था, जो मदीने में दफ़नाए हुए थे।

माता जी का देहान्त—वापिसी पर रास्ते में अबवा के स्थान पर श्रीमती आमिना चल बसीं और उसी स्थान पर उनकी क़बर बनी। इस छः वर्ष की आयु में आप माता के प्रेम से सदा के लिए वंचित हो गए और चाहे आप को अपने माता-पिता की सेवा का समय नहीं मिला, किन्तु आपने अपनी दूध पिलाने वाली माता और साथ दूध पीने वाली बहनों के साथ वही वर्ताव किया जो एक ही पेट से उत्पन्न सम्बन्धियों में होता है। एक बार श्रीमती हलीमा साअदिआ नबव्वत के काल में आप के पास आईं तो आप उठ कर खड़े हो गए और अपनी चादर इनके बैठने के लिए बिछा दी। और इसी प्रकार अपनी दूध-भगिनी और दूध-भ्राताओं, अपितु उस समस्त

जाति के साथ, जिस में से श्रीमती हलीमा साअ्दीआ थीं, अपूर्व उपकार का वर्ताव किया।

अबु-तालब की देख-रेख में—माता जी के देहावसान के पीछे आप के लालन-पालन और रक्षा का भार आप के दादा अब्दुल-मतलब ने अपने ज़िम्मे लिया, परन्तु दो ही वर्ष व्यतीत हुए थे कि वह भी संसार से चलते बने और आठ वर्ष की आयु में आप अपने चचा अबु-तालब की सुपुर्दगी में आ गए। छोटी अवस्था से ही आप में इतने गुण पाये जाते थे कि अबु-तालब को आप के साथ अत्यन्त प्रेम हो गया, और जिस किसी का आप के साथ वास्ता पड़ता, वही आप के साथ प्रेम करने लग जाता। इसलिये अबु-तालब आप को अपने पास ही सुलाते और बाहिर जाते तो साथ ले जाते। आप की आयु कोई बारह वर्ष के लगभग थी जब अबु तालब ने व्यापार के विचार से शाम देश की यात्रा की। क्योंकि श्री नबी जी, आप का वियोग सहन नहीं कर सकते थे, इसलिये आप भी साथ ही गए। बहीरा राहब के मिलाप की घटना इसी यात्रा में वर्णन की जाती है, परन्तु यह ठीक मालूम नहीं होती। इन यात्राओं के

अतिरिक्त, जो बाल्यावस्था में आप ने अबु-तालब के साथ कीं, अपने तौर पर भी आप व्यापारिक आवश्यकताओं के लिये यात्राएँ करते रहे। क्योंकि आप की सत्य-परायणता, खरापन और सद्व्यवहार के अतिरिक्त आप की व्यवहार-कुशलता की अत्यधिक प्रसिद्धि थी, इसलिये लोग व्यापार के लिए अपनी पूँजी आप के हवाले कर दिया करते थे और आपने इन्हीं व्यापारिक आवश्यकताओं के लिए शाम और बसरा के अतिरिक्त, यमन की यात्रा भी की। व्यापार के कार्य्य से पहिले आपने कुच्छ दिनों के लिए बकरियां चराने का काम भी किया। यह काम अरब के बड़े २ मान्यवर लोग भी कर लिया करते थे, क्योंकि भेड़, बकरी और ऊँट ही इनका धन थे। अयालीपन भेड़ों का हो, चाहे मनुष्यों का, नीच काम नहीं। हज़रत मरियम के पति यूसुफ़, बढ़ई का काम करते थे। यदि हज़रत ईसा ने भी बाल्यावस्था में यह काम किया हो तो यह उनकी मानहानि नहीं अपितु प्रतिष्ठा का कारण है।

फ़जार का युद्ध—सन् ५८० और ५६० ईस्वी

के मध्य काल में कुरैश और कैस के क़बीलों में वह प्रसिद्ध युद्ध हुआ, जो हरबे फ़ज़ार कहा जाता है, इसलिए कि वह हुरमत (मनाही) के महीनों में हुआ। इस युद्ध में रसूल अल्लाह भी सम्मिलित हुए। इस समय आप की आयु बीस वर्ष की थी, परन्तु ज्ञात होता है कि आप केवल अपने चचा आदि को तीर आदि पकड़ाते थे और आपने एक सैनिक की भांति युद्ध में भाग नहीं लिया।

हलफ़ल फ़ज़ूल—इस के पीछे ही आप उस प्रतिज्ञा में भी सम्मिलित हुए जो हलफ़ल फ़ज़ूल के नाम से प्रसिद्ध है। इस प्रतिज्ञा पत्र के व्यक्ति यह प्रतिज्ञा किया करते थे कि पथिकों की रक्षा और निर्धनों की सहायता तथा दुःखियों की मदद किया करेंगे और जब तक अत्याचार का बदला न ले लिया जाए, चाहे अत्याचारी कोई भी हो, उस समय तक विश्राम नहीं करेंगे। एक ऐसे देश में, जहां अत्याचार के निराकरण का कोई प्रबन्ध नहीं था, यह प्रतिज्ञापत्र अत्यधिक लाभदायक था और जगत् गुरु श्री मुहम्मद जी महाराज का सम्मिलित होना अपितु आप के वंश बनी हाशम का वास्तविक

प्रवर्त्तक होना बताता है कि आप की स्वाभाविक रुचि आरम्भ से ही किस प्रकार अत्याचार के विरुद्ध और अनाथों की सहायता की ओर थी ।

अलअमीन—इस समय में आप की ईमानदारी सत्य-परायणता और सद्व्यवहार को मक्के में प्रत्येक बच्चे से लेकर बूढ़े तक मानते थे, यहां तक कि आप 'अमीन' के नाम से प्रसिद्ध हो चुके थे । अमीन का अर्थ केवल यही नहीं था कि आप रुपये आदि की धरोहर को ठीक ठीक वापिस कर देते थे, अपितु यह कि हर प्रकार के सद्गुण और सद्व्यवहार आप में एकत्रित थे। जिन लोगों ने उस काल में आप के साथ किसी प्रकार का व्यवहार किया, वह आप की व्यवहार कुशलता के गुण आयु पर्य्यन्त गाते रहे, जैसा कि इस प्रकार की कई घटनाओं का वर्णन हदीसों में है ।

हजरे अस्वद का रखना—इस समय खाना क़ाबा की इमारत को नए सिरे से बनवाने की आवश्यकता पड़ी । इसलिए हर प्रकार की सामग्री एकत्रित की गई और सारे क़ुरैश ने मिल कर

निर्माण का कार्य आरम्भ किया और भिन्न भिन्न क़बीलों ने अलग २ भाग ले लिए, ताकि हर एक इस बरकत में से भाग प्राप्त कर सके। जब हजरे असवद के गाड़ने का समय आया, तो भयानक झगड़ा खड़ा हो गया। प्रत्येक की यह इच्छा थी कि यह सेवा वही सम्पन्न करे और इसका निपटारा सिवाए भयानक युद्ध के, जो कई क़बीलों की सफ़ाई कर देता, न होता। अन्त में एक वृद्ध पुरुष ने सब क़बीलों को इस बात के लिए राज़ी कर लिया कि अगले दिन प्रातःकाल जो व्यक्ति सबसे प्रथम हरम में आवे, वही न्यायकर्त्ता माना जावे। इसलिए अगले दिन सबसे पहिले आने वाला वह मनुष्य था जिस को देखते ही क़बीलों के माननीय पुरुष, जो वहां एकत्रित थे, इकदम कह उठे..................."यह अमीन आ गया।" आप चाहते तो स्वयं ही इस कार्य्य को पूर्ण कर देते, किन्तु आप ने इसके स्थान पर यह विधि की कि एक पक्की सी चादर लेकर, इस में हजरे अस्वद को उठा कर अपने हाथ से रख दिया और क़बीलों के माननीय व्यक्तियों ने चारों ओर से

चादर के किनारों को पकड़ कर उठाया और इस प्रकार हजरे अस्वद को उस के स्थान पर रख दिया। इस सुन्दर विधि से एक भयानक युद्ध रुक गया। इस समय आप की आयु ३५ वर्ष की थी।

हज़रत ख़दीजा के साथ विवाह—आप की धार्मिकता और सत्य-परायणता की प्रसिद्धी के कारण एक माननीया देवी श्रीमती ख़दीजा नामी ने, जो विधवा थीं, और जिन के सद्व्यवहार के कारण, मूर्खता के समय में इनका उपनाम "ताहिरा" पड़ गया था, श्री मुहम्मद जी महाराज के पास संदेश भेजा कि आप उसके माल के साथ व्यापार करें। इस व्यापार में श्रीमती ख़दीजा ने अत्यधिक लाभ उठाया। साथ ही आप के शुभ स्वभाव पर इतनी मोहित हो गईं कि आप को विवाह का संदेश भी स्वयं ही भेज दिया। इस समय आप की आयु पच्चीस वर्ष की थी और श्रीमती ख़दीजा की चालीस वर्ष। वह अत्यन्त धनवान् स्त्री थीं। इस नकाह से आप की चार पुत्रियां और दो पुत्र रत्न उत्पन्न हुए। आप का सब से ज्येष्ठ सुपुत्र क़ासम

था जिस के कारण आप का उपनाम अबु-क़ासम हुआ, परन्तु वह दो वर्ष की आयु में ही चल बसा। आप की सब से बड़ी सुपुत्री ज़ैनब थीं, जिनका विवाह अबु-उलआस के साथ हुआ। इस से छोटी रुक़ीआ थीं, जिनका विवाहहज़रत उस्मान से हुआ और बदर के युद्ध की विजय के दिन उसका देहान्त हो गया। इनकी रुग्णावस्था के कारण आप ने हज़रत उस्मान को मदीने में छोड़ा था। इन से छोटी उम्मकलसूम थीं, जो रुक़ीआ की मृत्यु के पश्चात्, हज़रत उस्मान के नकाह में आईं। इन दोनों सुपुत्रियों का विवाह, पहिले अबु-लहब के पुत्रों से हुआ था। सब से छोटी हज़रत फ़ातमा तुज़हरा थीं, जिनकी सन्तान से सय्यदों की वंश परम्परा चली। हज़रत फ़ातमा की शादी हज़रत अ़ली के साथ हुई। श्रीमती खदीजा की सन्तान में से सब से छोटा एक और पुत्र था। वह भी छोटी अवस्था ही में चल बसा और सिवाय सय्यदा के, जो आप की मृत्यु के छः मास पीछे चल बसी, आप की समस्त संतान आप के जीते जी ही स्वर्गवास हो गई। इस के पीछे, आप के गृह में सिवाए इब्राहीम के, जो वह

भी छोटी अवस्था में ही मृत्यु को प्राप्त हो गए, अन्य कोई सन्तान नहीं हुई। श्रीमती ख़दीजा को आप के साथ और आप को श्रीमती ख़दीजा के साथ अत्यन्त प्रेम था। बाद के समय में आप सदा इसका वर्णन प्रेम के साथ करते। यह क्यों? आप के इस हार्दिक भेद को श्रीमती आइशा सदीक़ा ने हम तक पहुंचाया है। एक बार उन्होंने ऐसे ही वर्णन में बिनती की, कि ऐ रसूल अल्लाह! क्या अल्लाह तआ़ला ने आप को उस से अच्छी स्त्री नहीं दी? वह तो वृद्धा थीं। तो आप ने फ़रमाया "उसने उस समय मुझे स्वीकार किया जब लोग मुझे रद्द कर रहे थे।" संक्षेप में यह कि आप ख़दीजा के स्वच्छ सदाचार पर मोहित थे। ख़दीजा का धन आप ने दिल खोल कर परमात्मा के नाम पर व्यय किया और कभी भगवान् के नाम पर धन खर्च करने की सिफ़ारिश को आपने अस्वीकार नहीं किया। हज़रत ज़ैद को, हज़रत ख़दीजा ने ही मूल्य लेकर आप को दिया था।

ज़ब आप को नबव्वत की पदवी पर नियत किया गया और आप इस भारी बोझ के संबंध

में चिन्ता में थे कि मैं इस के अत्यधिक उत्तरदायित्व में किस प्रकार पूरा उतर सकूँगा, तो हज़रत ख़दीजा ने आप के सहमे हुए हृदय को जिन शब्दों से सान्त्वना दी वह बताते हैं कि आप के स्वच्छ सदाचार और मनुष्य मात्र की पीड़ा में सम्मिलित होने ने कितना गहरा प्रभाव श्रीमती ख़दीजा के हृदय पर डाल रखा था। कहने लगीं, 'ख़ुदा की क़सम अल्लाह आप को कभी भी असफल रख कर अपमानित नहीं करेगा। आप अपने सम्बन्धियों और पड़ोसियों के साथ प्रेम करते हो निर्बलों का बोझ उठाते हो, जो वस्तुएँ गुम हो चुकीं हैं उनको ढूँढते हो और पाते हो, अतिथि सेवा करते हो और दुर्घटनाओं में सत्य की सहायता करते हो।' श्रीमती ख़दीजा का आप पर सब कुछ न्योछावर कर देना और आप के सदाचार पर इतना मोहित हो जाना और फिर सब से पहिले आप पर ईमान लाना, श्री जगत् गुरु मुहम्मद जी महाराज ·········· ·········· के उच्च स्वभाव का एक ऐसा दृश्य है जिसके समस्त शत्रु को भी मानना पड़ता है कि आप के दावे की नींव झूठ पर नहीं थी, क्योंकि

असत्यवादी के विचार, गुप्त बातों के जानने वालों से छिपे नहीं रह सकते और पत्नि से बढ़ कर पति का भेद जानने वाला कोई हो नहीं सकता।

आप के सुन्दर गुण–एक इस उत्तम स्त्री पर ही बस नहीं, जिस किसी का भी वास्ता किसी प्रकारसे आप के साथ पड़ा, वही आप के सुन्दर गुणों के कारण उस समय आप के लिये प्राण देने वाला प्रेमी बन गया। ज़ैद एक दास था, जिस को आप ने स्वतन्त्र किया। ज़ैद का पिता ढूँढता २ मक्के पहुंचा और आप के आगे विनती की कि उस के पुत्र को घर जाने की आज्ञा दी जावे। समस्त संसार पर दया करनेवाले का दयालु हृदय कहां सहन कर सकता था कि पुत्र को पिता से छीन कर अपने पास रखे, परन्तु प्रेम और दया की यह भी मांग थी कि उसको बलात् अपने से अलग न किया जावे। आपने जिस के साथ मित्रता की, उस को इसी प्रकार अन्त तक निभाया। अस्तु! आप ने ज़ैद के पिता से कहा कि ज़ैद यदि आप के साथ जाना चाहे तो मैं उस को नहीं रोकता। पिता प्रसन्न हुआ कि और क्या चाहिये, किन्तु यह नहीं जानता

था कि खैरुल-बशर (संसार का शुभचिन्तक) की दया पिता के मोह से अधिक बलवान् है और ज़ैद चाहे अब दासता से स्वतन्त्र कर दिया गया है, परन्तु आप के सुन्दर गुणों का दास हो चुका था। जब ज़ैद को उसके पिता ने चलने के लिए कहा तो उसने उत्तर दिया कि मैं श्री जगत् गुरु मुहम्मद जी महाराज के पास ही रहूंगा।

हज़रत अबु बकर सदीक़ की मित्रता तो आप के साथ प्रसिद्ध ही है। अबु-तालब ने, जिन कष्टों और मुसीबतों में आप का साथ दिया, वह केवल आप के शुभ गुणों के कारण ही था। अबु-तालब ने अपने बाप दादा के धर्म्म पर स्थित रहते हुए भी समस्त क़ुरैश की शत्रुता को आसान जाना, परन्तु ऐसी उच्च पदवी और पवित्र गुणों वाले मनुष्य का साथ छोड़ने को परम नीचता समझा, जैसा कि आप की कविता के कतिपय पद इस हार्दिकभाव को बताते हैं कि वह क्यों आप के साथ इतना प्रेम करते थे :—

" तुम पर शोक है, किसी जाति ने अपने नेता को नहीं छोड़ा (मानों इस प्रश्न का उत्तर दिया

है कि तुम मुझे कहते हो कि मुहम्मद रसूल अल्लाह...
..............का साथ छोड़ दें) और नेता भी वह जो समस्त रक्षा करने वाली वस्तुओं की खूब रक्षा करता है और वह न अधिक बोलने वाला है और न ही दीन है कि कार्य दूसरों के हवाले कर दे; वह दाता है जिस के मुखार्विन्द के मार्ग से वर्षा मांगी जाती है, वह अनाथों का आश्रयदाता और विधवा स्त्रियों का सहारा है।"

आप के साथियों में उच्च गुण—और न केवल यह कि आप के उत्तम गुणों पर आप के सभी मित्र उस समय मोहित थे, अपितु यह भी ज्ञात होता है कि जितने लोगों का आप के साथ वास्ता पड़ा, वह सारेके सारे उत्तम, सदाचारी और उच्च पदवी के लोग थे। हकीम-बिन-हज़ाम, जो कुरैश के अत्यन्त माननीय धनाढ्य व्यक्ति थे और मक्के की विजय के पश्चात् ईमान लाए, आप के चुने हुए सज्जनों में से थे। इसी प्रकार ज़माद-बिन-साअ़लबा। संक्षेप यह, कि नबुव्वत से पहिले आप के सदाचार इतने उच्च स्थान पर पहुंचे हुए प्रतीत होते हैं कि जिस किसी ने

आप के साथ सम्बन्ध पैदा किया वह भी एक उच्च स्थान पर पहुँच गया।

एक अत्यन्त ही प्रकाशमान् उदाहरण आप के उच्च सदाचार का निर्धनों, अनाथों, निस्सहायों और विधवाओं के साथ सहानुभूति और उन पर कृपा-दृष्टि रखना था, जिस के सम्बन्ध में वह सब लोग एक स्वर हैं, जिन को आपके साथ वास्ता पड़ा। अभी ही श्रीमती खदीजा जी की साक्षी लिखी जा चुकी है जो फ़रमाती हैं कि परमात्मा आप को नष्ट नहीं करेगा; इसलिये कि आप निस्सहायों और निर्धनों के सहायक, दीनों और अनाथों के रक्षक, अपने और पराए का दुःख बांटने वाले हो। अबु-तालब ने भी यही गवाही दी है कि आप अनाथों के रक्षक और विधवा स्त्रियों के सहारा थे। हलफ़ल फ़ज़ूल में आप के सम्मिलित होने का बड़ा कारण भी दुःखियों की सहायता था। संक्षेप में, यह एक गुण था, जो जन्म दिन से ही आप के भीतर डाल दिया गया कि निर्धनों, निस्सहायों, अनाथों और विधवाओं के आप सहायक हों। क़ुरान करीम की शिक्षा पर विचार करो तो धर्म माना ही इसको गया है कि अनाथ

और दीनों पर कृपादृष्टि रखी जाए। जो मनुष्य, अनाथ को धिक्कारता है, और दीन को अन्न ग्रहण करने की प्रेरणा नहीं करता, उस को दीन अर्थात् धर्म्म को झुठलाने वाला बताया गया है* । सबसे ऊँची घाटी जिस पर चढ़ कर मनुष्य, मनुष्यत्व की वास्तविक प्रतिष्ठा को प्राप्त कर सकता है, वह यही है कि अनाथ और धूली में लतपत दीन की पूछताछ की जावे×। जो अनाथ का आदर नहीं करते, उनको अप्रतिष्ठा की सूचना दी। जाति के विनाश का कारण यह बताया कि वह अनाथों पर कृपा और दया करना एवं दीनों की सहायता करना+ छोड़ते हैं। क़ुरान करीम इस प्रकार की शिक्षा के साथ भरा पड़ा है और इस का प्रत्येक शब्द बताता है कि निराश्रय और दुःखियों के लिये वह कौनसी पीड़ा थी जो आप के हृदय में छिपी हुई थी।

आप पर आकाश वाणी होने से पहिले के जीवन की घटनाओं से साफ़ प्रकट होता है कि आप बालकपन में उच्च दर्जे के हयावाले, शर्मीले और

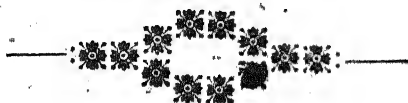
---

* अलमाऊन । × अलबलद १३–१६।
+अलफ़जर १७–१८।

सहनशील व्यक्ति थे । अधिक खेलने-कूदने का आप का स्वभाव नहीं था । अबु-तालब ने आप का वर्णन करते हुए हज़रत अब्बास को कहा कि मैंने आप से कभी भी असत्य, हँसी-मखौल और बेवकूफ़ी की बात नहीं सुनी और न ही बच्चोंके साथ रहते देखा है । उस काल में अरब देश का साधारण विनोद युद्ध था, परन्तु आप को इस के साथ कुछ भी आसक्ति नहीं थी । यदि आप हरब-फ़जार में सम्मिलित भी हुए तो अपने चचा आदिको तीर पकड़ाने आदिका काम करते थे । देश के वहमों और प्रमादिकों का आप के पवित्र हृदय में कोई प्रवेश नहीं था और यह सीनह आने सत्य है कि आप का हृदय बाल्यावस्था से ही प्रत्येक प्रकार की मैल से साफ़ कर दिया गया था और वह निर्मल दृश्य जिसमें फ़रिश्ते आप के हृदय को साफ़ करते हुए दिखाए गए हैं, इसी सत्यता को प्रकट करने के लिए था कि आप का हृदय हर प्रकार के मैल से साफ है । मूर्ति-पूजा से आप को बालकपन ही से घृणा थी । एक बार किसी सभा में लातो अज़ा (दो मूर्तियां) के वर्णन पर आप ने कहा कि मुझे जितनी घृणा इन

चीज़ों से है अन्य किसी वस्तु से नहीं। क़ुफ़र की रस्मों में भी आप कभी सम्मिलित नहीं होते थे, यहां तक कि आप ने वह भोजन करने से भी इन्कार कर दिया जो मूर्तियों के नाम पर चढ़ाया गया था।

मनुष्यमात्र की गिरी हुई दशा और असत्य पथ की चाल देख कर आप का हृदय दुःखित होता था और आप के भीतर एक जोश था कि किसी प्रकार मनुष्यमात्र सीधे मार्ग पर आवें। आप हरा की कन्दरा में एकान्त बैठ कर परमात्मा की सृष्टि के लिए रोते थे और अपनी हार्दिक-पीड़ा प्रकट करते थे।



७–आकाश वाणी का होना



" अपने परमात्मा के नाम से पढ़, जिसने उत्पन्न किया है। मनुष्य को एक लोथड़े से उत्पन्न किया। पढ़, तेरा परमात्मा सबसे अधिक प्रतिष्ठा वाला है, जिसने लेखनी द्वारा विद्या प्रदान की और मनुष्य को वह कुछ सिखाया, जो वह नहीं जानता था।"

अल अलक़ (१–५)

चालीस वर्ष की आयु तक पहुंचने से पहिले ही हज़रत मुहम्मद साहिब जी की रुचि एकान्तवास की ओर अधिक हो गई और वह कई २ दिन हरा की कन्दरा में ईश्वर भक्ति में व्यतीत करने लगे। इन दिनों में आपको अत्यधिक सच्चे स्वप्न आते। जो स्वप्न आता, बहुत जल्दी पूरा हो जाता और सोलह आने ठीक उतरता।

इन्हीं दिनों में आप रमज़ान के मास में हरा की कन्दरा में भगवद्भक्ति में संलग्न थे कि एक

पवित्र* रात्रि को हज़रत जबराईल आप के सामने आए और कहने लगे, "पढ़!", आप ने उत्तर दिया, "मैं तो पढ़ना नहीं जानता।" इस पर हज़रत जबराईल ने आप को हृदयके साथ लगाकर अच्छी तरह से दबाया और फिर वही शब्द दोहराए। हज़रत साहिब ने फिर वही उत्तर दिया। फिर दबाया तो वही उत्तर मिला। बात क्या तीसरी बार के पश्चात् जबराईल ने वह पांच आयतें पढ़ीं जो इस अध्याय के प्रारम्भ में दी गई हैं। इनमें एक ओर तो यह बताया कि निस्सन्देह आप पढ़ना नहीं जानते, परन्तु आप ईश्वर के नाम की सहायता से पढ़ें। जो काम आप नहीं कर सकते, सृष्टि-कर्त्ता की सहायता उस को सरल कर देगी और दूसरी ओर आप की उच्च प्रतिष्ठा और आप के द्वारा विद्या प्रचार का वर्णन किया।

यह प्रथम दिवस था, जब नबव्वत का कठिन

---

*यह रमज़ान की पच्चीसवीं रात्रि थी और आप की आयु का इकतालीसवां वर्ष प्रारम्भ हो चुका था। सन् ६१० ई० था। यही रात्रि "लैलातुल-क़दर" कहलाती है और रमज़ान की पच्चीसवीं, सत्ताईसवीं या उनत्तीसवीं रात्रि होती है।

कार्य्य आप के जिम्मे लगाया गया और बताया गया कि जिस मार्ग की खोज में आप थे और जिस के कारण हैरान परेशान हुए २ थे वह अन्त में आप पर प्रकट कर दिया गया है। परन्तु साथ ही यह भी स्पष्ट कर दिया गया कि यह भार आप को उठाना ही पड़ेगा और आप ही प्राणीमात्र को शिक्षा देने का कारण बनेंगे। मनुष्य बड़ा ही निर्बल है। एक छोटा सा उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य्य इस पर डाला जाए और इसके साथ साधन भी प्राप्त हों तो भी यह कांप जाता है। सारे संसार के सुधार का भार तो बड़ा भारी बोझ था। हज़रत मूसा पर जब केवल एक जाति की शिक्षा का भार डाला गया तो वह अकेले अपने आप को इस भार को उठाने के अयोग्य देख कर पुकार उठे कि 'कोई भार बांटने वाला मेरे साथ नियत करो। मैं अकेला यह सारा भार नहीं उठा सकता।" परन्तु अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद साहिब जी के ऊपर सारे संसार को सीधे मार्ग पर डालने का भार डाला जाता है और भयानक से भयानक अंधेरियों में से निकाल कर प्रकाश में लाने का कार्य्य आप के सुपुर्द कर दिया जाता है परन्तु

आप के हृदय में इतनी शक्ति है कि इस पर भी कोई साथी नहीं माँगते और अकेले ही इस भार को उठाने के लिए कटिबद्ध हो जाते हैं।

परन्तु आकाश बाणी का ज़ोर के साथ उतरना एक ऐसी बात है जो साधारण मनुष्यों के अनुभव से बाहर है। जब आप ईश्वरीय बाणी को प्राप्त करने के अभ्यासी हो गए तो इसके पीछे भी बाणी के ज़ोर से आप की ऐसी दशा हो जाती थी कि सख़्त सर्दी के दिनों में भी आप को पसीना आ जाता और शरीर इतना भारी हो जाता जो एक सुहाबी कहते हैं कि इस अवस्था में किसी कारण से आप की रान मेरे घुटने पर थी तो मुझे भय लगा कि कहीं मैं भार से पीसा न जाऊँ। आकाश बाणीको प्राप्त करने के लिये इस संसार से पूर्णतया सम्बन्ध तोड़ लेना आवश्यक है और यह सम्बन्ध तब तक टूट नहीं जाता, जब तक मनुष्य पूरी शक्ति से पकड़ा नहीं जाता। इसलिये आकाश बाणी के ज़ोर के सब से पहिले अनुभव से आप कांप गए। दूसरी ओर यह भी डर था कि इतने भारी और उच्च उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य्य को किस

प्रकार निभा सकेंगे। एक ओर मानुषिक निर्बलता और निरभिमानता और दूसरी ओर कार्यकी वह उच्चता कि इतना बड़ा कार्य इससे पूर्व किसी मनुष्य के सुपुर्द नहीं हुआ था, कांपते कांपते घर पहुंचे, आप के हाथ-पैर ठण्डे हो गए, इस वास्ते घर पहुंचते ही हज़रत खदीजा को आज्ञा की कि मुझे कपड़े से ढांप दो।

थोड़े से समय में हृदय का भय और कपकपी जाती रही और आपने हज़रत खदीजाके प्रति इस सारी घटना का वर्णन किया। इस देवी ने जिस के हृदय पर रसूल अल्लाह की सत्यता का गहरा प्रभाव था, इस समय आप को नितान्त सत्य शब्दों में धैर्य्य दिया और कहा, "सृष्टि-कर्त्ता भगवान् कभी भी आप को ऐसा शर्मिंदा और अपमानित नहीं करेगा कि इस कार्य्य में, जो उसने आप के सुपुर्द किया है, आप को असफलता का मुख देखना पड़े।' इसका कारण यह बताया कि आप अपने सगे-संबंधियों और प्रेमियों के साथ उच्च कोटि का व्यवहार करते हैं, निराश्रय और निर्धनों के सहायक हैं, अतिथि सेवा करने

वाले और दुःखों में सचाई के सहायक हैं। जिस मनुष्य में इतने गुण हों, वह कभी अकृत्कार्य्य नहीं होता।

वरक़ा-बिन-नौफ़ल जिनका वर्णन ऊपर हो चुका है, हज़रत खदीजा के चचेरे-भाई (चचा का पुत्र) थे। मूर्ति-पूजा से घृणा करके सत्य धर्म्म की खोज में निकल पड़े और अन्त में उन्होंने ईसाई मत धारण कर लिया। क्योंकि उस समय उनको अन्य कोई भी ऐसा मत दृष्टिगोचर न हुआ जिसमें इतना भी सत्य हो जितना कि ईसाई मत में था। हज़रत खदीजा अपने इस संबंधी की हार्दिक तड़प से परिचित थीं और जानती थीं कि वह हृदय से सत्यधर्म्म की खोज में है। और सम्भव है कि वरक़ा ने कभी बातों-बातों में ही अन्तिम पैग़म्बर के आने का वर्णन भी किया हो। क्योंकि हज़रत ईसा ने अपने पीछे अन्य धैर्य्य देने वाले के आने का समाचार दिया था। अतएव जब हज़रत खदीजा को पता लगा कि हज़रत मुहम्मद साहिब को यह उच्च पदवी दी गई है तो आप इकदम हज़रत साहिब को वरक़ा के पास ले गईं, क्योंकि वरक़ा उस समय बहुत वृद्ध और दृष्टिहीन होने के कारण चलने-फिरने में असमर्थ थे। जब वरक़ा

ने हज़रत से यह सुना कि किस प्रकार आप को आकाश वाणी हुई है और कौनसा सन्देश आप के सुपुर्द हुआ है, तो वह इकदम पुकार उठे, "यह वह भेद देने वाला फरिश्ता है जो अल्लाह ने मूसा पर उतारा था।" इसी में ही मूसा वाली भविष्य-वाणी की ओर भी संकेत कर दिया। फिर उन्होंने इच्छा प्रकट की कि शोक! मैं भी उस समय जीवित होता, जब आप की जाति आप को निकाल देती। इस पर हजरत मुहम्मद साहिब ने हैरान होकर पूछा कि क्या मुझे निकाल देंगे? उन्होंने उत्तर दिया, 'हां! प्रत्येक पैग़म्बर के साथ इसी प्रकार होता रहा है।" इस से थोड़ा काल पश्चात् ही वरक़ा की मृत्यु हो गई। इसी भेंट में ईमान के प्रकट करने के कारण वरक़ा को सुहाबा में सम्मिलित किया गया है*।

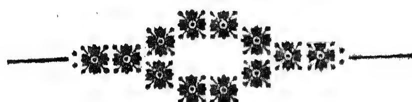
*जिन लोगों ने यह विचार किया है कि आप वरक़ा के पास इसलिए गए थे कि उससे पता करें कि यह सन्देश कैसा है? उनको बड़ा भारी भ्रम हुआ है। पैग़म्बरों को पहिले दिन से ही अपनी आकाश वाणी के परमात्मा की ओर से होने का पूर्ण निश्चय होता है। आप को एक क्षण के लिये भी सन्देह नहीं हुआ कि यह परमात्मा की ओर से नहीं।

प्रथम सन्देश के पीछे कुच्छ काल तक आकाश-वाणी का आना रुक गया। कई लोगों ने इस समय को बड़ा लम्बा कहा है और अढ़ाई-तीन वर्ष की मुद्दत बताई है; परन्तु जिस प्रकार कि आगे प्रकट होगा घटनाएँ इसके विरुद्ध हैं; और वह काल जिसको 'आकाश-वाणी के रुकने' का नाम दिया जाता है, थोड़ा सा ही समय था। हज़रत इबन-अब्बास की कथा में एक शब्द आता है जिसका अर्थ है कि आकाश-वाणी कुच्छ ही दिन रुकी थी। ऐतिहासिक घटनाएँ भी इसी बात की पुष्टि करती हैं। और जो यह बात एक कथा में आती है कि वाणी के रुकने के काल में पैग़म्बर साहिब ऊँचे पर्वतों के शिखरों पर चले जाते थे कि अपने आप को नीचे फैंक दें, यह कथा भी सत्य नहीं। इसका वर्णन करने वाले ज़हिरी जी हैं जो ताबऐन में से थे और जिन्होंने हज़रत मुहम्मद साहिब जी के दर्शन नहीं किए; न ही वह किसी दर्शन करने वाले का नाम बताते हैं। और कल्पना करो किसी ने देखा भी हो कि आप पहाड़ पर जाते हैं तो यह साधारण घटना है। आप हरा की कन्दरा में जाते ही थे और इसका तात्पर्य्य

एकान्तवास और अन्तर्धान होना था । आप को पहाड़ पर जाता देख कर यह विचार कर लेना कि आप का विचार अपने आप को पहाड़ पर से गिराने का था, नितान्त असत्य विचार है । आकाश-वाणी के रुक जाने में भी परमात्मा की हिकमत थी । वाणी का जोर इतना अधिक था कि उस के शीघ्र ही दूसरी बार आने पर शारीरिक शक्ति उसका मुकाबला न कर सकती । अतः ईश्वरीय इच्छा से ही यह आगे पर डाल दी गई । जब कुच्छ काल व्यतीत हो जाने के पश्चात्, जो छः मास से अधिक नहीं हो सकता, दूसरी बार आप पर आकाश-वाणी का प्रकाश प्रकट हुआ तो आप की फिर पहिली ही तरह की दशा हुई । चांहे पहिले की तरह का डर नहीं था, परन्तु फिर भी उसी प्रकार सहमे हुए घर आए और हजरत खदीजा से कहा कि कपड़ा डाल दो । पहिली बार यदि स्वयं पढ़ने की आज्ञा थी तो अब दूसरों को पढ़ाने का आदेश भी आ गया :—

"हे पैग़म्बरी की पोशाक धारण करने वाले ! उठ और लोगों को डरा !"

एकान्त में बैठने का समय व्यतीत हो गया, एकान्त में से निकल कर सामने आए, सत्य का सन्देश सुनाया और एक सत्यवादी समुदाय आप के आस-पास इकट्ठा होना प्रारम्भ हो गया।



८–पहिले भरोसा लानेवाले



और पहिले (भरोसा लाने वाले) सबसे आगे ही हैं और वही समीपवर्ती हैं।

(अलवाक़िआ १०–११)

श्री जगत् गुरु पैग़म्बर साहिब पर सबसे पहिले भरोसा लाने वाली आप की माननीया सुपत्नी हज़रत ख़दीजा जी थीं। आप के हृदय में एक क्षण के लिये भी यह सन्देह उत्पन्न नहीं हुआ कि आप अपने दाअवे में सच्चे नहीं। अपितु कष्ट की घड़ियों में आप सर्वदा उनको तसल्ली देती रहीं। इस पवित्र देवी से अधिक न अन्य कोई मनुष्य नबी करीम के भेदों को जानता था और न ही कोई जान सकता था। पन्द्रह वर्ष व्यतीत हो चुके थे कि जब आप ने हज़रत मुहम्मद साहिब जी के साथ पत्नीवाला सम्बन्ध जोड़ा और यदि विवाह से पहिले हज़रत के शुभ गुणों ने जिनको उन्होंने एक पराए मनुष्य की दृष्टि से देखा

था, आप के हृदय में घर कर लिया था, तो विवाह से पीछे जितना अधिक वास्ता आप को उनके साथ पड़ा, उतना ही वह विचार गहरा होता चला गया। यहां तक कि जब हज़रत मुहम्मद साहिब पर पहिली बार आकाश-वाणी उतरी और आप भयभीत थे कि किस प्रकार इस उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य्य को निभा सकेंगे, तो उस समय इस सदाचारिणी देवी ने अपने हृदय की साक्षी उपस्थित की कि मुहम्मद रसूल अल्लाह जैसा सज्जन और प्राणीमात्र के साथ सहानुभूति रखने वाला मनुष्य कभी वृथा नहीं जा सकता, कभी अकृत्कार्य्य नहीं रह सकता। वह आप के आन्तरिक भावों को भली प्रकार जानती थीं और पत्नी से बढ कर पति के आन्तरिक भेदों को अन्य कौन जान सकता है? परन्तु इस पर भी वह आप की सत्यता पर इतना निश्चय रखती हैं कि साफ़ कह देती हैं कि ऐसा सत्यवक्ता और प्राणीमात्रका प्रेमी कभी अपने कार्य्य में असफल नहीं हो सकता।

इस से पीछे आप उनको वरक़ा के पास ले जाती हैं। वरक़ा इस समय मृत्यु के समीप ही प्रतीत होते हैं, क्योंकि नबी होने का दाअ़्वा करने से पहिले

ही उनकी मृत्यु हो जाती है। चाहे पैगम्बर साहिबको अभी नबी होने का उपदेश करने की आज्ञा नहीं हुई थी, तो भी वरका आप पर ईमान लाये अर्थात् आप के सच्चे रसूल होने की साक्षी दी। और चाहे उनको अवसर नहीं मिला तो भी वह पहिले भरोसा लाने वालों में से हैं।

इसके अनन्तर हजरत अबु-बकर हैं। आप मक्के के प्रसिद्ध पुरुषों में से थे। धनाढ्य व्यापारी होने के साथ ही आप परले दर्जे के दानवीर थे और बड़े बुद्धिमान् थे। हर मन प्यारे भी बहुत थे। आकाश-वाणी होने से पहिले हजरत के साथ बड़ा मित्रभाव का सम्बन्ध रखते थे। रसूल अल्लाह को मानने में आप को जरा भी झिझक नहीं हुई, अपितु सुना और झटपट ईमान ले आए (भरोसा करने वाले) पुरुषों में पहिले मोमन हुए और आपका नाम सदीक रखा गया।

हजरत अली, अबु-तालब के सुपुत्र थे, जिनकी देख-रेख में रसूल अल्लाह आठ वर्ष की आयु से पले थे। हजरत अली बाल्यावस्था से हजरत के साथ रहे थे। वह भी सबसे पहिले ईमान लाने वालों में से हैं। आयु की दृष्टि से वह अभी बालक ही थे।

जैद बिन हारस हजरत द्वारा स्वतन्त्र किए हुए दास थे और जो प्रेम सम्बन्ध इनको आपके साथ था उसका वर्णन हो चुका है। इन्हों ने अपने पिता के साथ स्वदेश जाना स्वीकार न किया, और हजरत के साथ रहने को विशेषता दी। यह भी प्रथम धर्म्म धारियों में से थे।

हजरत खदीजा, अबु-बकर, अली और जैद, चारों ही आप के सब से बढ़ कर भेद जानने वाले और सब से निकटस्थ थे और आप के गुणों और सत्यता पर इतना विश्वास रखते थे कि नबीपन के उच्च दाअवे पर इन में से किसी को यह भ्रम भी नहीं पड़ा कि आप ने खुदा के आगे झूट बोला है। यह इस वास्ते कि वह आप की सत्यता और बड़ाई को इस से बहुत ऊंचा मानते थे। दाअवा सुनते ही उनके हृदयों ने साक्षी दी कि जिस मनुष्य ने सारी आयु किसी मनुष्य तक के आगे झूट नहीं बोला, वह खुदा के आगे किस प्रकार झूट बोल सकता है। यह आप के आचरण के गुह्य से भी गुह्य भेदों के जानने वाले थे और जितनी किसी को अधिक समीपता आप के साथ प्राप्त थी,

उतना ही अधिक वह आप के उच्च आचरण का प्रेमी बना और उतनी ही तीव्रता उसने आप पर भरोसा लाने में दिखाई। आप के जीवन की यह बड़ाई ऐसी है कि म्योर और स्प्रिङ्गर को भी यह मानना पड़ा है कि आप का दाअ़्वा सत्य के आधार पर था। यदि आपके आचरण और हालात में असत्य का अंश होता तो आप पर सबसे अधिक सन्देह वही लोग करते, जो सबसे अधिक आप के निकटस्थ थे। परन्तु सब से बढ़ कर वही आप की सत्यता के प्रेमी बने।

हज़रत अबु-बक्र स्वयं इस्लाम में प्रविष्ट होते ही दूसरों को इस दैवी वरदान से भरपूर करनेके परिश्रम में लग गए और प्रारम्भ में ही आप के द्वारा ऐसे २ लोगों ने मुसलमानी मत को धारण किया कि जिनका नाम आज मुसलमानों में ही नहीं, अपितु संसार के इतिहास में प्रकाशित हो रहा है। इनमें से हज़रत उसमान बिन अफ़्फ़ान, हज़रत ज़ुबैर बिन अलअ़व्वाम, हज़रत अब्दुल रहिमान बिन औफ़, हज़रत साअ़द बिन अबी वक़्क़ास, हज़रत तलहा हैं। दूसरी ओर ग़रीबों की टोली में से

हज़रत बलाल विशेषतया वर्णन करने योग्य हैं। यासिर और उनकी पत्नी सुमया और उनका पुत्र उमार भी बहुत ही पहिले काल के मुसलमान हैं। इसी समय में अब्दुल्ला बिन मसऊद और खब्बाब भी इसलाम में प्रविष्ट हुए। इसी आरम्भिक काल में अज़ाकम भी मुसलमान बना, जिसका गृह आकाश वाणी होने के चौथे वर्ष में रसूल करीम के प्रचारक प्रयत्नों का केन्द्र बनगया। इस समय तक अर्थात पहिले तीन वर्षों में लगभग चालीस मनुष्य इसलाम के घेरे में आ चुके थे और इस से यह विचार नष्ट हो जाता है कि आकाशबाणी रुकने का काल तीन वर्ष था, क्योंकि इस अवस्था में चौथा वर्ष केवल दाअ़्वे का प्रारम्भिक वर्ष होता, हालां कि इस समय तक मुसलमानों का अच्छा-भला सङ्गठन बन चुका था और इसी सङ्गठन के कारण ही इतनी विरोधता प्रारम्भ हो गई थी कि हज़रत मुहम्मद साहिब को एक एकान्त स्थान में रहना पड़ा, जहां आप वैरियों की रोक-रुकावट से अलग होकर प्रचार और ईश्वर-भक्ति के कर्तव्य का पालन कर सकें।

तत्पश्चात् मुसलमानों की संख्या में बराबर वृद्धि

होती रही और कई बड़े २ उच्च पदवी वाले मनुष्य इसमें मिल कर इस की नवीन समाज की शक्ति बढ़ाने का कारण बनते रहे। इन में से विशेषतया वर्णन करने योग्य नबी करीम के चचा हज़रत हमज़ा हैं, जो आप के रज़ाई* भाई भी थे। इनको सिपाही बनने और शिकार खेलने का बहुत शौक़ था और इनके उच्चाचरणके कारण कुरैश इनकी बड़ी श्लाघा और आदर करते थे। रसूल करीम के साथ आप को विशेष प्रेम था। एक दिन जब अबु-जहल ने सदा की भांति हज़रत को कष्ट दिया और आप का अनादर किया तो हज़रत हमज़ा की दासी देख रही थी। हज़रत हमज़ा शिकार से वापिस आए तो दासी ने इनके आगे वह सारी घटना वर्णन की। जो कष्ट आप को दिए जाते थे, उनके हाल सुन कर दूसरों के भी हृदय पिघल जाते थे। हज़रत हमज़ा जिन पर आप का साथ न दें और पवित्रता का आगे ही प्रभाव था। अब यह न सहार सके कि ऐसे सच्चे मनुष्य का साथ न दें। अब और अलग रहना, सदाचार और सहानुभूति से दूर समझा। परन्तु

*एक दूध-माता का दूध पीने वाले।

उनका अधिक विचार इन कष्ट देनेवालों को समझाने का था, कि तुम कष्ट देकर सत्यको नहीं दबा सकते। सीधे स्त्री-गृह में पहुंचे, जहां अबु-जहल सभा लगाए बैठा था और जाते ही आपने मुसलमान होने की घोषणा कर दी।

दूसरा, उच्च पदवी का मनुष्य, जिससे इस्लाम को बड़ी शक्ति मिली, हज़रत उमर-इबन-उल-खिताब था। ज़ैद जो हनीफ़ों में से थे, हज़रत उमर के चचा थे। इनके कारण ही इस घराने में एकता की ध्वनि पहुंची थी। ज़ैद के सुपुत्र सईद, मुस्लमान हो चुके थे और इनका विवाह हज़रत उमर की बहिन फ़ातमा के साथ हुआ था। वह भी मुस्लमान हो चुकी थीं। हज़रत उमर के स्वभाव में सख़्ती का भाव अधिक था और पहिले पहल यह सख़्ती, विरोधता के रूप में प्रकट हुई। यहां तक कि इन्होंने दृढ़ निश्चय कर लिया कि हज़रत साहिब को क़त्ल करके इस सारी लहर को मूल से ही काटा जाय। बस तलवार बाँध कर चल पड़े कि समाप्ति करके ही लौटेंगे। अभी तक उनको बहिन और बहनोई के मुसलमान हो जाने का समाचार नहीं मिला था।

मार्ग में एक मुसलमान को मिले । उसने हज़रत उमर को अति क्रोद्ध और रोष की अवस्था में देख कर पूछा कि क्या इरादा है ? कहने लगे, "मुहम्मद (उन पर ईश्वर की कृपा हो) का क़त्ल करने चला हूं ।" उसने कहा, "तेरी बहिन और तेरा बहनोई तो मुसलमान हो चुके हैं, पहिले अपने परिवार की सुध तो लो । रसूल अल्लाह का क़त्ल कोई सरल कार्य्य नहीं ।" अतः उमर अपनी बहिन के घर पहुंचे।

उस समय ख़बाब उनको क़ुरान शरीफ़ पढ़ा रहे थे। हज़रत उमर की आवाज़ सुन कर भयभीत हो क़ुरान करीम के पन्ने छिपा दिए, परन्तु वह सुन चुके थे और उन्होंने अन्दर प्रवेश करते ही कहा, "मुझे पता लग गया है कि तुम दोनों मुसलमान हो चुके हो।" इतना कह कर सईद को पकड़ा और मारना आरम्भ कर दिया । बहिन अपने पति को बचाने के लिए आगे बढ़ी, परन्तु हज़रत उमर क्रोध के कारण इतने बेताब हुए-हुए थे कि बहिनको भी सख़्त चोट आई। यहाँ तक कि वह लहू-लुहान हो गई और कहने लगी, "जो आप की इच्छा है, करो, हम तो मुसलमान हो चुके हैं ।"

धैर्य्य और दृढ़ता के इन शब्दों ने हज़रत उमर के क्रोध की ज्वाला को शान्त कर दिया और वह मारने से रुक कर कहने लगेः—"अच्छा, मुझे वह दो जो तुम पढ़ रहे थे।" पहिले तो यह डरीं कि कुरान के पत्रों का अनादर न करें। अन्त में प्रतिज्ञाबद्ध करके वह पन्ने उनको दे दिये। यह भाग सूरत ताहक़ा था। इसको सुन कर हज़रत उमर के अन्तःकरण पर बहुत प्रभाव हुआ और वह सोच में पड़ गए कि किस बात के विरोध के पीछे पड़े हुए हैं। ख़बाब भी, जो इनसे भयभीत होकर छिप गए थे, बाहिर निकले और समय देख कर प्रचार और शिक्षा प्रारम्भ कर दी। अन्त में वहीं पर हज़रत उमर इस्लाम की सत्यता के दास हो गए। ख़बाब से हज़रत साहिब का पता पूछकर अक़रमके घर पहुंचे। वहाँ नबी क़रीम, लगभग चालीस स्त्री-पुरुषों सहित थे, इनमें हज़रत हमज़ा भी थे और हज़रत अबु-बक़र सदीक भी। हज़रत उमर ने द्वार खटखटाया। एक पुरुष ने बाहिर की ओर झांका और हज़रत उमर को तलवार पहने हुए देख कर घबराया कि यह किसी बुरे भाव से आए हैं। रसूल क़रीम ने आदेश

किया, "द्वार खोल दीजिये और भीतर आने दीजिए।" जब वह भीतर आए तो अभी रसूल करीम ने एक वाक्य ही कहा था कि हज़रत उमर बोल पड़े, "हे अल्लाह के रसूल! मैं अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान लाता हूं।" मुसलमानों को इस से इतनी प्रसन्नता हुई कि अल्लाह-हो-अकबर की ध्वनियों से पर्वत गूँज उठा।

हज़रत उमर और हज़रत हमज़ा के ईमान लाने की घटनाएं आकाश वाणी के उतरने से छटे वर्ष या सन् ६१५ ई० की हैं।

हज़रत उमर के मुसलमानी मत में प्रविष्ट हो जाने से मुसलमानों को बड़ी शक्ति मिल गई। उन की शूरवीरता और दलेरी के सामने विरोधी दम नहीं मार सकते थे, यहां तक कि काअबे में श्रेणी-बद्ध निमाज़, पहिली बार उन के आने के पीछे ही पढ़ी गई। इसी काल में बहुत से दीन और निर्धन लोग भी इस्लाम में सम्मिलित हो चुके थे। इन में से कुच्छ दास भी थे। अन्य लोग तो अपने वंश-गत सम्बन्धों के कारण काफ़रों के कष्टों से किसी समय बच भी जाते थे, परन्तु बिचारे दासों की तो कोई हैसियत कोई स्थान

ही नहीं थी । इनको बड़े दुःख दिए जाते थे। हज़रत अबु-बकर सदीक़ की उच्चताओं में से जो इनको सारे सहाबों से बड़ा बनाती हैं, एक यह भी गुण है कि आपने इनमें से बहुत-सों को काफ़रों के अत्याचारों से छुड़ाया अर्थात् ऐसे लोगों को ख़रीद कर स्वतन्त्र कर दिया। हज़रत बलाल, आमर-बिन-फ़ुहीरा, ज़ुनीरा नहिदीआ-उम-उबीन ने हज़रत अबु-बक़र की कृपा से काफ़रों के भयानक कष्टों से छुटकारा पाया ।

यह बात अवश्य ध्यान देने योग्य है कि मक्के में बड़े बड़े क़ुरैशी सर्दार ईमान से वंचित रह जाते हैं और अधिकतया ग़रीब लोग ही इस्लामी मत धारण करते हैं । इस गुप्त रहस्य को इबन-उम-मक़तूम की घटना अच्छी प्रकार खोलती और स्पष्ट करती है। इबन-उम-मक़तूम एक आंखों से हीन (अन्धे) मनुष्य थे । एक दिन की बात है कि नबी करीम क़ुरैश के मान्यवर व्यक्तियों में, जो आपके समीप बैठे हुए थे, इस्लामी मत का प्रचार कर रहे थे। ठीक इसी समय जब कि आप उनके साथ वार्तालाप में संलग्न थे, इबन-उम-मक़तूम सभा में पहुंचे । नेत्रहीन

होने के कारण उनको यह पता न लगा कि हज़रत साहिब किस के साथ और क्या बात कर रहे हैं। प्रवेश करते ही उन्हों ने कुच्छ प्रश्न करके आप (हज़रत साहिब) का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करना चाहा। हज़रत ने इनको कुच्छ कहा नहीं और न ही झिड़का; परन्तु मनुष्य होने के कारण आपके मस्तक पर बल पड़ गया। इब्न-उम-मकतूम पर तो इस बात का कुच्छ प्रभाव पड़ ही नहीं सकता था, परन्तु वह सृष्टि-कर्ता भगवान् जो आपको समस्त सृष्टि मात्र का नेता और सब से उच्च बनाना चाहता था, उसकी दर्गाह में यह मस्तक का बल पसन्द न आया और आकाश वाणी हुई—

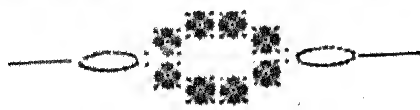
"मस्तक पर बल डाल लिया और मुख फेर लिया, केवल इस कारण कि एक नेत्रहीन (प्रज्ञा-चक्षु) आपके समीप आया है। पुनः आदेश किया, तुम्हें क्या ज्ञान है कि यही पुरुष इस से लाभ उठावे, क्योंकि कुरान एक ऐसा वर्णन है कि जिसके साथ निर्बल और निराश्रय मनुष्य, उच्च से उच्च पदवियों पर पहुंचाए जाएंगे। अतः बड़े आदमियों का अधिक विचार न करो कि इनके इस्लाम धारण करने

या न करने में इस्लाम की शक्ति गुप्त है। नहीं, अपितु इन छोटे २ मनुष्यों को उठा कर इस्लाम उस उच्च स्थान पर पहुंचाएगा कि जिसका इन्हें स्वप्न भी नहीं आ सकता था।"

और सत्य बात तो यह है कि इस्लाम में पहिले जुहफ़ा (दीन हीनों) का प्रवेश करा कर यह बतानेका अभिप्राय था कि चूँकि इस की प्रौढ़ता में ईश्वर का शक्तिशाली हाथ है, इसलिए दीन-हीन मनुष्य संसार में वह कार्य्य करके दिखाएंगे, जो बड़े २ बलवानों से भी नहीं हो सकता। इस्लाम ने जुहफ़ा (दीनों) को उठा कर उन्हें न केवल संसार के विजयी और राजा ही बनाया, अपितु सदाचार में, विद्या में, चिकित्सा और दर्शन शास्त्र तथा विज्ञान में समस्त संसार के नेता और शिक्षा देने वाले बना दिया और इस प्रकार बता दिया कि कुरान के अन्दर यह बल है कि यह अपने उस चेले को, जो इस के अनुसार अपना क्रियात्मिक जीवन बनाए, उच्च पदवी पर पहुंचा देता है।

यह उपरोक्त सूरत अब भी क़ुरान शरीफ़ का एक भाग है और चालीस क्रोड़ मनुष्य इसको दिन रात पढ़ते

हैं। इस से यह भी सिद्ध होता है कि हज़रत साहिब का अपना हृदय ही वह स्रोत न था जिससे आकाश-वाणी निकलती थी। क्योंकि इसमें तो सन्देह नहीं कि मनुष्य कभी २ दूसरों के साथ दुर्व्यवहार कर के स्वयं ही पछताता है, किन्तु पहिले तो यहां कोई दुर्व्यवहार नहीं, दूसरे जो मनुष्य अपने किसी कार्य्य पर पछताए, वह इस काम को ऐसा मिटाना चाहता है कि इसका ज़िक्र भी पीछे न रहे। परन्तु नबी करीम उस वाणी को, जिस में आप की किसी मानुषिक निर्बलता का वर्णन है, समस्त संसार में हमेशा के लिए फैलाते हैं और उन सेवकों के मुख से दिन रात यह शब्द निकलवाते हैं, जिनके हृदय आप के प्रति असीम प्रेम, स्नेह और आदर-सत्कार से भरे पड़े हैं। हां! जिस स्वच्छ हृदय पर यह आकाश-वाणी उतरी है, उस की अपार उदारता का भी इस घटना से पता लगता है कि जिस बात को दूसरे लोग छिपाने का यत्न करते हैं, उसकी वह स्वयं डंके की चोट के साथ संसार में घोषणा करते हैं।



९—क़ाफ़िरों का कष्ट पहुंचाना



" क्या लोग यह कह कर छूट जाएँगे कि वह ईमान लाए और वह क्लेशों में न फेंके जाएंगे।"

(अनकबूत=२)

जब अकालपुरुष की यह इच्छा होती है कि संसार में कोई समाज उच्चाचरण वाली पैदा हो, जो अन्य मनुष्यों के लिए मार्ग-दर्शक बने, तो सर्वदा ऐसा होता है कि एक ऐसा टोला उन के विरुद्ध खड़ा हो जाता है जो भिन्न २ प्रकार के अत्याचारों और कष्टों के साथ सत्यवादी लोगों को सन्मार्ग से रोकने का प्रयत्न करता है। यह इसलिए होता है कि एक तो इन लोगों की सद्भावना तथा दृढ़ता पर छाप लग जाए और यह प्रकट हो जाए कि यह लोग किसी सांसारिक प्रलोभन से एकत्रित नहीं हुए, दूसरे इनमें दृढ़ निश्चय, अटूट स्नेह और पक्के विश्वास के उच्च गुण उत्पन्न हो

कर इनको पूर्ण मनुष्य बना दें। क्योंकि जब तक मनुष्य कष्टों में नहीं पड़ता, उस समय तक न तो उसका आचरण ही पूर्ण होता है और न ही उस में दृढ़ता आती है। यही कारण है कि संसार में जितने भी आचरण की शिक्षा देने वाले हुए हैं, उनको सबसे बढ़कर दुःखों और कठिनाईयों में फैंका गया और तीसरे सृष्टि-कर्त्ता प्रभु यह दिखाना चाहता है कि मानवी-शक्तियाँ उस बूटे का कुच्छ भी नहीं बिगाड़ सकतीं जिसे जगत्पिता का हाथ स्वयं लगाता है। इसी माननीय नियम के अनुसार, रसूल करीम और आप के सङ्गियों को काफ़िरों के हाथों बहुत कष्ट सहने पड़े, जिन की क़ुरान शरीफ़ में भिन्न २ स्थानों पर व्याख्या हुई है। इन में से ही इस अध्याय की आरम्भिक आयत है, जिसमें वास्तव में बताया गया है कि निश्चय के दाअ्वे पर सत्यता की छाप वैरियों के कष्ट देने पर ही लग सकती है।

जब हज़रत साहिब ने लोगों को इस्लाम में निमन्त्रण देने का कार्य्य आरम्भ किया तो आरम्भ में आप को अधिक कष्ट नहीं दिये गए। पहिले पहिल अधिकतया हँसी-ठट्ठे से काम लिया गया और

आप के निमन्त्रण को घृणा की दृष्टि से देखा गया। कभी आप को कवि बता कर यह आशा प्रकट की गई कि समय के हेर-फेर स्वयं ही आप का निर्णय कर देंगे। कभी जादूगर बताया गया, और कभी मूर्ख कह कर छोड़ दिया गया, परन्तु जब बड़े २ ज्ञानी और उच्चाचरण के लोग आप के आस-पास एकत्रित होने शुरु हुए तो क़ाफ़िरों को चिन्ता हुई और उन्होंने धीरे २ दुःख देने आरम्भ किए। हज़रत साहिब क़ाअ़बे में जाकर निमाज़ पढ़ा करते थे। वहाँ अबु-जहल और इस्लामी मत के अन्य शत्रु कभी आप से ठट्ठा करते और कभी कष्ट देते। इन्हीं दुःखों का एक उदाहरण यह है कि एक बार एक ऊँटनी का गन्दा गर्भाशय (बच्चे दानी) उस समय आप की गर्दन पर रख दिया गया जब आप निमाज़ पढ़ते समय सिजदे की अवस्था में थे।

फिर चूँकि आप बहुत सवेरे अन्धेरे में ही निमाज़ के लिए निकला करते थे, इसलिए दुःख देने का एक यह उपाय भी बर्ता गया कि आप के मार्ग में कांटे बखेर दिए जाते। कभी रास्ता चलते आप पर मिट्टी फैंक दी जाती; कभी पत्थर मारे जाते। एक बार

बहुत से लोगों ने, जो क़ुरैश के माननीय व्यक्तियों में से थे आप पर आक्रमण किया और उक़्बा-बिन-अबी-मुईता ने आप के गले में चादर डाल कर इतना ऐंठा कि यदि यही अवस्था एक क्षण और रहती तो आप का दम घुट जाता। इतने में हज़रत अबु-बकर ने यह कहते हुए आप को छुड़ाया, "तुम एक मनुष्य की केवल इसलिये हत्या कर रहे हो कि वह कहता है कि अल्ला मेरा रब्ब है।"

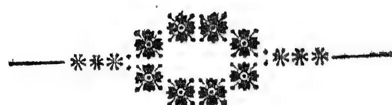
कष्ट देने का सब से अधिक जोर उन लोगों पर था, जो क़ुरैश के किसी बड़े क़बीले में से नहीं थे। विशेषतया दासों और लौंडों को सब से अधिक दुःख दिया जाता था। हज़रत बलाल, उम्मीया-बिन-खलफ़ के दास थे। जब वह मुसलमान हुए तो उम्मीया ने बहुत निर्दयता से कष्ट देकर उनको सत्य धर्म्म से मोड़ना चाहा, परन्तु इस्लाम में यह गुण था कि जिस हृदय में एक बार स्थान पा गया, फिर उसके टुकड़े टुकड़े भी चाहे क्यों न करदो वह इस्लाम को नहीं छोड़ता था। हज़रत बलाल को जब अरब की चिलचिलाती धूप में, ठीक दोपहर के समय, पथरीले और तपते हुए मैदान में लिटा कर

सीने पर गरम पत्थर रखे जाते और फिर उनको कहा जाता कि इस्लामको छोड़ो, तो बेहोशी की अवस्था में भी उनकी जिह्वा से 'अहद' 'अहद' का शब्द निकलता, अर्थात् अल्लाह एक है । हज़रत अम्मार के पिता यासिर और उनकी माता सुम्मीआ, दोनों ही भयानक दुःख देकर शहीद किए गए । इनके कष्टों की कथा सुनकर रोमाँच हो आता है । साधारणतया दुःख देने का तरीक़ा यह था कि दोपहर के समय पत्थर के सड़ते हुए कणों पर लिटा देते और मारते । अम्मार के साथ भी यही व्यवहार किया जाता रहा । परन्तु इन की माता सुम्मीआ को अबु-जहल ने गुप्त-स्थान पर बरछी मार कर मार दिया । लुबीना हज़रत उमर की दासी थी और इस समय ईमान लाई, जब हज़रत उमर अभी मुसलमान नहीं बने थे। वह इस बेचारी को मार मार कर थक जाते तो रुक जाते और कहते कि मैंने तुझ पर तरस खाकर तुम्हें नहीं छोड़ा, किन्तु इस लिए कि मैं थक गया हूं । कईयों को भूख और प्यास से तंग किया जाता ।

जो लोग बड़े २ कबीलों में से थे, वह भी बचे हुए नहीं थे । बल्कि प्रत्येक क़बीले ने यह ठेका लिया हुआ

था कि वह अपने आदमियों को जो मुसलमान हों, दुःख और कष्ट दे। हज़रत उस्मान को, जो माननीय क़बीलों में से एक होने के अतिरिक्त स्वयं भी बहुत प्रतिष्ठित व्यक्ति थे, उनके चचा ने रस्सी के साथ बांध कर मारा। हज़रत उमर की अपने चचा के पुत्र और अपनी बहिन को मार-मार कर लहू-लुहान करने की कथा ऊपर वर्णन की गई है। हज़रत ज़ुबैर को चटाई में लपेट कर इनके नाक में धुँआ दिया गया कि मुसलमानी-धर्म्म को छोड़ दें। हज़रत अबु-बक़र भी कष्टों से बचे हुए नहीं थे और सत्य तो यह है कि जब स्वयँ नबी रसूल के साथ इतनी अधिकताएं की गईं तो अन्य कौन बच सकता था? जो दुःख सम्भव था, दिया गया; परन्तु इस्लाम को, जो इनके हृदयों में स्थान ले चुका था, कोई कष्ट भी न निकाल सका। जान जाए तो जाए, परन्तु इस्लाम नहीं जा सकता था। काफ़िरों को स्वयं भी इस बात पर हैरानी थी। अतः जब चिरकाल के पश्चात अबु-सुफ़यान से हिरक्लि ने पूछा कि क्या इन में से कोई मनुष्य मुसलमानी मत से तङ्ग आकर पतित भी हो जाता है? तो उसने उत्तर दिया कि नहीं। परन्तु

जितनी वह इन लोगों की अधिक दृढ़ता और परिपक्वता देखते थे, उतनी ही उनके क्रोध और अत्याचार की आग अधिक भड़कती थी और पहिले से भी बढ़ कर कष्ट दिये जाते थे।



१०—हवश की हिजरत



"और वह लोग जिन्होंने ईश्वर के लिए हिजरत की, पीछे इसके कि उन पर अत्याचार हुआ, हम उसको संसार में अच्छा स्थान देंगे।"

(अलनाहल—४१)

आकाश-वाणी होने का पाँचवा वर्ष और सन् ६१४ ई० था। नबी करीम के इर्द-गिर्द पचास से ऊपर का जत्था एकत्रित हो चुका था। यह जत्था दिन प्रति दिन उन्नति पर था और आप को तथा आप के कार्य्य को इस जत्था से बल मिलता था। परन्तु इस दयावान् और तर्स खानेवाले मनुष्य का हृदय शत्रुओंके कष्टों पर भी पिघल जाता था। मित्रों के साथ यह निर्दयता देख कर आप से यह सहन न किया जा सका। आप तो शत्रुओं में अकेले रहने से नहीं घबराते थे, परन्तु जब अपने

सहाबा (साथियों) की तकलीफ़ों और कष्टों को आप ने दिन प्रति दिन अधिकता पर देखा तो उनको हिजरत की सम्मति दी और आदेश किया "अच्छा हो यदि तुम लोग हबश की भूमि की ओर निकल जाओ, क्योंकि वहां एक बादशाह है, जिसके घर किसी पर अत्याचार नहीं होता और वह सिद्क़ अर्थात् न्याय की भूमि है, तुम वहां उस समय तक ठहरो, जब तक कि जगत्-पिता परमात्मा तुम्हारा इन कष्टों से छुटकारा नहीं करते, जिनमें तुम फँसे पड़े हो।" इस समय हबश का बादशाह नज्जाशी के नाम से प्रसिद्ध था। इस का असली नाम असहमा था। वह ईसाई था और हबश के लोग भी ईसाई थे।

अतः सब से पहिले ग्यारह सहाबा ने हिजरत की, जिनमें से चार के साथ उनकी धर्म्म-पत्नियाँ भी थीं। हज़रत उस्मान अपनी सुपत्नी रुक़ीया के सहित, जो हज़रत साहिब जी की सुपुत्री थीं, अबु-हुज़ेफ़ा सहित अपनी सुपत्नी के, हज़रत ज़ुबेर, हज़रत मसाअ़ब, हज़रत अब्दुल रहमान बिन औफ़, अबु-सलमा अपनी सुपत्नी उम्म-असलमा के सहित, जो

पीछे हज़रत साहिब के निकाह में आईं और हज़रत अब्दुल्ला बिन मसऊद, इन हिजरत करनेवालों में से थे। आकाश-वाणी होने के पांचवें वर्ष के रज्जब मास में इन लोगों ने मक्के को छोड़ा। कुछ सवार और कुछ पैदल थे। बन्दरगाह पर पहुंचते ही इन को दो जहाज़ हबश को जाते हुए मिल गए, और यह सब झटपट उन पर सवार हो गए। क़ुरैशों को इनकी हिजरत की सूचना मिली तो उन्होंने झट इनका पीछा किया, क्योंकि वह नहीं चाहते थे कि इस्लाम का किसी स्थान पर भी पैर जमे, परन्तु जब वह बन्दरगाह पर पहुंचे, तो जहाज़ वहां से चल चुके थे। अतः यह निराश होकर लौट आए। पुनः इन्होंने आपस में सलाह करके यह निश्चय किया कि नजाशी के पास डेपूटेशन (प्रतिनिधि-मण्डल) भेजा जाए कि वह इन लोगों को आश्रय न दे और क़ुरैश के प्रतिनिधियों के हवाले कर दे। अतः इस उद्देश्य को लेकर अब्दुल्ला-बिन-रब्बीया और अमरू-बिन-आस निकले और बड़ी २ मूल्यवान् भेंटें लेकर हबश पहुंचे। सर्व प्रथम पादरियों को मिले और उन्हें वह पदार्थ भेंट करके अपनी प्रौढ़ता के लिये प्रेरणा की।

पुनः उनको इस प्रकार उकसाया कि इन लोगों ने एक नवीन पन्थ चलाया है, जो ईसाई-मत का भी विरोधी है। तब यह प्रतिनिधि लोग राज्य-दर्बार में पहुंचे और विनती की कि यह लोग जो हिजरत करके आए हैं हमारे अपराधी हैं, यह हमें वापिस दिए जाएँ। बादशाह को भी यह कह कर उभारा कि इन्होंने ईसाईमत और अपने मत के विरुद्ध एक नवीन मत निकाल लिया है। नज्जाशी ने मुसलमानों को उत्तर देने के लिए बुला भेजा। इस समय तक हज़रत जाफ़र-बिन-अबी-तालब भी पहुंच चुके थे। वही उत्तर देने के लिए खड़े हुए और उन्होंने इस प्रकार बिनती की :—

"हे बादशाह! हम लोग एक निर्बुद्धि जाति से थे, मूर्तियों को पूजते थे, मृतकों को खाते थे, बेशर्मी के काम करते थे, अपने नज़दीकियों के अधिकार नहीं देते थे और पड़ोसियों के साथ बुरा बर्ताव करते थे। हम में से बलवान् निर्बल को खा जाता था। यहां तक कि ईश्वर ने हमारी ओर अपने एक रसूल को भेजा, जिस के वंश, न्याय, अमानत और पर्हेज़गारी को हम भली प्रकार पहचानते

हैं। उसने हमें बुलाया, कि जगत्-पिता परमात्मा को एक मानो, उसी की भक्ति करो, पत्थर की मूर्तियों की पूजा छोड़ दो और उसने हमें आज्ञा की, कि सत्य बात कहो, अमानत भर दो, दया करो, पड़ोसियों के साथ अच्छा बर्ताव करो, हराम बातों पर लहू बहाने से बचो। उसने हमें निर्लज्जता के कामों से, झूठ बोलने से, अनाथोंका धन खाने से और स्त्रियों पर झूठे दोष लगाने से रोका। सो हमने उस पर विश्वास किया, उसके कहने पर चले और उसकी बातों को माना। इस पर हमारी अपनी ही जाति ने हम पर अत्याचार करना आरम्भ किया और हमें कष्ट दिये कि हम अपने मत को छोड़ दें और मूर्ति-पूजा की ओर वापिस आ जाएँ। अतः जब इनका अत्याचार सीमा को भी उल्लङ्घन कर गया तो हम आप के देश की ओर निकल आए और हम आशा रखते हैं कि आप के देश में हम पर अत्याचार नहीं होगा।"

फिर हज़रत जाफ़र ने कुछ भाग क़ुरान करीम का सुनाया तो नज्जाशी ने क़ुरैश के प्रतिनिधियों को कहा कि मैं कभी भी इन लोगों को आपके हवाले नहीं कर सकता। अगले दिन इन प्रतिनिधियों ने

एक और उपाय सोचा कि नज्जाशी को इस प्रकार उकसाया जावे कि यह हज़रत ईसा को नहीं मानते। परन्तु यह उपाय भी काम न आया। नज्जाशी ने जब मुसलमानों से यह सुना कि वह हज़रत ईसा को परमेश्वर का एक प्रसिद्ध और पहुंचा हुआ रसूल मानते हैं और ईश्वर नहीं मानते, तो उसने एक तिनका उठा कर कहा, "ईसा–इस से जितना कि मुसलमानों ने बताया है–इस तिनके जितना भी अधिक नहीं।" इस पर पादरी भी कुछ रुष्ट हुए, परन्तु क़ुरैश के प्रतिनिधि बिल्कुल अकृतकार्य्य वापिस लौटे। यह हिजरत 'हबश की पहिली हिजरत' के नाम से प्रसिद्ध है।

मुसलमानों के हबश की ओर हिजरत करने पर क़ुरैश को इतनी चिन्ता क्यों हुई कि उन्हों ने इनका पीछा किया और फिर नज्जाशी तक पहुंचे कि वहां से इन हिजरतियों को अपने अधिकार में लें? बात यह है कि क़ुरैश को मुसलमानों के साथ केवल इतनी ही शत्रुता नहीं थी कि वह मक्के में रहकर उनकी मूर्तियों को नहीं मानते या उन को बुरा कहते हैं, अपितु वह अब इनके जानी वैरी हो गए थे

और वह यह कभी भी नहीं सह सकते थे कि मुसलमान संसार में किसी भी स्थान पर रह कर अपना निर्वाह करें या इस्लाम बढ़े और फूले। यही कारण था कि जब कुच्छ वर्ष पीछे हज़रत जी ने अपने सहाबा समेत मदीने की हिजरत की तो काफ़रों ने आप को वहां भी सुख का जीवन व्यतीत न करने दिया। अपितु इस बार क्योंकि सहाबा किसी दूसरे की रक्षा में नहीं थे, अतः उन को तलवार से नष्ट करना चाहा और मुसलमानों की रक्षा के लिए नबी करीम को कई युद्ध करने पड़े। मुसलमानी युद्धों पर हबश की पहिली हिजरत की घटनाएँ विशेष और अधिक प्रकाश डालती हैं। परन्तु शोक है कि कई विरोधी, घटनाओं का विचार किए बगैर ही, शँकाएँ किए जाते हैं और युद्ध के आरम्भ की घटनाओं के विरुद्ध हज़रत साहिब के साथ जोड़ते हैं।

जब क़ुरैश के प्रतिनिधि हबश से निराश वापिस आए तो उनके अत्याचार की कोई सीमा न रही और उन्हों ने पहिले से भी अधिक सख़्ती से मुसलमानों को दुःख देना शुरु किए। अब तक तो वह मुसलमानों के कष्ट सहने को हैरानगी से देखते थे परन्तु हबश

की हिजरत ने अन्तिम फ़ैसला कर दिया कि यह लोग इस्लामी मत के लिए प्रत्येक प्रकार का दुःख और कष्ट झेलने को कटिबद्ध हो चुके हैं । दूसरी ओर जब मुसलमानों ने नज्जाशी का इतना अच्छा बर्ताव देखा तो उन में से कईयों ने यह सूचना मक्के में अपने अन्य भाईयों तक पहुंचाई ताकि जिन लोगों में शक्ति है, वह हिजरत करके हबश पहुंच जाएँ। जब मुसलमानों को यह खबर पहुंची तो अगले वर्ष बहुत से मुसलमान क़ुरैश से छिप कर हिजरत करके चल दिये । यह ' हबश की दूसरी हिजरत ' कहलाती है। क़ुरैश के जहां तक वश में था, इनको रोकते और दुःख देते, परन्तु यह शक्ति शाली प्रवाह इन से न रुक सका और बच्चों के अतिरिक्त १०१ स्त्री पुरुष हबश में एकत्रित हो गए । इन में से कई लोग, जिन में हज़रत उस्मान और उनकी सुपत्नी भी थीं, कुच्छ दिन के पश्चात् वापिस मक्के में आ गए, परन्तु बहुत से लोग हबश में ही रहे और सन् ७ हिजरी में यह लोग मदीने में लौट कर हज़रत साहिब को मिले; क्योंकि सन् ६ हिज़री में हुदीबीआ की सन्धि के अनुसार काफ़िरों का युद्ध दस वर्ष तक

ह गया था और अब अरब में मुसलमानों के लिए
छ तसल्ली की सूरत उत्पन्न हो गई थी। इस से
ह भी पता लगता है कि सन् ७ हिजरी तक
सलमान मदीने में भी भयानक स्थिति में ही थे।
ौर हदीबीआ की सन्धि से पीछे ही काफ़रों के कष्टों
पूरा २ सांस आया था।

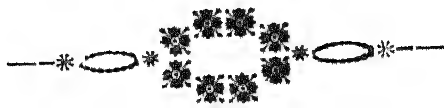
जिस प्रकार हबश के बादशाह ने मुसलमानों
 साथ अच्छा व्यवहार किया, उसी प्रकार जो
ुसलमान हिजरत करके हबश देश में बस गए थे,
उन्हों ने भी हबश के बादशाह की हर प्रकार से सहायता
की। अतः मुसलमानों के वहां रहने के समय में
जब नज्जाशी को एक शत्रु के साथ युद्ध करना पड़ा
तो इस में मुसलमानों ने भी सहायता दी और इसके
अतिरिक्त नज्जाशी की विजय के लिए प्रार्थनाएँ भी
करते रहे। अन्त में ईश्वर ने नज्जाशी को विजय
प्रदान की। जब एक राज्य से इनको लाभ पहुंचा
तो इन्हों ने भी अपनी सामर्थ्य अनुसार उसको लाभ
पहुंचाने का प्रयत्न किया और उपकार का बदला
प्रत्युपकार से दिया। समस्त मुसलमानी इतिहास को
पढ़ लिया जावे, मुसलमानों में द्रोह और कृतघ्नता

का कोई उदाहरण नहीं मिलेगा और संसार में यही एक जाति है, जो उच्चकोटि की वफ़ादार सिद्ध हुई है ।

हबश की हिजरत सम्बन्धी एक विशेष घटना उल्लेखनीय है कि पहिली हिजरत के पश्चात् हज़रत साहिब पर सूरातुल नजम उतरी, जिसके अन्त में सिजदा आता है और यह पहिली सूरत है, जिस में पाठ करने वाला सिजदा उतरा । अतः जब इस सूरत का पाठ करते करते आप अन्तिम सूरत पर पहुंचें तो आपने सिजदा किया और ठीक हदीस में है कि आप के साथ ही काफ़िरों ने भी सिजदा किया, क्योंकि वह मूर्ति-पूजक होते हुए भी ईश्वर के मानने वाले थे ।

इस घटना पर इस्लाम के विरोधी बहुत सा रङ्ग चढ़ा कर इस प्रकार वर्णन करते हैं कि जिस प्रकार हज़रत साहिब ने इस सूरत में मूर्ति-पूजा को ठीक माना था, इसीलिए क़ाफ़िरों ने भी सिजदा किया । जो कथा इस सम्बन्ध में वर्णन की जाती है, वह भी ठीक नहीं है और सच्ची कथा केवल इतनी ही है, जितनी कि ऊपर वर्णन की गई है । हां ! कई

कथाओं में इस प्रकार आया है कि काफ़िरों के इस प्रकार सिजदे में सम्मिलित होने पर कई लोगों ने यह विचार किया कि वह मुसलमान हो गए हैं और यह समाचार हबश में भी पहुंचा, जहाँ से कुच्छ हिजरती वापिस आ गए। परन्तु ठीक बात यही प्रतीत होती है कि वह लोग केवल हबश देश की स्वतन्त्रता और शान्ति की सूचना लाए थे, ताकि अपने दूसरे भाईयों को भी वहाँ ले जाएँ और इसी प्रकार ही हुआ। और यदि मक्के के लोगों के मुसलमान होने के समाचार का वहां पहुंचना ठीक भी हो, तो भी इसकी नींव काफ़िरों का सिजदे में सम्मिलित हो जाना ही था, अन्य कुच्छ नहीं।



११—इस्लाम में निमन्त्रण देने से रोकने के प्रयत्न



"और यदि हम तुम्हें पक्का न रखते, तो तू अवश्य थोड़ा सा उन लोगों की ओर झुक जाता।"

(बनी इस्राईल—७४)

हज़रत साहिब को लोगों को मुसलमान होनेकी प्रेरणा करने से रोकने के यत्न केवल उन कष्टों पर ही समाप्त न होते थे, जो आप को और आप के सहाबा (साथियों) को दिये जाते थे। शुरु में जब हज़रत साहिब ने प्रचार का कार्य्य आरम्भ किया तो अधिकतया आप खुला उपदेश नहीं करते थे। हां! जिन लोगों को तय्यार देखते, उन के साथ एकान्त में ज़िक्र करते। जब काबे में आप को और आप के साथियों को नमाज़ों में दुःख दिया गया तो छिप कर निमाज़ें पढ़ी जातीं,

यहां तक कि सफ़ा (पहाड़) में अरक़म का घर नियत हुआ। इधर नबी करीम को आज्ञा हुई कि जिन बातों की तुम्हें आज्ञा दी जाती है, उन की खोल कर व्याख्या करो और अपने निकटस्थ सम्बन्धियों को डराओ तब आप ने अपने प्रचार को सर्व साधारण के लिये कर दिया। सबसे पहिले एक दिन सफ़ा के पहाड़ पर चढ़ कर क़ुरैश के एक २ क़बीले को बुलाना शुरु किया, यहां तक कि सभी इकट्ठे हो गए। तब आपने इनसे पूछा क्या तुम ने मेरे मुख से आज तक कोई झूठी बात सुनी है ? सब ने एक स्वर होकर उत्तर दिया, कि बिल्कुल नहीं। हम आप को सत्यवादी और धर्मात्मा समझते हैं। फिर आप ने ईश्वर का सन्देश इन लोगों तक पहुंचाया कि मूर्ति-पूजा और बुरी बातों को छोड़ कर सृष्टि-कर्त्ता प्रभु की एकता और नेकी की ओर आओ। इस पर वह सभी बिगड़ गए और अबु-लहब बड़ी बुरी तरह से धृष्टताके साथ पेश आया। इसके पीछे यह पुरुष आप का कड़ा शत्रु बन गया और न केवल इसने और इसकी पत्नी ने नबी करीम को हर प्रकार के कष्ट दिये, अपितु इन्होंने यह व्यवहार

आरम्भ किया कि हज्ज के दिनों में जब नबी क़रीम अपना संदेश उन लोगों तक पहुँचाते; जो अ़रब के भिन्न २ भागों से एकत्रित होते थे; तो यह पुरुष उन के पीछे २ कहता फिरता, कि यह हमारा भतीजा है, पागल हो गया है, इसकी बातों की ओर ध्यान न देना ।

जब क़ुरैश ने यह अवस्था देखी कि एक ओर कष्टों और प्रतिबन्धों के कारण हज़रत साहिब के इस्लाम के प्रचार कार्य्य पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा और दूसरी ओर आपके चेलों ने उन कष्टों की कोई पर्वाह नहीं की, प्रत्युत उन्हों ने अपना देश तक छोड़ दिया है और इस्लाम को नहीं छोड़ा, तो उन्हों ने निश्चय किया कि इस बात के अतिरिक्त कि हज़रत साहिब का जीवन ही समाप्त कर दिया, अन्य कोई उपाय इस प्रवाह को रोकने का नहीं ।

अ़रब में प्रत्येक क़बीला अपने लोगों की रक्षा के लिए पूरा उत्तरदायी होता था, इस लिए जब हज़रत साहिब का वध करने के सब गुप्त प्रयत्न व्यर्थ सिद्ध हुए तो क़ुरैश ने यह सोचा कि हज़रत साहिब को खुले आम मार डालने के लिए अ़बु-तालब के साथ,

जो अपने प्राचीन मत पर स्थित था, निश्चय किया जाए। उन्हों ने विचार किया कि वह इन का साथ देगा। अतः क़ुरैश के माननीय व्यक्तियों का एक डैपूटेशन (प्रतिनिधि-मण्डल) इस आशय से अबु-तालब के पास पहुंचा। इन में अबु-जहल और अन्य क़ुरैश के बड़े २ सर्दार सम्मिलित थे। अबु-तालब को अपनी ओर करने के लिए इस प्रकार से बात शुरु की कि तेरा भतीजा हमारे देवताओं को गालियाँ निकालता है, और हमारे मत में त्रुटियाँ बताता है। हमें मूर्ख बनाता है और हमारे पिता, पितामहा को मूढ़ कहता है। अतः या तो तू स्वयं इसको रोक दे, नहीं तो हमें आज्ञा दे कि हम जिस प्रकार भी चाहें, उस से निपट लें। क्योंकि तुम स्वयं उसी मत पर चलते हो जिस पर हम हैं और मत के विचार से उसके (हज़रत साहिब के) विरोधी हो। अबु-तालब ने उनको नम्रता से समझा कर विदा कर दिया।

यह प्रकट है कि क़ुरैश ने जो दोष हज़रत साहिब पर लगाए थे, वह बहुत सा निमक मिर्च लगा कर बताए गए थे। नबी क़रीम उनके पूज्य व्यक्तियों को गालियां नहीं निकालते थे। क़ुरान क़रीम में साफ़

यह वचन है कि यह लोग ईश्वर से भिन्न जिनको बुलाते हैं, तुम उनको गालियाँ न निकालो। और उस काल में जो क़ुरान शरीफ़ उतरता रहा, उसको पढ़ कर अब भी प्रत्येक पुरुष देख सकता है कि क़ुरान क़रीम में किसी जाति के किसी माननीय और पूज्य व्यक्ति के लिए गाली नहीं निकाली गई। हां, यह वर्णन क़ुरान शरीफ़ में अवश्य आता है कि यह मूर्तियां आपको कोई लाभ नहीं पहुंचा सकतीं, न ही यदि आपकी कोई हानि होती हो तो उसे रोक सकतीं हैं, और कि वे दीनी और मूर्ति पूजा बुरी बातें हैं।

कुच्छ समय व्यतीत हो गया और हज़रत साहिब सदा की भांति अपने प्रचार के काम में लगे रहे और सत्यका संदेश बहुत से हृदयोंको प्रभावित करता गया। क़ुरैश ने जब देखा कि आप ने अपने प्रचार को नहीं छोड़ा तो फिर एक डैपूटेशन अबु-तालब के पास पहुंचा। इस बार पक्का निश्चय करके गए कि बात समाप्त ही करके आवेंगे। अतः उन्हों ने अबु-तालबको अपना पहिली बार का आना भी स्मरण कराया और कहा कि अब हम इस से बढ़ कर और कुच्छ भी सहन नहीं कर सकते। इस लिए या तो अपने भतीजे

से अलग हो जाओ या उसके साथ मिल जाओ, ताकि तुम्हारा और हमारा निपटारा हो जाए और युद्ध होकर हम दोनों में से एक पक्ष मारा जाए। क़ुरैशकी ओर से यह युद्ध की घोषणा थी और यह अवसर अबु-तालब के लिए अत्यन्त कठिन था । एक ओर जाति के साथ टक्कर कठिन प्रतीत होती थी और दूसरी ओर हज़रत साहिब का प्रेम हृदय में ऐसा था कि वह आप को भी छोड़ नहीं सकता था। इस अवस्था में उन्होंने हज़रत साहिब को बुलाया और जो कुछ क़ुरैश कह गए थे, आप को बताया और कहा कि मेरे और अपने पर दया करो । मुझ पर ऐसा बोझ न डालो, जिस को मैं उठा नहीं सकता अर्थात् जाति के साथ युद्ध करने की मुझ में शक्ति नहीं । हज़रत साहिब ने विचार किया कि अब अबु-तालब आप का साथ छोड़ना चाहता है । समस्त जाति तो पहिले ही शत्रु है, केवल अबु-तालब के बीच में होने के कारण वह खुल्लम-खुल्ला आप को क़त्ल नहीं कर सकते थे। अबु-तालब के अलग हो जाने का साफ़ तौर पर यह अर्थ था कि अब संसार का कोई व्यक्ति वैरियों की शरारतों से बचाने में आप

की सहायतता नहीं करेगा। सारे साथी अलग होकर हबश में जा चुके थे। जाति शत्रु है और ऐसा शत्रु कि जान लेने के पीछे पड़ी हुई है। आप का सन्देश सुनने वालों की गणना बहुत कम है। परन्तु कितनी साबती और हृदय की दृढ़ता है जोकि इस समय आपने दिखाई! कोई निराशा का विचार आप के हृदय में नहीं आया। ईश्वर की रक्षा पर कितना दृढ़ विश्वास है कि किसी मनुष्य की रक्षा की पर्वाह नहीं करते। इधर अबु-तालब के मुख से वह वाक्य निकलते हैं, उधर नबी करीम उत्तर देते है, 'हे चचा! यदि सूर्य्य को मेरे दाएँ हाथ पर और चन्द्रमा को मेरे बाएँ हाथ पर रख दें और फिर यह चाहें कि मैं इस काम को छोड़ दूँ, तो भी मैं बिल्कुल इसे नहीं त्यागूँगा, तब तक कि ईश्वर इन्हें विजयी बनावे या मैं कार्य्य करता २ मर जाऊँ।' साथ ही इस विचार से, कि ऐसे चचा को, जो आप के साथ हार्दिक प्रेम रखता है, और जो अब तक शत्रुओं के मुक़ाबले में आप की रक्षा के लिए ढाल बना रहा है, ऐसा उत्तर देना पड़ा, जो इसकी इच्छा के विरुद्ध है, आप के नेत्रों में अश्रु

भर आए और भरी हुई आंखों से आप उठ कर चल पड़े।

अबु-तालब ने चाहे प्रकटतया अपने पुरातन मत को नहीं छोड़ा था, परन्तु वह हज़रत साहिब के उच्च और सच्चे आचरण का सच्चे दिल से प्रेमी था। आप को छोड़ना, उसके लिए मृत्यु से बढ़ कर था। उसने फ़ौरन हज़रत साहिब को वापिस बुलाया और कहा, "हे भतीजे! जाओ, जो तुम्हारा जी चाहे करो, मैं किसी अवस्था में भी तुम्हारा साथ नहीं छोड़ूंगा।"

क़ुरैश को विश्वास था कि अबु-तालब हज़रत साहिब को छोड़ देगा। परन्तु जब वह अबु-तालब के इस निश्चय से परिचित हुए तो वह बहुत हैरान हुए। क़बीलों की आपस की लड़ाई भी उनको बड़ी भयानक दृष्टिगोचर होती थी, इससे क़ुरैश वंश ही नष्ट हो जाता और उनकी सरदारी सर्वदा के लिए छिन जाती। अतः उन्होंने फिर एक बार अबु-तालब से धमकी के स्थान पर लोभ देकर हज़रत साहिब को लेने का यत्न किया और अमारा-बिन-वलीद को, जो बहुत सुन्दर युवक था, साथ लेकर गए और अबु-तालब को

कहा कि तुम इस को अपना पुत्र बना लो और हज़रत साहिब को हमारे हवाले कर दो ताकि हम उसको क़त्ल कर दें, क्योंकि वह तुम्हारा और तुम्हारे मत का शत्रु है। अबु-तालब ने कहा, कि यह बड़ी अजीब बात है, तुम चाहते हो कि मैं तुम्हारे पुत्र को लेकर उस का पालन-पोषण करूँ और तुम मेरे पुत्र को लेकर उस को क़त्ल कर दो। ऐसा कभी नहीं हो सकता। क़ुरैश निराश होकर वापिस लौटे। इधर अबु-तालब ने यह समझ कर कि क़ुरैश अब बनी हाशम के वैरी हो जाएँगे और उन के नाश के लिये पूरा प्रयत्न करेंगे, बनी हाशम को एकत्रित किया और इन को कहा कि हमें हज़रत साहिब की रक्षा के लिये तय्यार हो जाना चाहिए। इन सब ने इस बात के साथ सहमति प्रकट की कि हम किसी प्रकार भी नबी करीम को शत्रुओं के हवाले नहीं कर सकते, चाहे वह हमारे साथ कुच्छ भी करें। अबु-लहब के अतिरिक्त, जो हज़रत साहिब का बहुत वैरी होने के कारण शत्रुओं के साथ मिला हुआ था, सब ने यही कहा। इससे पता लगता है कि केवल अबु-तालब ही नबी करीम के उच्चा-

चरण पर लट्टू नहीं हुआ २ था, अपितु बनी हाशम के सारे वंश को आप के आचरण ने मोहित किया हुआ था कि वह अपने मत का विरोधी होने पर भी हज़रत साहिब की सहायता के लिए अपनी जाति के साथ लड़ने-मरने के लिए कटिबद्ध थे।

परन्तु अभी क़ुरैश ने हिम्मत नहीं हारी थी। यदि दुःख और कष्ट पहुँचा कर वह हज़रत साहिब को नहीं रोक सके थे तो अब लोभ देकर रोकना चाहा। सांसारिक लोगों का ध्यान सांसारिक धन सम्पत्ति और सम्मान तक ही पहुंचता है। अबु-तालब ने बनी-हाशम को इतने सख़्त देखकर अब यह चाहा कि हज़रत साहिब को सीधा ही लोभ दिया जावे। अतः उन्हों ने अतबा-बिन-रबीआ को आपकी सेवा में भेजा और तीन बातें आपके सामने पेश कीं कि यदि आप धन चाहते हों तो हम लोग, जितनी धन सम्पत्ति तुम चाहते हो, एकत्रित करके देने को तय्यार हैं। यदि आप मान और राज्य चाहते हैं तो हम आपको अपना सरदार और बादशाह बनाने को तय्यार हैं। यदि आपको सुन्दरता और अन्य ऐसी चीज़ों की चाह है तो हम सुन्दर से सुन्दर स्त्री—जिसके

आप पसन्द करते हैं—आपकी पत्नी बनाने के लिए उद्यत हैं। परन्तु इस पवित्र हृदय में सांसारिक पदार्थों और मान की इच्छा कभी बाल्यावस्था से ही नहीं आई थी। आप ने उत्तर दिया कि मुझे न धन सम्पत्ति की इच्छा है न राज्य की, मुझे परमात्मा ने भय और शुभ सूचना देने वाला बना कर भेजा है। मैं तुम्हें ईश्वर का सन्देश देता हूं। यदि तुम इस को स्वीकार करो तो संसार में भी और आगे भी सुखी रहोगे, यदि तुम इसको स्वीकार नहीं करते तो ईश्वर मेरा और आपका निर्णय करेगा। इस उत्तर को सुनकर क़ुरैश आपकी ओर से नितान्त निराश हो गए। न वह कष्ट देकर आपको अपने कार्य्य से रोक सके, न बड़े से बड़ा लोभ देकर रोक सके। यह लोभ इतना बड़ा था और दुःख और कष्ट इस सीमा तक पहुंच चुके थे कि यदि सृष्टि-कर्त्ता प्रभु ने आपको हौसला न दिया होता तो कोई मनुष्य भी इतने दुःखों, इतने कष्टों और इतने लोभों का मुकाबला नहीं कर सकता था। इन बातों की ओर ही उस आयत में संकेत है जो इस अध्याय के प्रारम्भ में दी गई है कि "यदि हमने तुझे पक्का न कर दिया

होता तो तू अपनी प्राकृतिक दृढ़ता और दृढ़ हौसला और परिपक्कता होते हुए भी थोड़ा सा इनकी ओर झुक जाता।" अर्थात दुःख और लोभ इस पराकाष्टा तक पहुंच चुके थे कि बलवान् से बलवान् मनुष्य का क़दम भी फिसल जाता, परन्तु ईश्वरीय सहायता ने यह नहीं होने दिया।

चारों ओर से निराश होकर अब क़ुरैश ने अपने अन्तिम अस्त्रका प्रयोग किया; इधर सिवाए अबु-लहब के समस्त बनी हाशम इस बात पर सहमत हो चुके थे, कि चाहे बात युद्ध करने तक जावे, वह हज़रत साहिब को नहीं छोड़ेंगे। उधर एक क़बीले से दूसरे क़बीले में इस्लाम अपना प्रभाव जमाता जाता था। अतः क़ुरैश ने निश्चय किया कि बनी हाशम को बिल्कुल अलग कर दिया जाए और नबी-करीम के लिए दूसरे क़बीलों तक पहुंचने की कोई गुञ्जाइश न छोड़ी जाए। अतः उन्हों ने बनी हाशम के विरुद्ध एक प्रतिज्ञा-पत्र लिखा, कि वह न इनके साथ विवाह शादीका सम्बन्ध रखेंगे और न बेचने खरीदने का, और न खाने पीने की सामग्री इन तक पहुंचने देंगे, जब तक कि वह हज़रत साहिब का वध करने के लिए

इनके हवाले न कर दें। इस प्रतिज्ञा को एक काग़ज़ पर लिख कर यह काग़ज़ काअ़बा में लटका दिया गया। बनी हाशम और बनी-अब्दुल-मतलब, मज्बूर होकर आकाश बाणी के सातवें वर्ष के प्रारम्भ में एक दर्रे में, जो शिअ़ब-अ़बी-तालब के नाम से प्रसिद्ध है, घिर गए। केवल अबु-लहब अलग होकर हज़रत साहिब के वैरियों के साथ जा मिला। यहां लगभग तीन वर्ष तक बनी हाशम बहुत दुःखित अवस्था में रहे। क्योंकि क्रय-विक्रय (खरीदना-बेचना) बन्द था और कई समय भूख आदि के कारण मरने की अवस्था हो जाती थी। छोटे २ बच्चे भूख के मारे चीख़ मारते तो उनके रोने की आवाज़ से कई हृदयों में पीड़ा उठती और कुच्छ लोग गुप्त तौर पर अनाज आदि शिअ़ब के अन्दर पहुंचा देते, परन्तु अबु-जहल इसकी वड़ी देख भाल रखता। अतः जब हकीम बिन हज़ाम बिन खवेलद ने हज़रत ख़दीजा को सम्बन्धी होने के कारण कुच्छ खाने पीने का सामान भेजना चाहा तो अबु-जहल ने रुकावट पैदा की। परन्तु इन सब कष्टों में, जो बनी हाशम हज़रत साहिब के लिए झेल रहे थे, उनका पैर डगमगाया नहीं। यदि

हज़रत साहिब का सम्मान इनके हृदयों में न होता तो इतने कष्ट एक मनुष्य की खातिर कभी न सहारते। इधर प्रचार का कार्य्य हज्ज के सिवाए समस्त क़बीलों में रुक गया और केवल बनी हाशम तक ही रह गया। वह भी केवल हज्ज के दिनों में आपको बाहिर निकलने का अवसर मिलता तो इस समय आप सत्य का सन्देश एक २ क़बीले तक पहुंचाते। परन्तु अबु-लहब साथ २ अपनी आदत दिखाता फिरता और लोगों को कहता फिरता कि इसकी बात पर विश्वास न करना, यह झूट कहता है। वह लोग भी आप को यही उत्तर देते कि आप की अपनी जाति जो आप को अच्छी प्रकार से जानती है, वह आप को क्यों नहीं मानती?

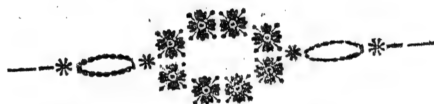
इसी समय में कई नर्म हृदय के लोग बनी हाशम के साथ की गई सख़्ती पर शोक प्रकट करते थे, और कई खुल्लम-खुल्ला यह कहने लग गए कि यह सख़्ती योग्य नहीं। अतः क़ुरैश के माननीय व्यक्तियों में से पांच मनुष्य इस बात पर सहमत हो गए, अर्थात् हिशाम, ज़ुहीर, मुताइम-बिन-अदी, अबुल बख़्तरी, ज़मअत-बिन-अल-असवद, और इन्होंने

परस्पर यह प्रतिज्ञा कर ली कि इस प्रतिज्ञा पत्र को फाड़ देंगे। इतने में प्रभु की ओर से एक और घटना घटित हुई कि पतिज्ञा-पत्र वाला काग़ज़ जो काअ़बे पर लटका था, उस को दीमक खा गई। हज़रत साहिब ने इस बात का वर्णन अबु-तालब के प्रति किया। अबु-तालब ने एक दिन बाहिर निकल कर क़ुरैश के नेताओं को उनके अत्याचारों की ओर ध्यान दिलाया और साथ ही कहा कि तुम्हारा प्रतिज्ञा-पत्र दीमक खा गई है और यह इस बात की सूचना है कि तुम लोग इस प्रतिज्ञा को छोड़ दो। अतः यही निश्चय हुआ कि यदि उक्त प्रतिज्ञा-पत्र खाया हुआ निकले तो इसको रद्दी समझा जावे। देखने पर प्रतिज्ञा-पत्र कीड़ों द्वारा खाया हुआ सिद्ध हो गया। इधर वह लोग, जो पहिले ही इस सख़्ती पर शोक प्रकट कर रहे थे, सन्नद्ध-बद्ध होकर शिअ़ब-अबी-तालब के द्वार पर आ गए, अपने आप को इस प्रतिज्ञा-पत्र का विरोधी प्रकट किया और जो लोग घेरे में थे, उन सबों को बाहिर निकाल कर अपने २ घरों को भेज दिया। किसी को विरोध

करने का साहस न पड़ा। यह घटना आकाश-वाणी के दसवें वर्ष की है।

शिअ्ब-अबी-तालब से निकलने के पीछे आप के चचा अबु-तालब का देहान्त हो गया। जिस प्रकार अबु-तालब को आप के साथ प्रेम था, उसी प्रकार आप को भी उस से प्यार था। चाहे वह अन्त तक मुसलमान नहीं हुए, किन्तु उनका वियोग आप के लिए एक बड़ी भारी चोट थी। इस से कुच्छ दिन बाद हज़रत ख़दीजा भी स्वर्गवास हो गईं और आप के लिए एक ऐसे सेवक और दुःख बाँटने वाले साथी का वियोग एक ऐसी दशा में, जब कि आप के सहाबा (साथी) भी आप से अलग थे और अबु-तालब भी चल बसे थे, भारी चोट का कारण बना। परन्तु इन चोटों के कारण आप के इस्लामी-प्रचार के यत्नों में कोई अन्तर नहीं पड़ा। हज़रत ख़दीजा की आयु स्वर्गवास होने के समय ६५ वर्ष थी। यह वर्ष जो आकाश-वाणी का दसवां वर्ष था, इस्लामी-इतिहास में आमुलहुज़न के नाम से प्रसिद्ध है, अर्थात् शोक का वर्ष, क्योंकि

आप के दो ऐसे साथी और दुःख बांटने वाले चल बसे, जिन से आप को बड़ी शक्ति मिलती थी। अब हज़रत साहिब की कठिनाईयां और भी अधिक हो गईं तथा एक और सख़्ती का काल प्रारम्भ हुआ।



१२—मक्के के अन्तिम दिन



" और उन्होंने निश्चय कर लिया था कि तुझे इस पृथिवी पर ख्वार करें ताकि तुम्हें यहां से निकाल दें। इस अवस्था में यह भी तेरे पीछे थोड़े दिन ही रहेंगे।

(बनी इसराईल—७६)

ताइफ़ की यात्रा—अब मक्के में रहकर इस्लाम के प्रचार को जारी रखना हज़रत साहिब के लिए और भी कठिन हो गया। हज़रत ख़दीजा और अबु-तालब के देहान्त के पश्चात् क़ुरैश को आप का कोई लिहाज़ न रहा। परन्तु इस बात पर कि प्रभु आप को विजय प्रदान करेगा, इस समय भी आप का विश्वास उसी प्रकार दृढ़ था। अतः एक दिन जब मार्ग में चलते हुए आप पर मिट्टी फैंक दी गई और आप इस अवस्था में घर पहुंचे और जब आप की सुपुत्री आप का सिर धोती २ रोती जाती थी तब आप

ने इन शब्दों से आश्वासन दिया, कि "पुत्री! रोओ मत, ईश्वर तेरे पिता की सहायता करेगा।"

आपको यह पूर्ण विश्वास था कि अ़रब देश मुसलमान हो जाएगा और आपका सेवक बनेगा। यदि आपको केवल अपने जीवन की रक्षा ही करनी होती तो यह एक सरल सी बात थी कि आप हबश की ओर हिजरत कर जाते, परन्तु इसका यह अर्थ होता है कि आप अ़रब से निराश हो गए। आप को निराशा की सब प्रकट सामग्री तुच्छ दृष्टिगोचर होती थी और आप का हृदय पूर्ण विश्वास से भरा हुआ था कि यही लोग जो आज शत्रु हैं, कल जीवन बलिदान करने वाले बनेंगे। आकाशबाणी का दसवां वर्ष व्यतीत हो रहा था कि मक्के वालों का पत्थर हृदय देखकर आपने ताइफ़ की ओर मुंह मोड़ा कि स्यात् वहां के लोग अधिक नर्म सिद्ध हों और अपनी भलाई की बातों को जल्दी स्वीकार करलें। ज़ैद आप के साथ था। सब से प्रथम आप वहां के सब से बड़े वंश के तीन प्रतिष्ठित भाईयों के पास गए, परन्तु इन तीनों ने आपकी बात की ओर कोई ध्यान न दिया। आप लगभग दस

एक दिन वहां ठहरे और बारी बारी से वहां के लोगों को अपना सन्देश देना चाहा, परन्तु यह सांसारिक व्यक्ति कहां विचार करते थे कि दोनों जहानों का मालिक ऐसी दीनावस्था में फिर रहा है कि स्वयं इसकी अपनी जाति इसके सन्देश की ओर कोई ध्यान नहीं देती। सभी ओर से यही उत्तर मिलता था कि यदि सच्चे हो तो पहिले अपनी जाति को मनवाओ। अन्त में आपको सन्देश दिया गया कि यहां से चल पड़ो। परन्तु ज्यों ही आप वहां से चले, नीच लोगों ने धनी व्यक्तियों के संकेत पर आपके साथ हंसी ठट्ठा आरम्भ कर दिया। नगर से बाहिर मार्ग के दोनों ओर दूर तक लोग फैल गए, और ज्यों ही आप इनके मध्य से होकर जाने लगे, आप की टाङ्गों पर पत्थरों की बोछाड़ शुरु कर दी। रुधिर से लत-पत होकर जब आप बैठने लगते तो कोई मन्द भाग्य आता और आपका हाथ पकड़ कर उठा देता कि यहां से आगे चलो, यहां पर ठैहरने का तुम्हारा क्या काम है? दो तीन मील तक यही दशा रही और आप पर इतने पत्थर वर्षाये गए कि आप लहू लुहान हो गए। अन्त में जब उन नीचों ने आप का पीछा

छोड़ा तो आप कुच्छ देर विश्राम करने के लिए एक बाग़ीचे में बैठ गए। यह बाग़ एक काफ़िर उतबा-बिन-रब्बीआ का था, किन्तु आपको इस दीन दशा में देख कर उसके मन में दया आई और उसने अपने एक ग़ुलाम (दास) अद्दाम नामी के हाथ अंगूरों का एक गुच्छा आपके लिए भेजा। यह एक ईसाई ग़ुलाम था और जब हज़रत साहिब ने बिसमिल्ला कह कर अंगूरों की ओर हाथ बढ़ाया तो उसको हैरानी हुई और पूछने पर जब आपने उसको अपनी पदवी की सूचना दी तो वह आप पर ईमान ले आया।

दीनावस्था में प्रार्थना—अपने आप को इस दीन दशा में और चारों ओर से संसार के लोगों का इतना अत्याचार देख कर आप ने ईश्वर की ओर ध्यान किया परन्तु इस हालत में नहीं कि आपके अन्दर निराशा का कोई भाव उत्पन्न हुआ हो अथवा शिकायत का कोई शब्द आप की जिह्वा पर आया हो। आप का हृदय ऐसे विश्वास से भरपूर और ऐसे भरोसे से पूर्ण हुआ २ था कि एक क्षण के लिए भी निराशा आपके पास नहीं फटक सकती थी। इस अत्यन्त

दीनावस्था में आपने इस प्रकार प्रभु के दर्बार में प्रार्थना की :—

"हे मेरे भगवान् ! अपनी निर्बलता का, सामर्थ्य की कमी का और लोगों की दृष्टि में तुच्छ होने का उपालम्भ आप के प्रति ही कहता हूं। हे समस्त दयालुओं से अधिक दया करने वाले ! तू ही दीनों का सहायक है और तू ही मेरा परमात्मा है। तू मुझे किस के हवाले करेगा ? किसी पराए शत्रु के जो मेरे साथ कटु वचनों से पेश आता है या किसी निकटस्थ मित्र के जिस के साथ तूने मेरा सम्बन्ध जोड़ा है ? यदि तेरी नाराज़गी मुझ पर नहीं तो इन सब बातों की मुझे कुछ भी पर्वाह नहीं। परन्तु तेरी रक्षा मेरे लिए बहुत विस्तृत है। मैं तेरे मुख के प्रकाश की रक्षा में आता हूं, जिस के सामने सब अन्धकार टुकड़े २ हो कर प्रकाशमान हो जाते हैं और जिस से संसार के और आगे के सब काम संवर जाते हैं। हां ! इस बात से मैं तेरे प्रकाश स्वरूप चेहरे की रक्षा में आता हूं कि मुझ पर तेरी नाराज़गी हो या क्रोध हो, तो तेरे चरणों में प्रार्थना करता हूं, जब तक कि तुम संतुष्ट न हो जाओ।

तुझ से भिन्न अन्य कोई सामर्थ्य और शक्ति नहीं।"

मैं चाहता हूं कि किसी के सीने में दिल हो तो वह विचार करे कि क्या यह वाक्य, इतने अत्याचार सह चुकने के अनन्तर एक असत्य-वादी मनुष्य के मुंह से निकल सकते हैं? वह अत्याचार जो मनुष्य सहार नहीं सकता, आप ने सहे, वह कठिनाईयां जो मनुष्य से आत्मघात करा देती हैं, आप को पेश आईं, परन्तु कितना दृढ़ विश्वास है, कितना ईश्वरेच्छा के मानने का विचार है, हृदय में कितना सुख और कितना आनन्द है कि कहते हैं कि यह सब बातें तुच्छ हैं यदि ईश्वर प्रसन्न है।

हज्ज में कई एक क़बीलों के पास जाना— कुच्छ दिन पीछे आप मक्के लौट आए। परन्तु नगर में जाने से पूर्व मुतइम-बिन-अद्दी से रक्षा का बचन लिया। मक्के में आकर आप इस प्रतीक्षा में थे कि किस द्वार से ईश्वरीय विजय आती है और किस स्थान की ओर आप को हिजरत करनी पड़ती है। हज्ज की ऋतु आई तो आप बारी बारी से उन सब क़बीलों के पास गए, जो अरब की भिन्न २

दिशाओं से इस समय एकत्रित हुए थे। परन्तु जिस सभा में भी आप व्याख्यान देते और इस्लाम के सिद्धान्त उन को समझाने की कोशिश करते, वहां ही अबु-लहब जा पहुंचता और कहता—"यह मनुष्य दीन से फिर गया है और झूट कहता है। यह चाहता है कि लातो अज़ा (की मूर्तियों) का आप पर आधिपत्य न रहे। इस की बात न सुनो।" इस लिए लोग भी ध्यान न देते। कई क़बीलों ने बड़ी सख़्ती से आप को रोका, परन्तु आप ने हिम्मत न हारी। एक क़बीले के लोगों को आप की बातें पसन्द आईं। परन्तु उन्हों ने साथ ही अपनी निर्बलता प्रकट की कि पिता पितामहा के धर्म्म को इस प्रकार एक बार ही छोड़ देना कठिन है। एक अन्य क़बीले के एक मनुष्य ने आप की बातें सुनकर आप पर प्रश्न किया कि यदि हम लोग आप का साथ दें और उस से आप बलवान् और शक्ति शाली हो जावें तो क्या आप के अनन्तर राज्य हमें मिलेगा? आपने उत्तर दिया; "राज्य तो परमात्मा के हाथ में है, वह जिस को चाहे उसे दे।" कितनी हिम्मत और कितना बड़ा विश्वास है! यदि आपको केवल अपना पक्ष

बलवान् करने का ही विचार होता तो यह अच्छा अवसर था। परन्तु अपनी चालों से शक्ति शाली होना इस उच्च पदवी की प्रतिष्ठा के विरुद्ध था, जिस पर कि आप को खड़ा किया गया था। आप केवल ईश्वरीय विजय की प्रतीक्षा में थे, क्योंकि आप के साथ यह इकरार था कि ऐसा अवश्य होगा और आप विश्वास पूर्वक जानते थे कि विजय अवश्य होगी। हां! यह नहीं जानते थे कि किस उपाय से वह विजय आवेगी और उसी के अनुसन्धान में फिर रहे थे।

मदीना वासियों के साथ मिलन और बैअ़त अक़बा

बैअ़त अक़बा—इसी प्रकार हज्ज के दिनों में जब आप भिन्न २ क़बीलों में इस्लाम का प्रचार कर रहे थे, अक़बा के समीप आप ख़ज़रज जाति के कुच्छ व्यक्तियों के पास आए। यह मदीने के वासी थे। आप ने उन से पूछा कि तुम कौन लोग हो? उन्हों ने कहा—"खज़रज" आप ने आदेश किया, 'यहूदियों के साथियों में से? उन्हों ने हां में उत्तर दिया तो आप ने कहा, 'कि यदि तुम लोग बैठ जाओ तो मैं कुच्छ बातें तुम्हारे साथ करूँ।' वह बैठ गए। आप ने उनको इस्लाम में प्रविष्ट होने का निमन्त्रण

दिया। उन लोगों ने यहूदियों से सुन रक्खा था कि भविष्य में होने वाले पैग़म्बर के होने का समय निकट है। अतः एक ओर इस्लाम की शिक्षा के गुणों ने उन पर प्रभाव डाला और दूसरी ओर इस भविष्य वाणी से उनके हृदय में यह पक्का विश्वास बैठ गया कि आप वही भविष्यत् के पैग़म्बर हैं और उन्हों ने आप के स्वीकार करने में पहिल की। अतः सभी पुरुष जो गणना में छः थे, मुसलमान हो गए। यह आकाश-वाणी के ग्यारहवें वर्ष की घटना है। इनके कारण मदीने में इस्लाम की कुच्छ चर्चा चल पड़ी और सभी घरों में हज़रत साहिब का वर्णन होने लग गया। अगले वर्ष हज्ज के अवसर पर १२ पुरुष जो मुसलमान हो चुके थे, हज्ज के लिए आए और इन बारहों से हज़रत साहिब ने वचन लिया जो अक़बा की पहिली बैअत (वचन) के नाम से प्रसिद्ध है और यह प्रतिज्ञा इन शब्दों में थी—'हम परमात्मा का सांझी अन्य कोई नहीं मानेंगे, चोरी नहीं करेंगे, ज़नाह (व्यभिचार) नहीं करेंगे, अपनी सन्तान का वध नहीं करेंगे; अन्यों पर दोषारोपण नहीं करेंगे और भली बातों में आप

की आज्ञा नहीं मोड़ेंगे।' यह आकाश-वाणी के बारहवें वर्ष और सन् ६२१ ईस्वी की घटना है।

अक़बा की दूसरी बैअ़त—इस प्रतिज्ञा के अनन्तर यह लोग वापिस हो गए। कुच्छ दिन के पीछे इनकी शिक्षा के लिये आपने मुसाअब-बिन-उमर को भेज दिया कि उन को क़ुरान सिखाए और इस्लाम की शिक्षा दे। मुसाअब के यत्नों का फल यह निकला कि मदीने में इस्लाम अच्छे ज़ोर के साथ फैला और बड़े २ लोग औस और खजरज़ में से मुसलमान हो गए। यहां तक कि फ़िर जब हज्ज की ऋतु आई तो इन में से ७३ पुरुष और दो स्त्रियां मक्के में आईं और तशरीक के दिनों में उसी अक़बा के स्थान पर रात्रि के समय हज़रत साहिब से इनकी मुलाक़ात हुई। आप के साथ हज़रत अ़ब्बास भी थे, जो अभी कुफ़र की अवस्था में थे। हज़रत अ़ब्बास ने सर्व प्रथम बात छेड़ी और कहा 'हज़रत मुहम्मद साहिब के स्थान को आप भली भाँति जानते हो। हम ने अब तक आप की जाति से अर्थात् शत्रुओं से आप

की रक्षा की है और आप अपने नगर में प्रतिष्ठा और रक्षा के स्थान पर हैं। परन्तु अब आप यह चाहते हैं कि आप के नगर में जाएँ और आप के साथ मिल जाएँ। अतः यदि आप समझते हैं कि आप उस प्रतिज्ञा को अन्त तक निभा सकोगे जिस पर आप उन्हें वहां बुलाते हो और कि इनके विरोधियों से इनकी रक्षा करोगे तो तुम्हें खुली छुट्टी है कि इस भार को उठाओ और यदि तुम समझते हो कि यहां से जाने के बाद तुम लोग इन की रक्षा नहीं कर सकोगे और इन को शत्रुओं के हवाले कर दोगे तथा इनका सम्मान नहीं करोगे तो अभी से ही इन को छोड़ दो।" साथ ही यह भी कहा कि यदि अ़रब और अ़जम के साथ युद्ध की सामर्थ्य है तो आप इनको साथ ले जाएँ। अनसार ने कहा कि हम ने तुम्हारी बात सुन ली है। अब स्वयं हज़रत साहिब जैसी भी प्ररिज्ञा हम से लेना चाहें, ले लें। आप ने क़ुरान शरीफ़ पढ़ा, कुच्छ उपदेश किया और पुनः कहा, 'मैं तुम से इस बात की प्रतिज्ञा लेता हूं कि तुम लोग शत्रुओं से मेरी रक्षा करोगे, जिस प्रकार अपने पुत्रों और स्त्रियों की रक्षा करते

हो।" इस पर बर्रा-बिन-मग़रूर ने, जो इन के नेता थे, आप का हाथ पकड़ा और कहा; 'हम आप के साथ इस बात का प्रण करते हैं।' इक़रार लेने के अनन्तर आप ने उन में से १२ सरदार नियत कर दिये। यह आकाश बाणी का तेरहवां वर्ष था और सन् ६२२ ई० का अप्रैल मास था।

इस से पता चला कि अनसार ने स्वयं नबी करीम को बुलाया था और आपने उन के निमन्त्रण को स्वीकार किया और जो प्रण उन से लिया गया, यह अरब देश का साधारण नियम था कि जब कोई मनुष्य किसी अन्य जाति में जाकर रहता तो वह उस की रक्षा का प्रण करते थे। नहीं तो प्रत्येक क़बीला या जाति केवल अपने लोगों की रक्षा की ही उत्तरदायी होती थी। यह भी पता लगा कि नबी क़रीम अपितु हज़रत अब्बास भी जानते थे कि क़ाफ़िर आप को मदीने में सुख से नहीं रहने देंगे। इस लिए उन से यह प्रण लेना आवश्यक था कि यदि शत्रु मदीने पर आक्रमण करे तो वह आप की रक्षा करेंगे। क्योंकि आप देख चुके थे कि किस प्रकार आप के सहाबा का पीछा हबश देश तक किया

गया । इन बातों को ही दृष्टि गोचर रखते हुए यह प्रण लिया गया और यह प्रण अक़बा के दूसरे प्रण के नाम से प्रसिद्ध है । इस प्रण की कुच्छ उड़ती २ सूचना क़ुरैश को भी मिल गई। परन्तु क्योंकि इस का पता बिना उन विशेष मुसलमानों के, जो प्रण में सम्मिलित थे या हज़रत अ़ब्बास के अन्य किसी को नहीं था । और मदीने के काफ़िरों को भी इस की ख़बर नहीं थी, इस लिए काफ़िरों को इस से अधिक पता न लग सका । परन्तु जब लोग हज्ज से वापिस हो गए तो यह समाचार सर्व साधारण में प्रसिद्धि पा गया, क्योंकि नबी करीम ने स्वयं इसको गुप्त रखना उचित न समझा। क़ुरैश ने मदीने के टोले का पीछा किया, परन्तु वह उन्हें मिल न सके। केवल दो व्यक्ति उन्हें मिले, जिन में से एक भाग गया और दूसरा साअ़द-बिन-उब्बादा पकड़ा गया, जिसको यह केशों से पकड़ कर घसीटते हुए वापिस मक्के ले आए। साअ़द ने कई क़ुरैशों की मदीने में कुच्छ सेवा की थी, इस वास्ते उनकी सहायताके कारण उसको छोड़ दिया गया ।

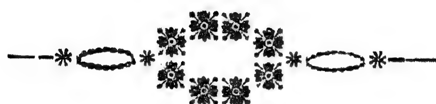
सहाबा का मदीने में हिजरत करना—इस के बाद सहाबा ने एक-एक दो-दो कर के मदीने की ओर हिजरत प्रारम्भ की और जहां तक हो सका, काफ़िरों से यह बात गुप्त रखी। जिस किसी के सम्बन्ध में उन्हें पता लग जाता, उसको रोकने का प्रयत्न करते; परन्तु उनकी रोक-टोक का कोई विशेष प्रभाव न होता। दो मास में मक्का मुसलमानों से लगभग शून्य हो गया। केवल हज़रत साहिब, हज़रत अबु-बक़र और हज़रत अली शेष रह गए। यह घटना भी परमपिता पर नबी क़रीम के पूर्ण विश्वास को प्रकट करती है।

शत्रुओं में अकेले होते हुए भी ईश्वर पर विश्वास—विरोधियों की सख़्ती दिन प्रति दिन बढ़ती जाती थी, मदीने में इस्लाम के शक्ति पकड़ने पर इनका जोश और रोष और भी बढ़ता जाता था। नबी करीम की रक्षा का प्रयत्न भी आगे जैसा नहीं था। इन बातों के होते हुए भी आप अपनी चिन्ता नहीं करते, अपितु अपने सहाबा का फ़िक्र करते

हैं। इन को पहिले रक्षा के स्थान पर पहुंचाते हैं और स्वयं क्रोध से भरे वैरियों के मध्य में अकेले ही रह जाते हैं। और इस प्रकार चारों ओर से ऐसे वैरियों में घिरे हुए जो जोश में और भी तेज़ हो गए हैं यह बता दे़ते हैं कि आप अपनी रक्षा के लिए केवल ईश्वर पर विश्वास रखते थे न कि प्रत्यक्ष उपायों पर।

आप चाहते तो यह कर सकते थे कि अपनी जान की रक्षा के लिए सब से पहिले मदीने जाते और यदि आप इस प्रकार करते तो कौन इस पर ननुनच कर सकता था, कौन सज्जन शिकायत कर सकता था ? क्योंकि इस्लाम के जीवन का निर्भर, हज़रत साहिब के जीवन पर था । परन्तु आप के पहिले ही मदीने चले जाने का परिणाम क्या निकलता ? काफ़िर यह देख कर आप के एक एक साथी को चुन चुन कर मार देते । अतः आप के उस हृदय ने, जो अपने सहायकों के साथ माता के स्नेह से भी अधिक प्रेम रखता था, यह आज्ञा न

दी कि आप अपने सहाबा को कष्टों में डालें। आप ने स्वयं बिल्कुल अकेले क्रोध से भरे हुए शत्रुओं के मध्य में रह कर बता दिया कि आप का उन वचनों पर कितना विश्वास है जो आप की विजय और रक्षा के सम्बन्ध में परमेश्वर की ओर से मिल चुके थे।



१३—हिजरत



" यदि तुम उसकी सहायता न करो तो निश्चय ही सृष्टिकर्त्ता ने उसकी सहायता की जब उसको उन लोगों ने, जो काफ़िर थे, निकाल दिया । इस अवस्था में कि वह दोनों में से दूसरा था जब कि वह दोनों गुफा में थे। जब उसने अपने साथी को कहा कि उदास न हो ईश्वर हमारे साथ है।"

(सूरत तौबा—४०)

वैरियों के घेरे में अन्तिम निश्चय—

आकाश-वाणी का चौदहवाँ वर्ष प्रारम्भ हो चुका था और नबी करीम, हज़रत अबु-बक़र और हज़रत अली के साथ वैरियों के मध्य में घिरे हुए रह गए थे। आप के समस्त साथी घर-बार को छोड़ कर हबश या मदीने पहुंच चुके थे। परन्तु आप की अत्यन्त दीन-दशा का दृश्य देखना अभी शेष है। जब आप इस दशा में रह गए तो हज़रत अबु-बक़र

जिन को आपने अपनी हिजरत की यात्रा में अपना साथी बनाने के लिए चुन लिया था, बहुत बार कहते कि 'हे नबी करीम ! मक्के से हिजरत करिए।' तो आप कहते कि अभी परमात्मा ने मुझे आज्ञा नहीं दी। कितना विश्वास है कि शत्रु तो इस प्रतीक्षा में हैं कि अवसर प्राप्त होने पर आप को समाप्त कर दें, परन्तु आप इस वास्ते मक्के को नहीं छोड़ते कि अभी परमात्मा ने आज्ञा नहीं दी। यह एक समस्या है जिसे क़ुरैश का अन्तिम फ़ैसला खोल देता है। अब तक तो फुटकर तौर पर अपने २ रङ्ग में यत्न हो चुके थे कि नबी करीम का वध कर दिया जावे। विरोध भी बहुत हुआ और कष्ट भी बहुत दिए गए। हंसी ठट्ठा भी हो चुका परन्तु क़ुरैश के पापों का प्याला अभी भरा नहीं था, अन्त में वह समय भी आया और नबी करीम को अकेले देख कर उन्हों ने एक बहुत बड़ी जातीय सभा दारुलनदवाह में की जहां कि समस्त जातीय कार्य्यों का निश्चय किया जाता था। यहां क़ुरैश के सब शरीफ़ एकत्रित हुए। किसी ने परामर्श दिया कि आपको बेड़ियां डाल कर क़ैद कर दिया

जावे और एक मकान में बन्द कर दिया जावे, जब तक कि यह शरीर न त्याग दें। इस पर यह शंका हुई कि सम्भव है आप के सहयोगी किसी दिन शक्तिशाली हो जावें और आप को छुड़ा लें। एक अन्य ने सलाह दी कि आप को देश निर्वासन का दण्ड दिया जावे। इस पर यह शंका हुई कि आप की वाणी में यह प्रभाव है कि जिस क़बीले में जाएँगे, उस को अपनी ओर कर लेंगे। और ज़ोर डाल कर किसी दिन हमें जीत लेंगे। सब के पीछे अबु-जहल ने अपनी सम्मति दी और कहा, 'हम कुरैश के प्रत्येक परिवार में से एक-एक बलवान् उच्च कुलीन नव-युवक चुनें, और फिर प्रत्येक को एक-एक तेज़ तलवार दें और यह सारे के सारे इकदम मिल कर हज़रत साहिब पर हल्ला बोल कर मार दें। इस प्रकार उनका लहू समस्त क़बीलों में वितरण किया जायगा और बनी हाशम किसी एक क़बीले से बदला न ले सकेंगे और ख़ून बहा लेने पर कटिबद्ध हो जाएँगे।" इस प्रस्ताव पर सब ने अपनी सम्मति दी और सभा विसर्जित हुई।

शत्रुओं में से निकल जाना—इधर यह

सम्मति हुई और उधर हज़रत साहिब को सृष्टि-कर्त्ता परमेश्वर ने सूचना दी कि अब क़ुरैश के पापों का प्याला भर गया है उन्हों ने अन्तिम निश्चय कर लिया है कि वह अपने सच्चे शुभ चिन्तक, हां, संसार के अकेले पवित्र करने वाले को जीता नहीं छोड़ेंगे। आज रात आप घर न सोएँ। हज़रत साहिब ने हज़रत अली को बुलाया और कहा, 'मेरे ज़िम्मे बहुत सी अमानतें हैं। आप 'मेरे स्थान पर सोओ और अमानतें देकर मदीने पहुंच जाओ।' इतनी विरोध होने पर भी लोगों को आप के सद्-व्यवहार पर कितना निश्चय था कि अब भी अमानतें आप ही के पास रखते थे। इस कार्य्य के लिए आप ने हज़रत अली को पीछे छोड़ा। इधर हज़रत अबु-बक्र को सूचना दी कि तय्यार हो जाओ, हिजरत की आज्ञा हो गई है। हज़रत अबु-बक्र ने विनती की, "हे रसूल अल्लाह! क्या मैं भी आप के साथ होऊँगा?" आप ने उत्तर दिया, "हां!" यह सुन कर मारे प्रसन्नता के हज़रत अबु-बक्र रो पड़े। हिजरत (देश-निर्वासन) के दुःख और कष्ट सहने के लिये इतनी प्रसन्नता क्यों थी? इसलिए कि वह

प्रीतम साथ था जिस पर जीवन न्योछावर करने की तड़प हृदय में थी। हज़रत अबु-बकर ने दो ऊँटनियाँ पहिले से ही तय्यार कर रक्खीं थीं। खाना आदि सब कुछ तय्यार हो गया और आवश्यक मामले निपटाए जा कर एक सम्मति हो गए। सायंकाल होने से पीछे थोड़ा सा ही अन्धकार हुआ था कि क़ुरैश के क़बीलों में से एक एक व्यक्ति चुना जाकर और तलवार हाथ में लेकर आ गया और रसूल अल्लाह के घर का घेरा डाल लिया कि आप बाहिर निकलें तो आप का वध कर दिया जाए। आप ने अपने स्थान पर हज़रत अली को सुलाया, क्योंकि इन्हों ने ही आप के पीछे अमानतें वापिस करने का कर्त्तव्य पालन करना था। और यह भी प्रकट है कि क़ुरैश हज़रत साहिब को बिछौने पर ही क़त्ल न करते, क्योंकि यह उन के असूलों के विरुद्ध था कि घर के भीतर प्रवेश करके क़त्ल करें और जब हज़रत अली बाहिर आते तो इन को कोई क़त्ल न करता। क़त्ल करने वाले इस ग़लती पर रहे कि हज़रत साहिब सोए पड़े हैं, जब बाहिर निकलेंगे उन्हें क़त्ल कर देंगे। इधर नबी करीम ने जब देखा

कि अन्धेरा हो गया है तो जिस सृजनहार के विश्वास पर उन्हों ने तेरह वर्ष इन शत्रुओं के मध्य में गुज़ारे थे, उसी पर विश्वास कर के अपने वध करने वालों के बीच में से होकर और उन की आँखों में धूल झोंकते हुए निकल गए और पहिले निश्चय के अनुसार हज़रत अबु-बक़र को मिले। पुनः यह दोनों पवित्र साथी एक भयानक कन्दरा में, जो 'ग़ारे-सूर' के नाम से प्रसिद्ध है, पहुंचे। यह कन्दरा मक्के से तीन मील की दूरी पर है। हज़रत अबु-बक़र पहिले इस कन्दरा में प्रविष्ट हुए और इसे साफ़ किया। उस में जो सुराख़ आदि थे वह टटोल २ कर बन्द किए। फिर हज़रत साहिब ने भीतर प्रवेश किया। इस कन्दरा में ही आप को वह पवित्र सन्देश पहुंचा, जिसने संसार के इतिहास में एक ऐसी भारी क्रान्ती (उथल-पुथल) उत्पन्न की। दूसरी कन्दरा में आप को अत्यन्त दीनावस्था में स्थान मिला और क्योंकि आप की हिजरत को इस्लामके जन्म का वर्ष समझा जाता है, जिस से इस्लामी इतिहास प्रारम्भ होता है, इसलिये यह कहना चाहिए कि इस्लाम इन दोनों कन्दराओं में से प्रकट हुआ। आप ने हिजरत, आकाश-वाणी के

चौदहवें वर्ष के सफ़र मास के अन्तिम दिनों में की और यह जून सन् ६२२ ई० के अनुसार था।

विरोधियों का खोज में निकलना—

प्रातःकाल हुआ और वध करने के लिये आए हुए व्यक्ति बिछौने पर से उठते हुए हज़रत अली को देख कर अत्यन्त अचम्भे में हो गए। चारों ओर ढूँढना आरम्भ किया। बड़े २ पारितोषक नियत हुए। ढूँढते २ ग़ारे सूर के सिरे पर भी पहुंचे। यह वह समय था, कि हज़रत अबु-बकर ने लोगों के पावों की आहट भी सुनी, तो आप के मन में विचार आया कि यदि थोड़ा सा और आगे हुए तो देख लेंगे। यह विचार मन में आते ही आप उदास हुए, अपने लिए नहीं, किन्तु उस अमूल्य मनुष्य के लिए जिस के जीवन को वह अपने जीवन से भी अधिक प्रिय समझते थे। वह कैसा समय था! भयानक शत्रु सिर पर है। बस एक दृष्टि पड़ने की देर है, फिर तो पल भर में वह टुकड़े २ कर देंगे। ऐसे समय में इन शब्दोंका आपके मुखसे निकलना कि 'हे अबु-बकर चिन्ता न कर, परमपिता परमात्मा हमारे अङ्ग-सङ्ग है, किसी मनुष्य के विचार में

भी नहीं आ सकता। यदि यह बातें आप के भीतर से निकली हुई होतीं तो अब वह समय था कि आप की होश गुम हो जाती। भागने का कोई रास्ता नहीं। शत्रु क़त्ल कर देने का अन्तिम निश्चय कर चुका है। किन्तु इस अतीव दीनावस्था के समय भी जब संसार में न कोई मित्र, सज्जन और सहायक शेष रह गया है, न बचाव का कोई स्थान है, अपनी रक्षा और संभाल के सम्बन्ध में कितना दृढ़ विश्वास आप के पवित्र मुख से प्रकट होता है कि परम पिता परमात्मा हमारे साथ है, हमें न कोई पकड़ सकता है और न ही मार सकता है। यह मनुष्य के भीतर की आवाज़ नहीं हो सकती। मनुष्य का अपना हृदय ऐसी दशा में यह तसल्ली नहीं दे सकता। यह अदृष्ट परमात्मा की आवाज़ थी, जो जानता था कि सिर पर पहुंच जाने पर भी शत्रु आप तक नहीं पहुंच सकता।

मदीने की यात्रा—तीन दिन आप ग़ार में रहे। हज़रत अबु-बकर का पुत्र अब्दुल्ला इन दिनों में आपको शहर के समाचार पहुंचाता रहा और इनका ही दास (ग़ुलाम) आमर-बिन-फ़ुहीरा, बकरियां चराता

चराता उनको कन्दरा के मुंह पर ले जाता और उनका दूध दोह कर पिला आता। हज़रत अबु-बक्र की सुपुत्री असमां खाना पहुंचाती। अन्त में जब ढूंढ के सम्बन्ध में चुप चाप हो गई तो चौथे दिन आप कन्दरा में से निकले। हज़रत अबु-बकर की दोनों ऊँटनियां तय्यार थीं। हज़रत साहिबने इस बातके होते हुए भी कि अबु-बकर अपना तन और धन आप पर न्योछावर कर चुके थे, यही पसन्द किया कि ऊँटनी हज़रत अबु-बकर से खरीद कर उस पर चढ़ें! एक क़ाफ़िर अब्दुल्ला-बिन-उरीकत मार्ग दिखाने के लिए साथ ले लिया। अमर-बिन-फ़ुहीरा को हज़रत अबु-बकर ने अपने पीछे चढ़ा लिया कि मार्गमें कुच्छ सेवा आदि के काम आवेगा, चाहे नबी करीम की सेवा वह अपने हाथ से करते थे। धूप की तपश हुई तो एक चट्टान के साये में स्थान साफ़ करके हज़रत अबु-बकर ने अपनी चादर बिछा दी। हज़रत साहिब उस पर लेट गए। हज़रत अबु-बकर आप के लिए कुच्छ खाने की वस्तुओं को ढूँढने निकले। एक अयाली मिल गया। बकरी के स्तन साफ़ कर के उसका दूध दुहा और एक शुद्धपात्र में लेकर

और कपड़े के साथ ढांप कर हज़रत साहिब की सेवा में उपस्थित किया। इससे पता चलता है कि सहाबा जानते थे कि हज़रत साहिब का स्वभाव कितना कोमल और सफ़ाई पसन्द है।

सुराका की घटना—क़ुरैश ने घोषणा की कि हज़रत साहिब को पकड़ कर लाने वाले को एक सौ ऊँट पारितोषक रूप में मिलेंगे। जो लोग ढूंढने के लिए निकले उनमें से सुराका-बिन-मालक, बिन-जहशमको किसी व्यक्तिसे पता चला कि उसने तीन सवारों को मदीने की ओर जाते देखा है। वह पुरुष बड़ा शक्ति शाली था। बिना किसी को खबर किए कवच पहन कर और सन्नद्ध-बद्ध होकर तीर कमान हाथ में लेकर एक तेज़ घोड़े पर चढ़ कर चल पड़ा। पीछा करते हुए एक स्थान पर घोड़े को ठोकर लगी और वह गिर पड़ा। फ़ाल निकाली तो नकार में निकली, अर्थात् पीछा नहीं करना चाहिये। फिर पीछा किया, फिर ऐसे ही हुआ। फिर वही फ़ाल निकली। तीसरी वार समीप पहुंचा और तीर के साथ वार करने ही लगा था कि घोड़ा गिरा और उस के अगले पैर पृथ्वी में धँस गए। सुराका स्वयं बताता है कि तब

मैंने समझा कि भावी यही है कि हज़रत साहिब का ही हुकम चले। अन्त में वह वध करने का विचार छोड़ कर सच्चे हृदय से सेवा में उपस्थित हुआ और विनती की कि मुझे क्षमा प्रदान की जाए और जब परमात्मा आप को राज्य दे तो मुझ से इस भूल की पूछ-ताछ न की जावे। आप ने इस बातको लेखबद्ध करा दिया। (लेखनी, दवात कागज़ आप के साथ रहता था कि जो आकाश-वाणी उतरे, साथ के साथ ही लिख ली जावे)। साथ ही आपने सुराका को सम्बोधन करके कहा, 'हे सुराका! मैं तो तेरे हाथ में किसरा के स्वर्ण-कंकण देखता हूं।' यह अज्ञात-दृश्य जो बीस वर्ष पीछे की सूचनाएँ बता रहा था, इस दशा में मनुष्य के विचारों से बहुत परे है। वह मनुष्य जो अत्यन्त दीन दशा में अरब के कुच्छ मामूली शत्रुओं के हाथों से छिप कर नगर छोड़ कर भागा है और जिस को अभी चारों ओर से खतरा लगा हुआ है कि कोई शत्रु न पहुंच जावे, इस दीनावस्था में किसरा के राज्य का स्वामी हो जाने का शुभ समाचार पाता है। वह शब्द जो इस भागने वाले के मुँह से ऐसी दशा में

निकले, अन्त में वह हज़रत उमर के समय में पूर्ण हुए। पन्द्रह वर्ष पीछे हज़रत उमर ने ईरान में से बहुत सा माल आने पर सुराका को बुलाया और किसरा के कङ्कण उसके हाथ में पहनाए। यह वह चमत्कार हैं, जिन को देख देख कर सहाबा के हृदयों में परमात्मा के अस्तित्व पर ऐसा दृढ़ विश्वास बँधा कि जिस प्रकार वह इन आँखों के द्वारा परमपिता प्रभु के दर्शन कर रहे थे।

मक्के में वापिस लाने की ईश्वरीय आज्ञा—उन तसल्लियों में से जो हज़रत साहिब को ईश्वर की ओर से मिलती रहती थीं और जो आप की हैरान करने वाली दृढ़ता में आपकी सहायक होती थीं, वह वही भी है, जो आपको हिजरत की इस यात्रा में हुई कि वह सृजनहार, जिसने तुम पर क़ुरान उतारा है, अवश्य ही तुझे मक्के में वापिस लाएगा*। इसके विना इस से पहिले भी आप को बार-बार सूचना दी गई थी कि आप को मक्के से हिजरत करनी होगी और इस्लाम की वास्तविक सफलता का समय किसी अन्य केन्द्र से प्रारम्भ होगा। क़ुरान शरीफ़ इन अगम्य

*इसलिये कि वहां लोग हज्ज के लिए फिर-फिर आते हैं।

वाक्यों से भरा पड़ा है और ठीक उस अवसर पर जब कि काफ़िरों का विरोध ज़ोरों पर था और नबी करीम पर बड़ी दीन दशा का समय था, काफ़िरों को यह बारम्बार कहा जाता था कि तुम विरोध में जितनी शक्ति चाहे लगालो, इस्लाम का कुच्छ भी नहीं बिगाड़ सकते। हिजरत से पहिले आप ने यह स्वप्न देखा कि आप ने एक ऐसे स्थान पर हिजरत की, जो बहुत ही हरा भरा था। आप ने इसको यामामा समझा, परन्तु वह मदीना निकला।

हिजरत का भाव—इस्लामी इतिहास में इस्लामी सन्, हज़रत साहिब को आकाश वाणी होने से नहीं, अपितु हज़रत साहिब की हिजरत से प्रारम्भ किया गया है। अर्थात् हिजरत को ही इस्लाम के जन्म का समय नियत किया गया है। सहाबा की तीक्ष्ण दृष्टि इस बात तक पहुंची हुई थी कि हिजरत के साथ ही इस्लाम की वास्तविक सफलता सम्बद्ध है। हिजरत में ही नबी करीम की दीनावस्था पराकाष्टा को प्राप्त हुई। इसी लिए इस घटना को इस्लामी मत की सफलता और ईश्वरीय विजय होने की युक्ति माना गया। जिस प्रकार कि इस अध्याय की प्रारम्भिक

आयत में कहा है कि यदि तुम उसकी जीत न करो तो ईश्वर ने उसकी जीत इस अत्यन्त दीन दशा के समय की, जब काफ़िरों के अत्याचारों के कारण आप को मक्के से निकलना पड़ा और केवल एक ही आप का साथी था। यह समझो इस्लामी मत के साथ एक प्रकार की सर्वदा के लिए प्रतिज्ञा है कि कठोर से कठोर कष्टों में से भी परमात्मा इस्लामी मत को सफलता के साथ बाहिर निकालता रहेगा।

अत्यन्त प्रभावशाली परिवर्तन और सहाबा का मुकाम—मक्के में तेरह वर्षों में आप ने खतरों से भरपूर विरोध के होते हुए भी क्या काम किया? तीन सौ के लग भग वह मनुष्य आप की पवित्र शक्ति से उत्पन्न हो गए, जिन्हों ने भयानक कष्ट झेल कर भी आप का साथ दिया। घर बार त्याग दिये, सम्पत्ति त्याग दी, परन्तु आपका साथ न छोड़ा। बहुत से ऐसे भी थे कि मन ही मन में इस्लाम की सत्यता को मानते थे, परन्तु निर्बलता के कारण प्रकट तौर पर साथ नहीं हो सकते थे। इस उथल-पुथल पर—जो तेरह वर्षों में आपने पैदा कर दी और समस्त जाति के विरोध के होते हुए भी

कर दी—एक शत्रु के मुख से भी यह प्रशंसा के वाक्य निकलते हैं। अर्थात सर विलियम म्यूर लिखता है :—

"इतने थोड़े समय में मक्का इस अजीब लहर से दो टुकड़ों में बांटा गया, जो जाति और कबीले के पुराने भेदों को भूल कर एक दूसरे के भयानक विरोधी हो गए। मोमनों ने शान्ति और धैर्य्य से समस्त कष्टों को सहन किया......एक सौ स्त्री पुरुष अपने अमूल्य मत को छोड़ने के स्थान पर घर बार छोड़ गए और हबश देश में निर्वासन की दशा में रहने लगे, जब तक कि विरोध की आंधी शान्त न हो जाती। और अब इस से बढ़ कर यह कि हज़रत साहिब उस नगर में से भाग रहे थे, जिस के साथ उनको अत्यन्त प्रेम था और जहां वह पवित्र घर था, जिस को वह संसार की सब वस्तुओं से अधिक प्यारा समझते थे। और मदीने को जा रहे थे, वहां इसी अजीब आकर्षण ने दो तीन वर्ष में ऐसी प्रीति की लड़ी उत्पन्न कर दी जो हज़रत साहिब और आप के सहाबा की रक्षा अपने लहू से करने को उद्यत थे। यहूदी सत्यता एक समय से मदीने के लोगों के कानों में पड़ रही

थी; परन्तु वह उस समय तक नहीं जागे, जब तक कि अरब के नबी की आत्मा को हिला देने वाली ध्वनि उन के कानों तक नहीं पहुंची। इस ध्वनि से एक नया और गूढ़ भावों से भरपूर जीवन उनके अन्दर उत्पन्न हो गया। आपके सहाबा की नेकियां हज़रत साहिब के अपने शब्दों में इस प्रकार वर्णन हो सकती हैं :–

"और ईश्वर के भक्त वह हैं, जो पृथिवी पर नम्र होकर चलते हैं और जब बे-समझ लोग उनको सम्बोधित करते हैं, तो कहते हैं जीते रहो। और वह जो ईश्वर के दरबार में सजदा करते हुए और खड़े होकर रात्रि काटते हैं।"

"और वह जो कहते हैं, हे हमारे परमात्मा! हम से नरकों के कष्ट दूर कर, क्योंकि इसका कष्ट ऐसा चिमट जाने वाला है कि जिससे छुटकारा नहीं होता। वह बुरा स्थान है।"

"और वह जो जब ख़र्च करते हैं तो न फ़ज़ूल ख़र्ची करते हैं और न कृपणता करते हैं और बीच का मार्ग धारण करते हैं।"

'और वह जो ईश्वर के साथ अन्य किसी को

नहीं मिलाते और न उस जान को कत्ल करते हैं, जिसको ईश्वर ने मना किया है, परन्तु सत्यता के साथ। और पर-स्त्री का संग नहीं करते।'

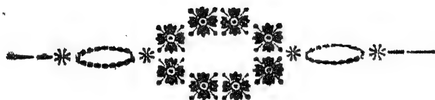
'और वह जो अगम्य के निकट नहीं जाते और जब नीचों के पास से गुजरते हैं तो बजुर्गों की भांति गुज़र जाते हैं।'

'और वह जिन को जब उन के परमात्मा की आज्ञाएँ याद कराई जाती हैं तो अन्धे और गूँगे होकर नहीं गिरते।'

'और यह जो कहते हैं कि हे हमारे परमात्मा! हमें अपनी पत्नियां और अपनी सन्तति ऐसी प्रदान कर जो आंखों की ठंडक हो और हमें निर्व्यसनी लोगों का इमाम बना।'

सचमुच यह और इस प्रकार की सैकड़ों आयतें जिन में भले लोगों की मूर्ति खैंची है, वह कोई काल्पनिक मूर्ति नहीं अपितु वह सहाबा का सोलह आने प्रतिबिम्ब है। एक मनुष्य की पवित्र शक्ति ने सभी विरोधों के होते हुए यह काम किया कि थोड़े से समय में सैकड़ों मनुष्यों को बुरी और अत्यन्त गिरी हुई मूर्ति-पूजा की दशा से निकाल कर, गन्दे रस्म-

रिवाजों से अलग करके उच्च कोटि की नेकियों के स्थान पर खड़ा कर दिया। इनके अन्दर इस प्रकार का विश्वास और ऐसी जागृति उत्पन्न कर दी कि जिस सिद्धान्त पर एक बार सोच समझ कर डट गए और जिस में अपनी और ईश्वर की संतान की भलाई समझी, उसको नहीं छोड़ा, चाहे कठिनाईयों के पर्वत भी सामने आ गए।



१४—मदीनेके प्रारम्भिक दिन



"जो ईमान लाए और उन्हों ने हिजरत की और अपने माल और अपनी जानों के साथ ईश्वर के मार्ग में जहाद किया और वह जिन्हों ने इनको आश्रय दिया, यह दोनों एक दूसरे के वली हैं।"

(अनफाल—७२)

मदीने में आना और क़बा में निवास— हज़रत साहिब के मक्के में से निकलने का समाचार मदीने पहुंच चुका था, परन्तु तीन दिन तक आप का 'ग़ारे-सूर' में रहने का किसी को पता नहीं था। इस लिए इस समय मदीने में लोग बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा की घड़ियां गिन रहे थे। प्रातःकाल होते ही कई प्रेमी आगे मार्ग देखने के लिए दूर दूर तक निकल जाते। अन्त को प्रतीक्षा की घड़ियां समाप्त हुईं और रसातल का सूर्य्य मदीने के आकाश पर चढ़ा। खास नगर से तीन मील के अन्तर पर बाहिर की आबादी

है, जिस का नाम 'क़बा' है और अबाली मदीना कहलाती है। यहां पर अनसार के कई वंश निवास करते थे। इन में से अमरू-बिन-औफ का घराना बहुत ऊँचा और प्रतिष्ठित था। हज़रत साहिब ने नगर में प्रवेश करने से पहिले इनका आतिथ्य स्वीकार किया और क़बा में ठहर गए। यह ८ रबीउल-अव्वल सोमवार का दिन था और सन् ६२२ ईस्वी के जून मास के अन्तिम दिन थे। कई हिजरत करने वाले भी यहीं ठहरे हुए थे। मदीने में जो मुसलमान थे, वह भी समूह के समूह दर्शनार्थ एकत्रित हो गए। चौदह दिन तक आप यहां रहे। हज़रत अली भी यहां ही आप के साथ आ मिले।

क़बा की मस्जिद—यहां ही क़बा की मस्जिद बनाई गई, यह सब से पहिली मस्जिद है, जो मुसलमानों में बनाई गई और जिसका वर्णन क़ुरान शरीफ में सूरा तौबाह में आया है। इसके बनाने में स्वयं हज़रत साहिब और सहाबा सारे मज़दूरों की भांति काम करते थे। २२ रबीउल अव्वल को आप ख़ास नगर में प्रविष्ट हुए। नगर में समझो उस दिन ईद थी। लोग बन-ठन कर निकले, स्त्रियां

कोठों पर चढ़ कर मङ्गल-गीत गा रही थीं। प्रत्येक अनसारी चाहता था कि उसका तन मन धन आप पर न्योछावर हो और आप उसी के घर पर निवास करें। आप ने अपनी ऊँटनी को छोड़ दिया कि जहां पर वह बैठ जाए, वही स्थान आप के विश्राम का होगा।

नबी की मस्जिद—हज़रत अबु-अयूब के घर के सामने ऊँटनी आकर ठहर गई। यहां एक सुनसान सी भूमि थी, जो दो अनाथों की थी। इसके एक भाग में ऊँट बांधे जाते थे और एक ओर कुच्छ क़बरें थीं, कुच्छ वृक्ष और कुच्छ झाड़ियां थीं। उनकी इच्छा हुई कि यह भूमि नबी की मस्जिद के लिए बिना मुल्य दी जावे, परन्तु आप ने पसन्द न किया। भूमि मूल्य देकर ख़रीदी गई और सब से पहिला काम यह हुआ कि यहाँ मस्जिद बनवाई गई। इस मस्जिद के निर्माण में जो मज़दूर और मिस्त्री लगे, वह स्वयं हज़रत साहिब और उन पवित्र मनुष्यों का समूह था जो अपना सर्वस्व ईश्वर के निमित्त अर्पण कर चुके थे। पत्थर उठाते और इस मेहनत को अपना आत्मिक भोजन समझते हुए, हज़रत

साहिब के साथ २ यह पढ़ते जाते :—

"हे प्रभो ! आगे की भलाई ही असली भलाई है। तू अनसार और हिजरत करने वालों को विजय प्रदान कर।"

मस्जिद क्या थी ? सादगी का पूर्ण नमूना थी। कच्ची दीवारें, खजूर के खम्भे, खजूर की टहनियों और पत्तों की छत्त और कच्चा फ़र्श। जब वर्षा होती और छत्त टपक पड़ती तो भीतर कीचड़ हो जाता। इस कष्ट को दूर करने के लिए बाद में उस पर मोटी रेत बिछा दी गई।

सुफ़ा के लोग—मस्जिद के एक सिरे पर छता हुआ चबूतरा था। यहां वह लोग रहते, जिन का अपना घर-बार नहीं था और 'असहाबे-सुफ़ा' के नाम से प्रसिद्ध थे। यह समझो, मस्जिद के साथ पाठशाला की नींव थी। क्योंकि यह लोग अपना समय दीन की शिक्षा में ही व्यतीत करते थे। इसी मस्जिद से मिलते दो हुजरे हज़रत साहिब की सुपत्नियों के लिए बनाए गए। पीछे जब आपने और स्त्रियों के साथ निकाह किया तो और हुजरे बनते गए। इन सब के द्वार मस्जिद में खुलते थे।

बांग और जुमआ़—मक्के शरीफ़ में तो खुल्लम-खुल्ला जमायती (श्रेणी-बद्ध) निमाज़ नहीं पढ़ी जा सकती थी। किन्तु अब मदीने में सुख मिला तो लोगों को निमाज़ के समयों पर बुलाने के भिन्न २ प्रस्तावों पर विचार हुआ । इसी रात हज़रत उमर ने स्वप्न देखा कि कोई पुरुष यह वाक्य बार-बार दोहरा रहा है 'अल्लाहो अकबर !, अल्लाहो अकबर !!' अर्थात् बांग और निमाज़ पर खड़ा होने के पूर्ण वाक्य । आप ने प्रातःकाल यह स्वप्न हजरत साहिब के आगे वर्णन किया । आप ने आदेश किया, 'यही निमाज़ के लिये बुलाने की हमारी बांग है ।' एक अन्य सहाबी ने भी बिल्कुल यही चित्र देखा । जुमआ़ का आरम्भ भी मदीने में हुआ और सब से पहिला जुमआ़, जो आप ने पढ़ा, वह दिन था, जब आप क़बा से निकल कर नगर की ओर आए ।

हिजरतियों और अनसारियों का भ्रातृत्व—निमाज़ के प्रबन्ध के पीछे दूसरी आवश्यकता, हिजरत करने वालों का प्रबन्ध करना था कि जब तक परम पिता इनके लिए कोई सुख का साधन उपस्थित नहीं करता, उनके रहने आदि का कुच्छ प्रबन्ध हो

जावे। इन में से बहुत से लोग चाहे धनाढ्य थे, किन्तु मक्के में से उन को छिप कर और अपनी सब धन दौलत और सम्पत्ति छोड़ कर भागना पड़ा था। आप ने हिजरतियों के कष्टों के निवारण का यह प्रबन्ध किया कि एक एक हिजरती और एक एक अनसारी में भ्रातृ-भाव (सांझी-दारी) करा दिया अर्थात् दो दो को भाई भाई बना दिया। यह बिरादरी का सम्बन्ध जिस सहानुभूति और प्रेम की आत्मा का परिणाम था, उसी प्रकार का प्रेम, अनसार ने अपने हिजरती भाईयों के साथ करके दिखाया। जिसको जिस का भाई बनाया गया, उसने अपने साथी को घर लेजाकर प्रत्येक वस्तु का आधा भाग दे दिया और अपना आधा मकान भी रहने के लिए दे दिया। अनसार की यह भी इच्छा थी कि हिजरतियों को अपनी आधी आधी खेतियां भी दे दें, क्योंकि अनसार अधिकतया खेती-बाड़ी का काम करते थे। परन्तु हिजरती लोग व्यापार करने वाले थे। अतः हज़रत साहिब ने उन्हें इस बात से रोक दिया। तब अनसार ने यह निश्चय किया कि मेहनत और खेती-बाड़ी का काम स्वयं करें और आधी पैदावार अपने

हिजरती भाईयों को दे दें। यह प्रीति का सम्बन्ध यहां तक दृढ़ हुआ कि सगी रिश्तेदारी के सम्बन्ध भी पीछे रह गये और जब इन दोनों भाईयों में से एक का देहान्त हो जाता तो दूसरा उस की सम्पत्ति का स्वामी बन जाता। किन्तु पीछे क़ुरान करीम ने इस बात से रोक दिया और केवल निकटस्थ सम्बन्धि ही सम्पत्ति का उत्तराधिकारी हो सकता था।

हिजरतियों का खेती से व्यापार को अच्छा समझना—हिजरती भी ऐसे नहीं थे कि अपने भाईयों के लिए बोझ बन जाते और मुफ़्त की कमाई खाते। हज़रत अब्बुल-रहमान-बिन-औफ को जब साअद-बिन-अलरबीह ने प्रत्येक वस्तु का आधा भाग देना चाहा तो उन्हों ने इस सहानुभूति का धन्यवाद करते हुए कहा—'मुझे बाज़ार का रास्ता दिखादो।' अतः उन्हों ने थोड़े ही दिनों में व्यापार करके बहुत सा धन कमा लिया। अन्य हिजरतियों ने भी व्यापार का कारोबार प्रारम्भ कर दिया। कई ऐसे भी थे, जिन्हें और कोई काम नहीं मिलता था तो बाज़ार में मज़्दूरी करके कुच्छ कमाते। इसी

में से आप खाते और कुच्छ जातीय बैंक में जमा करते ताकि मुसलमानों की भलाई पर व्यय हो। ईश्वर करे कि यह सद्भाव आज भी मुसलमानों में हो और वह मेहनत से जी न चुराएँ और जो कुच्छ इस से कमावें, उस का एक भाग अपने तथा अपने बाल बच्चों पर व्यय करें और एक भाग अवश्यमेव परमात्मा के नाम पर अपनी जाति की भलाई के लिए दें।

सन् ४ हिजरी में जब बन्नो नसीर देश से निकाले गए तो उन की ज़मीनें मुसलमानों के अधिकार में आईं। तब हिजरतियों के कष्टों को दूर करने के लिए यह ज़मीनें उन्हें देने का निश्चय किया गया। अनसार ने अत्यन्त प्रसन्नता से इस प्रस्ताव को स्वीकार किया। अपितु यहां तक उदारता का परिचय दिया कि हज़रत साहिब की सेवा में बिनती की कि यह ज़मीनें भी हिजरतियों को ही दी जावें और हमारे खजूरों के बागों में भी वह भागीदार हों। कई हिजरतियों को अनसार ने रहने के लिए अपने मकान बनाने के वास्ते पहिले से ही अपनी ज़मीन दे दी थी। व्यापार की बरकत से थोड़े ही

दिनों में मुसलमान हिजरतियों पर भगवान् ने इतनी कृपा की कि लिखा है कि कतिपय सहाबा का व्यापार का सामान सात सात सौ ऊँटों पर लद कर आता था। एक समय तङ्गी और कष्टों का वह भी था कि एक अभ्यागत हज़रत साहिब के पास आ गया तो आप ने अपने घर में खाने के लिए कुच्छ भी न देख कर सहाबा को कहा कि कोई इसको अपना अतिथि बनाए। अबु-तलिहा इसको अतिथि बना कर ले गये तो पता लगा कि केवल इतना खाना है कि बच्चों का ही पेट भर सकता है। अन्त में दीपक बुझा कर अबु-तलिहा और उस की सुपत्नी खाली मूंह हिलाते रहे और अतिथि का पेट भरा। फिर एक समय वह भी आया कि परमात्मा ने व्यापार की बरकत से मुसलमानों को बहुत ही अच्छे गुज़ारे वाले कर दिया। न पहिली दशा में, जो निर्धनता की अवस्था थी, उन्हों ने कोई शिकायत का शब्द मूंह से निकाला और न दूसरी दशा में जब बहुत से घरों में अच्छा धन धान्य हो गया, उन्हों ने ईश्वर के दिए हुए धन को नष्ट किया। अपितु जो उन में से सन्तुष्ट थे, वह निर्धनों की पूर्ण खबरगीरी करते और

विशेषतया असहाबि-सुफ़ा का—जो सारा दिन नबी की दर्गाह (सेवा) में धार्मिक शिक्षा के लिए उपस्थित रहते और रात्रि को ईश्वर भक्ति करते बहुत ध्यान रखते। इन में से ही दीन के प्रचारकों का वह समूह उत्पन्न हुआ, जिन्होंने भिन्न २ क़बीलों और जातियों में जाकर इस्लामी मत की शिक्षा दी। इनमें से ही एक प्रकाशमान् हीरे, हज़रत अबु-हरारा हैं, जिन्हों ने नबी की हदीसोंकी विस्तृत घटनाओंका बहुत सा भाग हम तक पहुंचाया है। क्योंकि इन लोगों की आजीविका का कोई प्रबन्ध नहीं था, इसलिये धनवान् सहाबा इनको अपने घरों में खाना खिलाने के लिए ले जाते। लिखा है कि हज़रत साअ़द-बिन-उबादा किसी किसी समय ८०—८० अतिथियों को अपने घर ले जाते थे।

मुसलमानों और यहूदियों में सन्धियां—

तीसरी बड़ी आवश्यकता जिस की ओर मदीने में आते ही नबी करीम ने ध्यान दिया, मदीने की भिन्न-भिन्न जातियों में मिलाप कराना था। यहूदी यहां एक बड़ी शक्तिशाली जाति थे और यह लोग औस तथा खज़रज के आपस के युद्धों में सहायक

बन कर सम्मिलित होते थे । ज्ञात होता है कि वास्तव में यह लोग अरबी नसल के थे। यहूदी मत धारण करने के कारण भिन्न जाति बन गए थे। मदीने में इनके तीन क़बीले थे—बन्नों कैनकाह, बन्नों नसीर और बन्नों कुरीज़ा। दूसरी जाति वहां औस तथा ख़ज़रज के दो क़बीले थे, जिन की आपस में सर्वदा लड़ाई रहती थी। यहूदियों के दो बड़े क़बीलों में से बन्नों कुरीज़ा औस के सहायक होते थे और बन्नों नसीर ख़ज़रज के। अब ख़ज़रज और औस का अधिक भाग मुसलमान हो गया। इन में से जो काफ़िर रह गए, वह बहुत थोड़े थे। इस लिए नबी करीम ने मुसलमानों और यहूदियों में एक सन्धि की नींव रखी, जिस पर यहूदी राज़ी हो गए। इस सन्धि-पत्रकी बड़ी २ शर्तें यह थीं किः—

प्रथम—मुसलमान और यहूदी दोनों एक ही जाति की आज्ञा के आधीन होंगे।

द्वितीय—दोनों पक्ष अपने २ धर्म्म पर रहेंगे। कोई पक्ष दूसरे पक्ष से घृणा नहीं करेगा।

तृतीय—दोनों पक्षों में से यदि किसी पक्ष को युद्ध करना पड़ेगा तो एक पक्ष, दूसरे पक्ष की (यदि वह

दुःखी होगा, तो) सहायता करेगा।

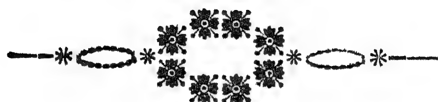
चतुर्थ—मदीने पर आक्रमण हो तो दोनों पक्ष मिल कर इस को दूर करेंगे।

पंचम—यदि सन्धि करेंगे तो दोनों पक्ष सन्धि करेंगे।

षष्ट—मदीना दोनों पक्षों के लिए माननीय स्थान होवेगा अर्थात् इसके भीतर युद्ध आदि नहीं होगा।

सप्तम—झगड़ों का अन्तिम निर्णय हज़रत साहिब करेंगे।

यहूदियों ने किस प्रकार इन प्रतिज्ञाओं को तोड़ा इस का वर्णन आगामी पृष्टों में आवेगा।



१५—बदर का युद्ध



"और निश्चय ही परमात्मा ने तुम्हें बदर में सहायता दी, जब तुम शक्ति-हीन थे।

(अल इमरान—१२२)

मदीने में क़ुरैश के विरोध का प्रभाव—

मदीने में आकर मुसलमानोंको धार्मिक-स्वतन्त्रता प्राप्त हो गई, मस्जिदें बन गईं, बांग दी जाने लगी और कोई छेड़-छाड़ करने वाला न रहा। परन्तु इस के यह अर्थ नहीं कि अब इस्लाम के शत्रु शेष नहीं रहे थे। यदि एक ओर मदीने के अन्दर धार्मिक स्वतन्त्रता प्राप्त थी तो दूसरी ओर इस्लाम के शत्रु जोश में और संख्या में पहिले की अपेक्षा अधिक हो गए थे। जब मुसलमानों ने हबशमें हिजरत की तो उस समय भी क़ाफ़िरों ने इनका पीछा करके तथा नज्जाशी के पास डैपूटेशन भेजकर इनका सत्यानाश करने का पक्का इरादा किया था। अब जब आप नबी करीम और सहाबा को एक

और स्थान पर शान्ति की जगह प्राप्त हो गई तो क़ुरैश भला इसे कैसे संतोष की दृष्टि से देख सकते थे। अब्दुल्ला-बिन-उब्बी नाम का एक पुरुष मदीने में था, जिसको हज़रत साहिब के आने से पहिले मदीने के लोग अपना बादशाह बनाने को उद्यत थे। आप के आने पर इस पुरुष ने विरोध करना प्रारम्भ कर दिया। क़ुरैश ने इसको लिखा कि तू हज़रत मुहम्मद को मदीने से निकाल दे। परन्तु इस की जाति के लोग बड़ी भारी संख्या में मुसलमान हो चुके थे, इस वास्ते ऐसा करने में उस को घरेलू-युद्धकी सूरत नज़र आती थी। जब इधरसे सफलता न हुई तो क़ुरैश ने उन क़बीलोंको जो मक्के और मदीने के मध्य में थे, मुसलमानों के विरुद्ध भड़काना शुरू किया। पहिले तो क़ुरैश का वैयक्तिक (ज़ाती) प्रभाव बहुत था, क्योंकि ख़ाना क़ाअ़बा के महन्त होने के कारण अ़रब की समस्त जातियां इनका मान करती थीं। दूसरे मुसलमानों की शक्ति अभी बहुत कमज़ोर थी और इनका विरोध सारे अ़रबमें एक समान ही था। इसलिए उक्त क़बीलों का क़ुरैश के प्रभाव में आ जाना मामूली बात थी। क़ुरैशों ने जब इस

में सफलता प्राप्त कर ली तो मुसलमानों को अपनी रक्षा की चिन्ता पड़ी । क्योंकि मदीने को छोड़ कर चारों ओर शत्रु ही शत्रु थे और मदीने में भी विरोध भीतर ही भीतर विद्यमान था, चाहे प्रकटतया दबा हुआ था । अब्दुल्ला-बिन-उब्बी का वर्ताव बड़ा सन्देहास्पद था । प्रतिज्ञा और सन्धियों के होते हुए भी यहूदियों पर कोई भरोसा नहीं किया जा सकता था ।

छोटे २ जत्थों के बाहिर निकलने का भाव—क़ुरैश के छोटे-छोटे जत्थे भी फिरते थे । अतः एक बार मदीनेकी बारगाह पर हल्ला बोल कर ऊँट ले गए । इधर हज़रत साहिबको आज्ञा हो चुकी थी, कि क्योंकि अब शत्रुओं ने मुसलमानों का अस्तित्व मिटानेके लिए तलवार उठा ली है, अतः तुम लोग भी अपना बचाव करने के लिये तलवार उठा सकते हो । परन्तु लड़ाई के लिए शर्त रखी गई अर्थात् केवल उन लोगों के साथ लड़ाई करने की आज्ञा दी गई, जो स्वयं तलवार उठाने के लिये पहल करें और मुसलमानों को पहल

करने से रोका गया। जब शत्रु ने युद्ध की तय्यारी प्रारम्भ कर दी तो हज़रत साहिब को अपनी रक्षा के तौर पर कुच्छ बचाव के उपाय सोचना आवश्यक प्रतीत हुए। इस दशा में सब से पहिले यह आवश्यक था कि आस-पास के समाचारों की सूचना प्राप्त की जावे और साथ ही मदीने के समीपस्थ क़बीलों से सन्धि-चर्चा की नींव रखी जावे। इसी कारण से आपने भिन्न २ समयों पर छोटी २ टोलियां सभा ओर भेजना प्रारम्भ कीं। एक तो इसलिए कि शत्रु के हाल-चाल का पता लगता रहे और दूसरे इसलिए कि शत्रु को पता लगता रहे कि मुसलमान बे-ख़बर नहीं हैं। तीसरे इसलिए कि कई कबीलों को निष्पक्ष रखने का प्रयत्न किया जावे या इन के साथ समझौता हो जावे और इस प्रकार शत्रु को आक्रमण करने का हौसला ही न पड़े। एक उद्देश्य यह भी था कि क़ुरैश को इस बात का ध्यान रहे कि यदि उन्हों ने मुसलमानों के साथ छेड़ छाड़ की तो उनका शाम देश का व्यापार, जिस पर उनका धनाढ्य होना निर्भर था, रुक जावेगा। यह वह बात थी जिस की धमकी मदीने के अनसार ने क़ुरैश को

पहिले भी दी थी । अतः जब साअ़द-बिन-मुआ़ज़ को, जो हज्ज करने गया था, अबु-जहल ने कहा कि यदि तू अमुक व्यक्ति के संरक्षण में न होता तो हज़रत मुहम्मद को आश्रय देने के अपराध में जीते जी बच कर न जा सकता । तो साअ़द ने कहा कि यदि तुमने हमें हज्ज से रोका तो हम तुम्हारा मदीने का मार्ग रोक देंगे । परन्तु इस बात के होते हुए भी कि यह छोटी २ टोलियां बाहिर भेजी जाती थीं, उनको आज्ञा यही होती थी कि वह युद्ध न करें ।

काफ़िर कबीलों के साथ सन्धियां—

इन टोलियों के फ़िरने का प्रभाव यह हुआ कि मदीने के आस पास के कई कबीलों ने हज़रत साहिब के साथ समझौता कर लिया, चाहे यह सभी एक ईश्वर को मानने वाले नहीं थे । इन में से एक समझौते के शब्द नीचे लिखे अनुसार हैं, और इस से ही पता लगता है कि यह समझौते किस रङ्ग के थे :—

"यह रसूल करीम द्वारा लिखित है, बन्नो हमज़ा के वास्ते इन लोगों का जीवन और इनकी धन सम्पत्ति रक्षा में रहेगी और जो व्यक्ति इन पर

आक्रमण करेगा, उसके मुक़ाबिले में इन की सहायता की जाएगी, बग़ैर इस अवस्था के, कि यह लोग धर्म्म के मुक़ाबिले में लड़ें और पैग़म्बर जब इनको सहायता के लिए बुलाएँगे यह सहायता के लिए आएँगे।" अतः यह समस्त समझौते रक्षा के लिए थे और क़ुरैश के आक्रमणों से बचाव के लिये। इन्हीं घटनाओं में से एक वह घटना है कि जिससे क़ाफ़िरों में जोश पैदा होकर बदर के युद्ध की नींव बँधी और वह घटना इस प्रकार है कि जमादी-उस्मानी सन् २ हिजरी के अन्त में नबी करीम ने अब्दुल्ला-बिन-हजश को कुच्छ पुरुषों के साथ भेजा और एक पत्र दिया, जिस के सम्बन्ध में यह वचन था कि दो दिन के बाद खोला जावे। अतः जब वह पत्र समय पर खोला गया तो उसमें आज्ञा थी कि नख़ला के स्थान पर पहुंच कर क़ुरैश के हालात का पता लगाया जावे। यह तो प्रकट ही है कि नबी करीम भली प्रकार जानते थे कि आप में इतनी शक्ति नहीं कि क़ुरैश पर आक्रमण कर सकें (अपितु इससे छः वर्ष बाद तक भी आप क़ुरैश पर कोई आक्रमण नहीं कर सके, सदा क़ुरैश ही चढ़ाई करके

आते और मदीने पर हमला करते)। अतः क़ुरैश के हालात की छान-बीन का अभिप्राय केवल अपने लिये उन की चाल ढाल से जानकारी रखना था कि ऐसा न हो कि बे-ख़बरी में ही वह हमला करके मुसलमानों को नष्ट कर दें। ईश्वर ने आप को नबी बनाया और अब एक छोटी सी जाति का शासन भी आप के सुपुर्द कर दिया। आप का कर्त्तव्य था कि उस समूह की, जिस का शासन आप के हाथ में था—शत्रु से पूरी रक्षा करते और एक दूरदर्शी सेनापति की भांति शत्रु की चालों की ख़बर रखते। नबी तो आते ही कुच्छ क्रियात्मिक शिक्षा देने के लिए हैं, अतः आपने अपने शासन के उत्तरदायित्व को पूरे तौर पर निभा कर बता दिया कि जाति के नेताओं को अपना नहीं अपितु जाति की रक्षा का फ़िक्र होना चाहिए। बात क्या? जब अब्दुल्ला-बिन-हज्जश ने यह पत्र खोला और इस के अनुसार वह नख़ला के स्थान पर पहुंचा तो ईश्वर की महिमा, उस को कुच्छ क़ुरैश के मनुष्य दिखाई दिए, जो व्यापार का माल शाम देश से ला रहे थे।

अब्दुल्ला-बिन-हज़रमी का वध—जो आदेश

किए गए थे उनकी सीमा का उल्लंघन करते हुए उस ने इस जत्थे पर आक्रमण कर दिया, और अब्दुल्ला बिन-हज़रमी का वध कर दिया और अन्य दो को पकड़ लिया। नबी करीम को जब इस घटना की सूचना मिली तो आप ने आदेश किया कि मैंने तुझे इस बात की आज्ञा नहीं दी थी। और कई सहाबा ने भी उस को कहा कि तुमने वह कार्य्य किया है जिस की तुम्हें आज्ञा नहीं दी गई थी।

क़ुरैश की युद्ध के लिए तय्यारियां—

क़ुरैश जो उस समय मदीने पर आक्रमण करने के लिए बहाना ढूँढ रहे थे, अब उन्हें अवसर हाथ लगा और इबन-हज़रमी के वध को दृष्टि में रखते हुए उन्हों ने लोगों को भड़काना आरम्भ कर दिया कि रज्जब का महीना तो मध्य में सत्कार योग्य मास था। शाअ़बान का महीना ज्ञात होता है, उन्होंने इसी मास में युद्ध की तय्यारियां प्रारम्भ कर दीं और रमज़ान के मास में मदीने पर हल्ला बोल दिया और बदर का युद्ध हुआ। यदि क़ुरैश की नियत मुसलमानों को नष्ट करने की न होती तो ऐसे वध (इबन-हज़रमी जैसे) ग़लती से अ़रब में प्रतिदिन

ही हो जाते थे और उन में—जैसा कि अब भी नीतिवान् राज्यों में नियम है—खून का बदला मांगा जाता था, किन्तु इन की इच्छा तो पहिले ही से कुच्छ और थी। मुसलमानों का मदीने में जाकर बसना, बढ़ना-फूलना और स्वतन्त्रता से जीवन व्यतीत करना वह कहां सहन कर सकते थे। सर्व साधारण को इस युद्ध के लिए उभारना कठिन काम था, अतः उन के लिए इबन-हज़रमी के वध का बहाना मिल गया और सबसे प्रथम युद्ध जो बद्र के युद्ध के नाम से प्रसिद्ध है, पेश आया।

व्यापारिक काफ़िला—कारण-वश इन्हीं दिनों क़ुरैश का एक व्यापारिक जत्था अबु-सुफ़ीआन के नेतृत्व में शाम देश से वापिस आ रहा था। उस ने चलने से पहिले अपना एक प्रतिनिधि मक्के दौड़ाया कि रक्षा का कुच्छ प्रबन्ध करो। परन्तु क़ुरैश को वास्तव में इस बात की किंचिन्मात्र भी पर्वाह नहीं थी क्योंकि यह जत्था पहिले भी तो वहीं से गुज़र कर आया था। अतः युद्ध की तय्यारी में जत्थे की रक्षा की चर्चा क़ुरैश में नहीं हुई। केवल इबन-हज़रमी के बध का बदला लेने का जोश था। कई

नीतिवानों, जैसा कि हकीम बिन-हज़्ज़ाम ने, जो पीछे मुसलमान हुए और हज़रत साहिब के पुराने साथियों में से थे, क़ुरैशियों को युद्ध से रोकना भी चाहा, किन्तु अबु-जहल के सामने उनकी पेश न गई और एक हज़ार की शक्तिशाली सेना हर प्रकार की युद्ध की सामग्री से सन्नद्ध-बद्ध होकर मदीने की ओर बढ़ी।

मुसलमानों की मुक़ाबले के लिए तय्यारी—इधर नबी करीम को समाचार मिल गया कि क़ुरैश इस प्रकार तय्यार होकर निकले हैं। आप ने इकदम सहाबा की एकत्रता की। सब सहाबा ने अपना २ जीवन हाज़िर किया। अनसार तो पहिले ही प्रतिज्ञा कर चुके थे कि हज़रत साहिब की रक्षा उसी प्रकार करेंगे कि जिस प्रकार अपने परिवारकी करते हैं। किन्तु युद्धक्षेत्र में बाहिर निकलना और बात थी और मदीने के अन्दर रहकर बचाव करना और था। जब हज़रत साहिब ने इनकी ओर देखा तो उन्होंने भी आज्ञा पालने में नतुनच न की। इस बात के होते हुए भी जिस प्रकार कि क़ुरान शरीफ़ के सूरा अनफ़ाल में वर्णित है, मुसलमानों में से

कुच्छ लोग इसको बड़ी कठिन समस्या समझते थे। वह समझते थे कि हमें मृत्यु के मुख में धकेला जाता है* क्योंकि वह शत्रु की शक्ति और अपनी निर्बलता से भली-भांति परिचित थे। फिर भी जितने व्यक्ति मिल सकते थे, उन्हें लेकर आप निकल पड़े। कुच्छ छोटी आयु के बच्चे भी थे। कईयों को आप ने लौटा भी दिया, किन्तु कईयों ने सम्मिलित होने के लिए विशेष अनुरोध किया। कुल संख्या तीन-सौ-तेरह थी। क़ुरैश के मुकाबिले में युद्ध की सामग्री कुच्छ भी नहीं थी। परन्तु इस समय पीछे हटने से इस्लाम ही नष्ट होता था, अतः ईश्वर पर भरोसा रख कर यह छोटी सी सेना उस सड़क की ओर बढ़ी, जो मक्के से शाम को जाती है। जब मुसलमानों का समूह बदर के स्थान पर पहुंचा—जो बदर नाम के एक कुएँ के कारण प्रसिद्ध है—तो क़ुरैश की सेना वहां पहिले ही से उपस्थित थी। आप ने भी वहीं डेरे लगा दिये।

*मोमनों में से एक जत्था नितान्त अप्रसन्न था। तेरे साथ सत्य के बारे में झगड़ा करते हैं, इसके पीछे कि इन पर यह बात साफ़ प्रकट हो चुकी है कि किस प्रकार वह मृत्यु की ओर हांके जाते हैं।" (अनफ़ाल ५—६)

काफ़िरों की ओर से आक्रमण करने की पहिल—अबु-सुफ़िआन की टोली अस्ली मार्ग से समुद्र की ओर होती हुई, इन दोनों सेनाओं के बदर पहुंचने से पहिले ही निकल चुकी थी। अब भी कई लोगों ने अबु-जहल को सलाह दी कि वापिस लौट जाना चाहिए। परन्तु यह मुसलमानों को नष्ट करने पर तुला बैठा था, इस लिए उसने किसी की एक न मानी। हज़रत साहिब ने अब भी हमले में पहिल नहीं की। आप का जत्था संख्या की दृष्टि से क़ुरैश की सेना का तीसरा भाग था। इसके अतिरिक्त, एक ओर तो युद्ध के अनुभवी वीर सैनिक थे और दूसरी ओर कच्ची आयु के लड़के भी सम्मिलित कर लिए गए थे। अतः हज़रत साहिब अत्यन्त चिन्तातुर थे। आप एक छोटी सी झौंपड़ी में जो आप के लिए तय्यार की गई थी, ढाडें मार २ कर रोते थे और ईश्वर के दरबार में बिनती करते थे कि "हे जगत् पिता! यदि तूने इस छोटे से समूह को मार दिया तो भू-मण्डल पर तेरी भक्ति करने वाला और तेरी एकता का सन्देश पहुंचाने वाला कोई नहीं रहेगा। फिर आपने दो रुकअ़त निमाज़ पढ़ीं

और कुच्छ बे-होशी सी आपको आई। फिर आप मुसकराते हुए झौंपड़ी से बाहिर निकले और कुरान करीम की यह आयत जो कितनी ही देर पहिले की उतरी हुई थी, आप ने ऊँचे स्वर से पढ़ी :–

"काफ़िरों की सेना को हार होगी और वह पीठ मोड़ कर भाग जावेंगे।"

युद्ध और मुसलमानों की विजय—दूसरी ओर से काफ़िरों की सेना सज धज कर निकली। हजरत साहिब ने अपनी सेना को आक्रमण करने से रोक दिया था, क्योंकि आप को आज्ञा यही थी कि काफ़िर पहिल करें, तब आप बचाव के लिए लड़ें। अन्त में काफ़िरों की सेना में से तीन बीर बढ़े और अपने मुकाबिले के लिए मुसलमानों में से तीन व्यक्तियों को ललकारा। अ़रब की लड़ाईयों में यह रिवाज था कि पहिले कुच्छ बीर, शत्रु के वीरों के साथ अकेले २ लड़ा करते थे। अतः मुसलमान वीर भी सामने निकले। तीनों क़ुरैशी, मुसलमान वीरों के हाथों मारे गए। कुच्छ और ऐसे ही भिड़न्तें होने के पश्चात् आ़म युद्ध हुआ। मुसलमान अपने स्थान पर डटे रहे। जिस समय काफ़िर इन की ओर बढ़े तो

उन्होंने उत्तर दिया। परम पिता की शक्तियों का दृश्य था कि क़ुरैश के बड़े बड़े सर्दार, जो इस्लाम का नाश करने पर तुले हुए थे और नबी करीम के विरोध में पूरी शक्ति लगाते थे, युद्ध क्षेत्र में मारे गए। अबु-जहल दो अनसारी युवकों के हाथों मारा गया। कुल ७० मनुष्य वैरियों की सेना में से मरे। क़ुरैश के बड़े २ सरदारों को मरते देख कर सेना के पैर उखड़ गए। मुसलमानों ने पीछा किया और लग भग ७० व्यक्तियों को पकड़ लिया। मुसलमानों में से केवल १४ शहीद हुए।

ईश्वरीय सत्ता का दृश्य—बदर के युद्ध में परमात्मा की शक्ति का जो दृश्य देखने में आया, ऐसे दृश्य संसार में अधिकतया दृष्टि गोचर नहीं होते। यह तो कई बार होता है कि एक छोटी सी सेना, जिस के साथ अति उत्तम युद्ध की सामग्री हो, जिसके सैनिक वीरता में बढ़ चढ़ कर हों और जिस की जत्थे-बन्दी शक्ति शाली हो, वह एक बड़ी सेना पर जिस में यह बातें इस प्रकार की न हों, विजय प्राप्त कर ले परन्तु बदर के युद्ध में जो आश्चर्य जनक बात इन दोनों सेनाओं में दृष्टि गोचर होती है, वह यह

है कि प्रत्येक प्रकार की निर्बलता एक ओर है और सब प्रकार की शक्ति दूसरी ओर। क़ुरैश की सेनाकी संख्या मुसलमानों से तिगुनी है, युद्धक्षेत्र में यह पहिले पहुंचे हैं और उन्हों ने अच्छे स्थान पर अधिकार जमा लिया है; उनमें बड़े २ अनुभवी वीर हैं, जिनका काम ही प्रारम्भ से युद्ध रहा है। युद्ध-सामग्री तथा शस्त्रास्त्र इतने हैं कि प्रत्येक सैनिक कवचधारी है। एक-सौ अश्वारोही भी हैं, सात-सौ ऊँट हैं और एक मुट्ठी भर समूह को नष्ट करने के लिए उनके हृदयों में जोश है। इसके विरुद्ध मुसलमानों को लड़ाई के मैदान में अच्छा स्थान नहीं मिला। गिनती में एक हज़ार के मुक़ाबले में तीन-सौ-तेरह हैं। इनमें से ऐसे नव-युवक भी हैं, जिनकी आयु अभी लड़ाई की नहीं। घोड़े केवल दो हैं, ऊँट सत्तर हैं, युद्ध की सामग्री न होने के बराबर है। अनसार खेती-बाड़ी का काम करने के कारण लड़ाई में क़ुरैशियों की समता नहीं कर सकते। हिजरत करने वालों में अधिकतया बूढ़े हैं, जिन को अभी तक पेट भर खाने को भी नहीं मिलता था। सारांश—कुल शक्तियां एक ओर एकत्रित हो गईं और कुल निर्बलताएँ दूसरी ओर। परन्तु

इन निर्बलों के सिर पर परमपिता परमात्माका शक्तिशाली हाथ है और बलवान् वही हाथ, अपनी शक्ति प्रकट करता है और इन निर्बलों की सहायता करता है, जिसको मानुषिक-दृष्टि देख नहीं सकती।

बन्दियों के साथ बर्ताव—युद्धक्षेत्र में जो क़ैदी पकड़े गए थे, उन के साथ बड़ी उच्च-कोटि का बढ़िया बर्ताव करने की आज्ञा हुई। इनमें अधिक लोगों के हृदयों में मुसलमानों के इस प्रेम-भरे व्यवहार के कारण इस्लाम ने स्थान बना लिया। एक क़ैदी पीछे स्वयं वर्णन करता है कि जिन लोगों के पास मैं क़ैदी था, उन के घर जब रोटी खाने का समय होता तो बढ़िया खाना मुझे देते और स्वयं खजूर आदि खा लेते। मुसलमानों ने अपने कट्टर विरोधियों के साथ बढ़िया बर्ताव करके बता दिया कि उनके हृदय कितने विशाल हैं। मित्र तो कहीं रहे, यह वैरियों के साथ भी भलाई कर सकते हैं। अन्त में इस बात के होते हुए भी अभी दोनों पक्षों में युद्ध समाप्त नहीं हुआ था, इन बन्दियों को रुपया लेकर छोड़ दिया गया। कई निर्धनों को बग़ैर पाई पैसा लिए छोड़ दिया गया और जो लोग लिखना

जानते थे, उनसे इतना बदला ही पर्याप्त समझा गया कि वह दस-दस बच्चों को लिखना सिखा दें। चार हज़ार दिरम के स्थान पर केवल लिखना सिखा देने को काफ़ी समझना प्रकट करता है कि हज़रत साहिब के हृदय में विद्याके लिये कितना आदर था। हारे हुए वैरी के साथ हज़रत साहिब ने कभी सख़्ती नहीं की थी। क़ाफ़िरों के हाथों इतने कष्ट पाने के अनन्तर यदि चाहते तो इन लोगों को महान् कष्ट देकर मरवा सकते। परन्तु जब एक पुरुष के सम्बन्ध में जो प्रभावशाली उपदेशक होने के कारण सभाओं में मुसलमानों के विरुद्ध अत्यन्त प्रभावपूर्ण व्याख्यान दिया करता था, आप के पास यह विनती की गई कि इसके दो दांत उखड़वा दिये जायें, ताकि आगे के लिए यह मुसलमानों के विरुद्ध ऐसे व्याख्यान न दे सके, तो आपने आदेश किया कि "यदि मैं इसके अंग बिगाडूं, तो परमपिता परमात्मा मेरे अंग बिगाड़ेगा।"

एक खुला निशान—बदर के युद्ध में मुसलमानों को जो सफलता हुई, इस ने क़ुरैश की शक्ति को तोड़ दिया और इस्लाम की जड़ें पक्की कर दीं। यहूदियों

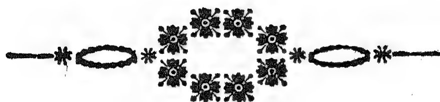
और आस पास के क़बीलों पर भी बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा और वह मन में विचार करने लगे कि यदि ईश्वर का बलवान हाथ इस मनुष्य के साथ नहीं तो इतनी बड़ी सेना किस प्रकार मुट्ठी भर व्यक्तियों के हाथों हार खा गई। यह लोग जो इस्लाम के कट्टर और पहिले वैरी थे, सब के सब इस क्षेत्र में मृत्यु को प्राप्त हुए। यह एक ईश्वरीय निर्णय प्रकट करता है कि झगड़ा करने वाले इन दोनों पक्षों में, जिस में से एक बलवान पक्ष एक निर्बल जाति को, केवल इस लिए नाश करने पर तुला हुआ था कि वह एक ईश्वर के पूजक हैं, और सब से आश्चर्य्य जनक बात यह है कि यदि एक ओर ठीक युद्ध क्षेत्र में हज़रत साहिब रो रो कर प्रार्थना करते थे तो दूसरी ओर अबु-जहल ने भी इन शब्दों में प्रार्थना की, कि "हे परमात्मा! हमारे दोनों पक्षों में से जो पवित्र सम्बन्धों को काटने वाला और भू-मण्डल पर लड़ाई झगड़ा फैलाने वाला है, उस को इस युद्ध में मार दे।" युद्ध के लिए प्रस्थान करने के समय क़ाअ़बे के पर्दे को पकड़ कर भी क़ुरैश ने इसी प्रकार की प्रार्थना की थी कि इस युद्ध में परमेश्वर उस पक्ष

को सहायता करे और विजय करावे, जो सत्य पर हो। अतः यह ईश्वरीय-निर्णय था और इसी वास्ते कुरान शरीफ़ने इसको केवल एक युद्धकी विजय ही नहीं बताया। अपितु इसका वर्णन करते हुए कहा कि 'जो मारा जाता है, वह दलील (तर्क) के साथ मारा जावे और जो जीता रहता है वह तर्क (दलील) के साथ जीता रहे।' इस ईश्वरीय निर्णय ने यदि एक ओर विरोधियों की कमर तोड़ दी, तो दूसरी ओर मुसलमानों ने भी उन प्रतिज्ञाओं को पूरी होते देख लिया, जो दस बारह वर्ष से लगातार उनके साथ की जा रही थीं, जब कि वह बड़ी शोचनीय अवस्था में थे और सभी ओर से दुःखों और कष्टों में घिरे हुए थे, कि इस्लामी मत विजय प्राप्त करेगा और विरोधी परास्त होंगे। इस प्रकार इस्लामी मत की सत्यता उन पर सूर्य्य के प्रकाश के समान प्रकट हो गई।

क़ुरैश सेना और व्यापारिक काफ़िला थाना के साथ मुक़ाबिला—एक अशुद्ध भाव को जो साधारणतया फैला हुआ है और जिस को ग़लती से कई इतिहासकारों ने भी अपनाया है, यहां रद

करना आवश्यक प्रतीत होता है। वह यह है कि नबी करीम शाम से लौटते हुए काफ़िले को लूटने के लिए निकले थे और क़ुरैश की सेना केवल इस काफ़िले की रक्षा के लिए आई हुई थी। प्रकट है कि कुरान शरीफ से बढ़ कर विश्वास योग्य साक्षी अन्य कोई नहीं हो सकती, और कुरान शरीफ में जहां बदर के युद्ध का वर्णन आया हैं, वहां इस प्रकार लिखा है कि पैग़म्बर साहिब को परमात्मा ने विशेष पेश आई आवश्यकता के साथ घर से निकाला। अतः हज़रत साहिब अपनी इच्छा से नहीं सहाबा में से भी किसी की इच्छा से नहीं निकले अपितु ईश्वर की आज्ञा के साथ घर से निकले, और फिर इसके लिए निकले कि कोई विशेष आवश्यकता बन गई जिस के लिये निकलना ज़रूरी था। परमात्मा का हज़रत साहिब के मदीने में से निकलने को अपनी ओर जोड़ना बताता है कि ईश्वर ने किसी विशेष आवश्यकता के लिए निकाला था और वह आवश्यकता पूर्ण हो गई। प्रकट है कि क़ाफ़िला तो हाथ नहीं आया, अतः इस कार्य्य के लिए आप निकले भी नहीं, फिर वहां ही क़ुरान

शरीफ़ में लिखा है कि मुसलमानों में से एक पक्ष रुष्ट था और उसको भयानक कष्ट समझता था। क़ाफ़िले को लूट लेना तो कोई भयानक कष्ट नहीं था अपितु यहां तक लिखा है कि वह लोग इस को मृत्यु के सदृश समझते थे। यह सब कुच्छ इसी अवस्था में ठीक बनता है यदि हज़रत साहिब मदीने में से प्रकटतया क़ुरैश की सेना का मुक़ाबिला करने के लिये निकल रहे हों। क़ुरान शरीफ़ के इन शब्दों के सामने इन इतिहासकारों का कोई लेख कुच्छ भी मूल्य नहीं रखता।



१६—उहद का युद्ध



" और निश्चिन्त हो और न ही निराश हो—और तू ही जीतेगा, जब तू मोमन हो।"

(आल इमरान—१२८)

अबु-सुफ़िआन का मदीने पर आक्रमण— बदर की हार कोई ऐसी चोट नहीं थी कि जिसे क़ुरैश बदला लिये बग़ैर छोड़ देते। सब से बढ़ कर यह बात उन्हें खा रही थी कि उन्होंने एक छोटे से युद्ध-सामग्री से हीन समूह से हार खाई। बदर में क़ुरैश के नेताओं (सरदारों) के मारे जाने से नेतृत्व अबु-सुफ़िआन के हाथ आया और उस ने बदला लेने की सौगन्ध खाई। उधर जितना नफ़ा उस व्यापारिक काफ़िले से हुआ था, जो अबु-सुफ़िआन के नेतृत्व में बदर के युद्ध के समय शाम से वापिस आया था, उसके संबंध में सब लोगों ने प्रतिज्ञा कर ली थी कि उस नफ़े को इस बदला

लेने वाली लड़ाई में खर्च करेंगे, ताकि मुसलमानों को बिल्कुल कुचल दिया जावे। अतः बदर के युद्ध से लग भग १२ मास पीछे सन् ३ हिजरी में अबु-सुफ़िआन तीन हज़ारकी एक बड़ी भारी सेना लेकर मक्के से निकला। स्त्रियां भी योद्धाओं की हिम्मत बढ़ाने और उत्साह देने के लिए साथ थीं। २०० शस्त्रधारी अश्वारोही (घोड़ स्वार) थे। सात सौ मनुष्य कवचधारी थे। ६ शिवाल सन् ३ हिजरी वीरवार वाले दिन इस सेना ने उहद के नीचे—जो मदीने की उत्तर दिशा में तीन मील पर एक पहाड़ है—डेरे लगा दिए और मदीने की चरु भूमियों पर अधिकार कर लिया। हरी भरी खेतियां घोड़ों के लिए काट लीं और ऊँटों को उन में खुला छोड़ कर उजाड़ दिया।

हज़रत साहिब जी का सहाबा के साथ परामर्श—शुक्रवार वाले दिन, जब शिवाल की १० तारीख़ थी, हज़रत साहिब ने सुहाबा को एकत्रित करके सलाह की कि क्या करना चाहिए? लगभग प्रत्येक महान् युद्ध से पहिले आप का सुहाबा की सलाह ले लेना सिद्ध होता है। आप ने अपने कुच्छ

स्वप्न भी बताए। एक स्वप्न में आप ने देखा था कि आप की तलवार की धार कुच्छ टूटी हुई है। आपने इसका अर्थ यह निकाला कि कुच्छ नुकसान पहुंचेगा। और आप ने देखा था कि आप ने अपना हाथ एक दृढ़ कवच में डाला है। कवच से आप ने मदीना समझा अर्थात् मदीना हमारे लिये रक्षा का स्थान है और अन्दर रह कर युद्ध करना चाहिए। आप ने यह भी देखा था कि कुच्छ गौएँ काटी जा रही हैं। इस का अर्थ आपने यह निकाला कि आप के कुच्छ साथी शहीद होंगे। आप की सम्मति यह थी कि मदीने के अन्दर रह कर युद्ध किया जावे। बड़े २ हिजरती और अनसारी भी आप के साथ इस सम्मति में सहमत थे। अब्दुल्ला-बिन-उब्बी, जो बदर के युद्ध के पीछे प्रकटतया तो मुसलमान हो चुका था, किन्तु भीतर से इस्लाम का शत्रु था, उसकी सलाह भी यही थी कि शत्रु की शक्ति बहुत अधिक है, खुले मैदान में उस से टक्कर नहीं ली जा सकेगी। परन्तु अधिक लोगों की जिन में बहुत से नवयुवक थे, यह सलाह थी कि मदीने के भीतर रहने से शत्रु, मुसलमानों की निर्बलता प्रतीत करके अधिक शौर्य्य (दिलेरी) प्रकट करेगा। उन

कहा कि हमारा जातीय गौरव यह सहन नहीं कर सकता कि शत्रु हमारे खेत उजाड़ रहा हो और हम नगर के भीतर बैठे रहें।"

मुसलमानी सेना की अवस्था और जत्थेबन्दी—अन्त में हज़रत साहिब ने स्वयं अपनी राए के विरुद्ध बहु सम्मति के पक्ष में निर्णय किया और कवच पहिन कर बाहिर निकल आए। सायंकाल के समय एक हज़ार मनुष्यों के साथ जिन में केवल दो घोड़े और एक सौ कवचधारी थे, आप मदीने से निकले। थोड़ी दूर जाकर रात काटी। प्रातःकाल होते ही वहां से चल पड़े। किन्तु अब्दुल्ला-बिन-उब्बी अपने तीन सौ साथियों को लेकर वापिस आ गया। और अब केवल सात सौ मनुष्य हज़रत साहिब के साथ रह गए, जिन को अपने से चौगुने से भी अधिक लोगों के साथ टक्कर लेनी थी। यह सात सौ भी सभी के सभी अनुभवी युवक नहीं थे। हां! इस्लामी मत की रक्षा की प्रबल इच्छा और हज़रत साहिब के प्रेम ने बच्चों और बूढ़ों में भी जोश, वीरता और उत्साह उत्पन्न कर दिया था। एक बालक के विषय में लिखा है कि जब आपने इस

को छोटा समझ कर सेना में सम्मिलित न किया तो वह अपने अंगूठों के सहारे ऊँचा हो गया। आप को उस की यह करनी पसन्द आई और उस को सम्मिलित कर लिया। यह देखकर एक और लड़का आगे बढ़ा और बिनती की कि जिसको हज़ूर ने शामिल किया है उस को मैं कुश्ती में गिरा लेता हूं। अतः कुश्ती कराई गई और इसी प्रकार हुआ। आप ने उस को भी सम्मिलित कर लिया। एक वृद्ध व्यक्ति आगे बढ़ा और उस ने कहा कि मैं तो पहिले ही क़बर में पैर लटकाए बैठा हूं, अच्छा हो यदि मैं परमात्मा के रसूल की रक्षा में मारा जाऊँ। इस प्रकार एकत्रित किए हुए सात सौ आदमी लेकर, जिन में बल की कमी को प्रेम ने पूरा कर दिया था, आप तीन हज़ार शस्त्रधारी योद्धाओं का मुक़ाबिला करने के लिए बढ़े। बड़े पहाड़ को पीठ के पीछे रख कर आप ने स्वयं सेना को स्थान-स्थान पर खड़ा किया। सेना की पीठ के पीछे एक दर्रा था, जहां से भय था कि कहीं शत्रु पीछे से आक्रमण न कर दे। वहां आप ने पच्चास धनुर्धारियों को नियत करके आज्ञा की कि चाहे इस्लामी सेना को

जीत प्राप्त हो चाहे हार; तुमने किसी अवस्था में भी इस स्थान को न छोड़ना।

अबु-आमिर—क़ुरैश की सेना के साथ एक ईसाई अबु-आमिर पादरी भी था। यह मनुष्य हज़रत साहिब के मदीने में पधारने से पहिले वहां रहता था और उसकी पवित्रता तथा जप तप के कारण अनसार उसका बड़ा आदर करते थे। हज़रत साहिब के मदीने में आने पर आपको वहां आदर सत्कार मिलने पर यह मनुष्य ईर्षा की अग्नि में जल-भुन कर मक्के चला गया। अब वह क़ुरैश की सेना के साथ आया था कि अनसार पर मेरा इतना दबदबा है कि मेरे कहने पर वह हज़रत साहिब का साथ छोड़ देंगे। जब सेनाएँ एक दूसरे के सामने हुईं, क़ुरैश की ओर से पहिले स्त्रियां गाती हुईं और सेना को उत्साहित करती हुईं आईं। फिर अबु-आमिर आया और अनसार को बताया कि मैं अमुक पुरुष हूं। उन्हों ने इसका अनादर तथा तिरस्कार करके वापिस कर दिया। एक टक्कर शूरवीरों की होकर, जिस में हज़रत हमज़ा ने क़ुरैशों के ध्वजा-धारी तलहा को मार दिया, आम युद्ध प्रारम्भ हुआ।

क़ाफ़िरों को पछाड़—हज़रत अबु-दुजाना एक प्रसिद्ध पहलवान थे। उन्हों ने इतने वेग से क़ाफ़िरों पर हल्ला किया कि कतारों की कतारें चीर कर रख दीं। हज़रत हमज़ा जिस ओर मुंह करते थे, कतारों को उलटाते जाते थे। यहां तक कि एक हबशी दास वहशी ने जिस के साथ विशेषतः पारितोषक देने की प्रतिज्ञा की गई थी, अवसर देख कर एक शस्त्र चलाया, जिस के साथ हज़रत हमज़ा गिर पड़े और एक दम शहीदी प्याला पी गए। मुसलमान इतने वेग से लड़े कि बारी बारी से क़ाफ़िरों के सात ध्वजाधारी मारे गए और उन में से बहुत से आहत हुए। अन्त में क़ाफ़िरों के पैर उखड़ गए और वह युद्ध क्षेत्र से मुंह मोड़ कर उठ दौड़े। यहां तक कि स्त्रियाँ जो इन को उत्साहित कर रही थीं, वह भी अपने कपड़े सम्भालती हुई दौड़ीं। मुसलमानों ने पीछा किया और क़ाफ़िरोंको फिर एक बार हार का स्वाद चखाया। इधर काफ़िर पीछे हटे ही थे कि मुसलमान धनुषधारीयों के एक भाग ने अपने सरदार को कहा कि हम भी पीछा करेंगे। उस ने रोका, किन्तु वह न माने और उस स्थान को छोड़ दिया, जहां हज़रत साहिब ने उनको अन्त

तक खड़ा रहने की आज्ञा दी थी। केवल अब्दुल्ला-बिन जबेर और कुच्छ अन्य व्यक्ति इनके साथ रह गए थे।

धनुष-धारियों की भूल और ख़ालद का आक्रमण—ख़ालद इस समय क़ाफ़िरों की ओर से लड़ रहे थे। उन की तीव्र और दूर की बात देखने वाली आंख ने उस स्थान को खाली देखा तो एकदम अपने दो सौ सवारों को साथ लेकर इधर से हल्ला बोल दिया और शेष धनुष-धारियों को साफ़ करके मुसलमानों की पिछली ओर से ठीक उस समय आक्रमण किया, जब कि वह शत्रु का पीछा करने के कारण असम्बद्ध से हो रहे थे। इधर क़ाफ़िरों की सेना ने ख़ालद को पीछे से हल्ला करते देखा तो एकदम फिर मुक़ाबिले के लिये रुक गए और मुसलमानों की बिखरी हुई सेना दोनों ओर से घिर गई, तथा इतनी शक्तिशाली सेना में जो संख्या में चारगुणा से भी अधिक थी, घिर कर ऐसी अवस्था होने वाली थी कि बिल्कुल नष्ट हो जाते और उनमें से एक जीवधारी भी जीता न बचता। परन्तु सेना का नायक वह पूर्ण पुरुष था जिस को परमपिता ने जीवन के प्रत्येक भाग में पूर्णता प्रदान की थी। उसने जब

सेना को तरतीब दी थी तो एक दूरदर्शी सेनापति की भांति, जीत और हार दोनों को सामने रख लिया था। और पहाड़ को पीठ पीछे रखने के यह अर्थ थे कि कष्ट के समय उसकी ओट में आश्रय लिया जावे। जब मुसलमानों की सेना, शत्रु का पीछा करने में लगी हुई थी तो आप तलहा और साअ़द के साथ पीछे थे। जैसे ही आप ने धनुष-धारियों के स्थान छोड़ देने पर ख़ालद को बढ़ते देखा तो एकदम अपनी सेना की भयानक स्थिति को देख लिया।

हज़रत साहिब का बिखरी हुई सेना को एकत्रित करना।—उस समय दो अवस्थाएँ आप के सामने थीं। या तो आप अपनी जान को बचाने के लिए एक ओर को सुरक्षित स्थान की ओर निकल जाते और सेना को अपने भाग्य पर छोड़ देते और या सेना को बचाने के लिए अपनी ओर बुलाते तथा सब को एकत्रित कर के शत्रु के पंजे से बचा कर सुरक्षित स्थान पर पहुंचा देते। यही दूसरा उपाय आपने ग्रहण किया। मुसलमानों को चारों ओर से घिरा हुआ देख कर और चारों दिशाओं से उन पर तलवारें

बरसती देख कर ऊँचे स्वर से बोले, "हे ईश्वर के बन्दो ! मेरी ओर आकर एकत्रित हो जाओ । मैं ईश्वर का रसूल हूं ।" इस चिन्ताजनक दशामें मुसलमानों के लिए यह वाणी एक ईश्वरीय कृपा थी । उन्हों ने प्रत्येक स्थान पर तलवारें चलाते और युद्ध करते हुए उसी ओर मुख कर लिया । परन्तु जहां इन शब्दों ने लोगों को हज़रत साहिब की ओर खैंचा, वहां शत्रु को भी पता बतला दिया कि आप कहां हैं । फिर क्या था ? वास्तविक उद्देश्य तो इन सब लड़ाईयों और चढ़ाईयों का आप को समाप्त करना था, शत्रु ने अपने हल्ले का पूरा बल इस अवसर पर खर्च किया ।

मुसलमानों की अद्वितीय शूरवीरता—जीवन न्योछावर करने वाले आते जाते थे और अपने जीवन ईश्वर के रसूल को बचाने के लिए बलिदान करते जाते थे । इसी समय में मुसाअ़ब-बिन-उमीर जो हज़रत साहिब के साथ आकृति तथा वेष-भूषा में मिलते जुलते थे, मारे गए और शोर मच गया कि हज़रत साहिब मारे गए । इस ध्वनि से—जो शत्रुओं ने निकाली—मुसलमानों में और भी चिन्ता फैल गई ।

एक सुहाबी को तो इतना शोक हुआ कि उसने तलवार चलानी छोड़ दी । इतने में इन के पास से अनस-इबन-अलनफ़र गुज़रा और उन्हों ने कहा कि रसूल साहिब शहीद हो गए हैं । अनस ने कहा कि यदि आप शहीद हो गए हैं तो हम जीवित रह कर क्या करेंगे । जिस बात की खातिर हज़रत साहिब युद्ध करते थे उस के लिए जंग करो, अर्थात् युद्ध तो इस्लाम की रक्षा के लिए था, उस की अब भी आवश्यकता है । इस प्रकार एक दूसरे का उत्साह बढ़ाते और शत्रु की तलवारों में से निकलते हुए सुहाबा हज़रत साहिब के आस पास एकत्रित हो गए । इस समय तक आप को भी कई घाव लग चुके थे । आप आहत हो कर गिर पड़े । परन्तु एक दम ही आप के चारों ओर मुसलमान सिपाहियों की एक शक्ति शाली दीवार बन गई और सेना का अधिक भाग यहां एकत्रित हो गया । केवल कुच्छ मनुष्य ही इस चिन्ताजनक दशा में वास्तविक सेना से न मिल सके और भाग कर दूर निकल गए । शत्रु के हल्ले का ज़ोर इसी स्थान पर था । परन्तु जीवन-न्योछावर करने वालों की यह अवस्था थी कि इस मनुष्यों की

दीवार में कोई अन्तर नहीं होता था। इधर जत्थे-बन्दी के दोबारा स्थापित हो जाने से क़ाफ़िरों के आक्रमण का पूरा उत्तर दिया जाने लगा। मुसलमान इतना जी तोड़ कर लड़े और ऐसे सुरक्षित स्थान पर पहुंच गए कि शत्रु इन को बखेरने और अपना उद्देश्य प्राप्त करने से निराश हो गया। अबु-तलहा के हाथ में जो प्रसिद्ध-धनुषधारी थे—तीर चलाते २ दो-तीन धनुष टूटे। हज़रत साहिब ने आप अपना तरकश हज़रत साअ़द के आगे फैंक दिया कि तीर चलाते जाओ। कुच्छ इस तीरों की वर्षा से शत्रु की सेना की हानि हुई, और कुच्छ मुसलमानों के ऊँचे स्थान पर पहुंच जाने के कारण शत्रु उनके लक्ष्य के नीचे आ गया और ऊपर से पत्थर बरसने आरम्भ हो गए। कुच्छ वह मुसलमानों की शूर-वीरता से परिचित थे। इस वास्ते उन्होंने यही उचित समझा कि युद्धक्षेत्र से पीछे हट जाएँ।

अबु-सुफ़िआ़न का दुष्कृत्य और उसका उत्तर—युद्ध को रोक कर अब शत्रु ने मुसलमानों की शवों (लाशों) को कुचला अर्थात् उन के नाक-

कान आदि काट दिए । हिन्दा ने हज़रत अमीर हमज़ा का जिगर निकाल कर अत्यन्त निर्दयता से चबा डाला। अबु-सुफ़िआन ने पीछे हट कर उच्च स्वर से कहा 'क्या मुहम्मद साहिब जाति (क़ौम) में हैं ?' हज़रत साहिब ने आज्ञा दी कि उत्तर न दो । फिर उस ने कहा, "क्या अबु-बकर जाति (क़ौम) में हैं ? आपने पुनः उत्तर देने से रोक दिया। फिर उसने कहा, "क्या उमर-बिन-अलख़िताब जाति में हैं ? और साथ ही कहा, 'यह सब लोग मारे गए हैं । यदि जीवित होते, तो उत्तर देते।' इस पर हज़रत उमर से न रहा गया और उन्हों ने उच्च-स्वर से कहा, "हे परमात्मा के शत्रु ! हम सब तुम्हें लज्जित करने के लिए जीवित हैं।" इस के पीछे अबु-सुफ़िआन ने उच्च-स्वर से कहा, "ओअ़ल, हुबल, हुबल की जय !" हज़रत साहिब ने आदेश किया, ' कहो ! ईश्वर ही सब से उच्च और बड़ा है ।' जब अपने व्यक्तित्व का प्रश्न था तो उत्तर देना भी पसन्द न किया, किन्तु ईश्वर की एकता का मान आप के हृदय में इतना जोश मार रहा था कि आप इस अवसर

पर चुप न रह सके। अबु-सुफ़िआन फिर बोला, "हमारे पास देवता है, तुम्हारा कोई देवता नहीं।" आपने फिर वचन किया—"कहो! सृजनहार हमारा रक्षक और सहायक है और तुम्हारा रक्षक और सहायक कोई नहीं।"

रुधिर के प्यासे शत्रुओं के लिए प्रार्थना—सारे संसार पर दया करने वाले हृदय में शत्रु के लिए भी इतनी दया थी कि ठीक उस समय जब आप पर तीर बरस रहे थे, उनके लिए परमात्मा के चरणों में यह प्रार्थना कर रहे थे कि, 'हे मेरे परमात्मा! मेरी जाति की रक्षा कर, क्योंकि वह नहीं जानते।" शत्रुओं के साथ प्रेम की शिक्षा के पृष्ठ पर पृष्ठ लिख देना सरल कार्य्य है, किन्तु उस समय भी शत्रु की भलाई का हृदय में होना, जब शत्रु की तलवार सिर पर हो, अत्यन्त कठिन काम है। इस उच्च अनुमान पर यदि कोई मनुष्य संसार में पूरा उतरता है तो वह हज़रत मुहम्मद साहिब ही हैं।

मुसलमानी-स्त्रियों का जोश—मुसलमानोंमें से जो लोग आक्रमण की सख़्ती के समय अलग होकर भाग गए थे, उन्होंने मदीने में जाकर सूचना दी कि मुसलमानों की हार हो गई है। परन्तु जब

उन्होंने घरों में प्रवेश करना चाहा तो उन की धर्म-पत्नियों ने उन के मुखों पर ख़ाक डाली कि तुम हज़रत साहिब को छोड़कर यहां किस लिए आ गए हो ? अ़रब की स्त्रियां युद्ध-क्षेत्र में सिपाहियों के साथ होती थीं। हज़रत आयशा और कई अन्य विदुषी देवियां बिल्कुल युद्ध के अवसर पर घायलों को पानी पिलाती थीं। युद्ध की सूचना मदीने पहुंचने पर कई अन्य स्त्रियां भी निकल पड़ीं, परन्तु सभी हज़रत साहिब के आनन्द-मंगल का समाचार पूछती थीं और अपने प्रिय बन्धुओं के लिये इतनी चिन्तातुर नहीं थीं। अनसार में से एक देवी का वर्णन है कि उसे पहिले अपने पिता के देहावसान की सूचना मिली तो उसने परमपिता परमात्मा का स्मरण करते हुए कहा कि 'हम सभी ईश्वर के हैं, सब ने वहीं जाना है।' फिर हज़रत साहिब का समाचार पूछा। लोगों ने बताया कि तेरा भ्राता मारा गया है। फिर वही कुच्छ पढ़ कर उस ने हज़रत साहिब का समाचार पूछा। लोंगों ने कहा कि तेरा पति भी चल बसा है। पुनः एक ठण्डा श्वास लेकर उस के मुख से वही शब्द निकले। परन्तु हज़रत साहिब की सुख-शान्ति

की सूचना सुनकर उसका सब शोक दूर हो गया और सारा कष्ट जाता रहा। फिर हज़रत साहिब का मुखड़ा देखकर उच्चस्वर से बोली, "यदि आप जीते हैं तो सब कष्ट कुच्छ भी नहीं हैं।" इसी प्रकार जब अन्य देवियों ने अपने प्रिय-जनों की लाशों के साथ काफ़िरों का निर्दयतापूर्ण बर्ताव देखा तो "इन्ना-लिल्लाह" अर्थात् परमात्मा को याद करके चुप कर रहीं।

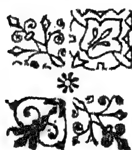
कुरैश ने हज़रत साहिब का पीछा करना—मुसलमानों के पहाड़ के ओझल हो जाने पर मदीने पर शत्रु के आक्रमण का भय था। परन्तु अबु-सुफ़िआन और उसके साथी आप इतनी चिन्तास्पद अवस्था में युद्ध क्षेत्र से निकले कि मदीने की ओर मुख न कर सके और उसी दिन कई मील वापिस लौट गए। मार्ग में विचार आया कि हम विजय का क्या चिह्न दिखाएँगे ? मुससमान बंदी एक भी साथ नहीं, मुसलमानों की सेना का युद्ध-क्षेत्र पर अधिकार है, मदीने का हमने कुच्छ नहीं बिगाड़ा। यह सोच कर इच्छा की कि पीछे लौटें, किन्तु हौसला न पड़ता था। इसी असमंजस में ही थे कि हज़रत साहिब के सम्बन्ध में समाचार मिला कि अपनी सेना के साथ पीछा करने

आ रहे हैं । कुरान शरीफ़ में यह घटना मुसलमानों की अत्यन्त बड़ाई करके लिखी हुई है कि इतने कष्ट और दुःख सहने के पीछे भी जब हज़रत साहिब ने उन को शत्रु का पीछा करने के लिए बुलाया तो उन्हों ने ऊपर लिखे अनुसार अगले ही दिन आठ मील तक शत्रु का पीछा किया और हमरा-उल-असद के स्थान तक पहुंचे । परन्तु अबु-सुफ़िआन ने यह समाचार सुन कर कि हज़रत साहिब पीछे आ रहे हैं, अपनी सेना को एक दम कूच करने की आज्ञा दी ।

उहद में मुसलमानों को भागना नहीं पड़ा—

यह कहना कि उहद की लड़ाई में मुसलमानों को हार हुई और काफ़िरों को विजय, ऐतिहासिक घटनाओं की अनभिज्ञता के कारण है। कुरान शरीफ़ में उहद के युद्ध का वर्णन विस्तार-पूर्वक सूरा-आल-इमरान में विद्यमान है । परन्तु कहीं भी इसको मुसलमानों की हार नहीं कहा, हां ! इस का नाम 'करहा' या 'कष्ट' रखा है अर्थात् मुसलमानों को इस में कुच्छ दुःख पहुंचा और काफ़िरों की दशा का चित्र इन शब्दों में खैंचा है:—"वह निराश वापिस जाएँगे ।" अतः

यही सच्चाई है । भला किसने आज तक सुना है कि हारी हुई सेना तो युद्ध-क्षेत्र में रहे और विजयी सेना इस में से एक भी बन्दी पकड़ने के बग़ैर घर वापिस लौट जाए और फिर अगले ही दिन अर्थात् युद्ध से केवल कुच्छ ही घण्टे पीछे हारी हुई सेना, जीतने वाली सेना का पीछा करे और जीतने वाली सेना पीछा होने का समाचार सुन कर तेज़ी के साथ कूच कर जाए। हां ! बेशक इस युद्ध के अन्दर ऐसे अवसर आए कि एक समय हज़रत साहिब की शहादत (जीवन-दान) का समाचार प्रसिद्ध हो गया और शत्रुओं ने समझा कि हमने इस्लामी मत को समाप्त कर दिया । परन्तु हज़रत साहिब के जीवन में ऐसी घटनाएँ पैदा करने की परम-पिता की इच्छा यही थी कि इस्लाम पर ऐसे समय तो अवश्य आएँगे कि शत्रु समझें कि हमने इस्लाम को नष्ट कर दिया, परन्तु यह नष्ट कभी नहीं होवेगा । प्रत्येक कष्ट के नीचे एक भारी सफलता छुपी हुई होगी ।



१७—अरब के क़बीले और मुसलमान



" इस विषय में तेरा कुच्छ दख़ल नहीं, चाहे परमपिता परमात्मा उन पर दया करे या उनको कष्ट देवे, बेशक वह अत्ताचारी हैं।"

(आल इमरान—१२७)

जाति की रक्षा की चिन्ता—उहद के युद्ध का एक फल यह निकला कि अरब के क़बीलोंमें इस्लाम के विरुद्ध शोर बहुत बढ़ गया। उन लोगों ने समझा कि अब क़ुरैशी मुसलमानोंका नाश किए बिना नहीं छोड़ेंगे। इतनी सेना के साथ इतनी दूर से आक्रमण करना बतलाता था कि वह मुसलमानों को बढ़ता-फूलता किसी अवस्था में नहीं देख सकते और पूर्ण निश्चय कर चुके हैं कि इनका नाश कर दें। अरब के क़बीले स्वयं तो मुसलमानों के शत्रु थे ही। अब

जब उनको भरोसा हो गया कि क़ुरैशों की एक बलवान् सेना भी इनका सत्यानाश करने पर तुली बैठी है तो उनके उत्पातों में और भी वृद्धि हो गई। उन्हों ने समझा कि अब मुसलमान मारे गए। आओ हम भी उनके विध्वंस में भाग लें। कोई क़बीला यहाँ से और कोई वहाँ से मुसलमानों पर चढ़ाई करने की तय्यारी करता। हज़रत साहिब का वास्तविक कार्य्य तो सुधार करना (शुद्धि करना) था। आप को लड़ाई झगड़े से कोई वास्ता नहीं था। किन्तु संसार में सुधार (शुद्धि) का काम अन्त में एक जाति ने करना था और उस जाति का जीवन, जिसको आपने इस काम के लिए तय्यार किया था, अब ख़तरे में था। और इस से भिन्न आप ने यह शिक्षा भी देनी थी कि जब एक मनुष्य के सुपुर्द एक जाति का शासन और रक्षा की जाए तो उस को उस जाति के बचाव के लिए और उस की उन्नति के लिए क्या २ उपाय वर्तने चाहियें और किस प्रकार बचाव से काम लेकर पूर्व-प्रबन्ध के तौर पर जाति की रक्षा का उपाय करना चाहिये। यदि हज़रत मुहम्मद साहिब ने संसार में कोई अन्य कार्य्य न भी किया होता तो भी आप का

एक यही काम कि जिस प्रकार एक जाति को जिस के चारों ओर शत्रु ही शत्रु बिखरे हुए थे, और जिसका जीवन हर समय ख़तरे में था, इन सब संकटों में से निकाल कर सफलता के इच्छित स्थान तक पहुंचा दिया संसार के लिए एक पर्य्याप्त उदाहरण था, जो आप को सदा के लिए मानवी इतिहासों में एक उच्च स्थान का अधिकारी ठहराता है। जाति निर्माण संसार के उच्च कार्य्यों में एक कार्य्य है और यह कार्य्य जिन संकटों के नीचे आप ने करके दिखाये, उनका उदाहरण अन्य किसी स्थान पर नहीं मिलता।

अरब के क़बीलों में जोश—उहद के युद्ध के अनन्तर एक ओर यहूदियों में, जो मदीने में रहते थे, शोर बढ़ गया। उन्हों ने अपनी प्रतिज्ञाओं को पीछे फैंक दिया और शत्रुओं के साथ षड्यन्त्र रच कर इस्लाम को हानि पहुंचाने का यत्न किया। दूसरी ओर विरोधियों की शरारत ने अब और खुला रूप धारण किया। भिन्न २ प्रकार से मुसलमानों को कष्ट देना उन्हों ने अपना कर्त्तव्य ही बना लिया। आस-पास के क़बीलों ने भी अब मुसलमानों को कुच्छ दिनों का अतिथि समझ कर हानि पहुंचाने पर कमर बांध

ली। मुसलमानों के लिये न मदीने के भीतर शान्ति का स्थान रहा था, और न बाहिर। यदि आज एक ओर से मदीने पर हल्ले की तय्यारी की सूचना आती है तो कल दूसरी ओर से आ जाती है। मुसलमानों को हर समय शस्त्रधारी रहने की आवश्यकता थी। अतः एक हदीस में यह शब्द आते हैं "कि सहाबा दिन-रात मदीने में शस्त्र-सुसज्जित रहते थे। अन्त में इस अवस्था में तंग आ गए और हज़रत साहिब के प्रति शिकायत की। आप ने आश्वासन दिया कि शीघ्र ही शान्ति का समय आता है।" हज़रत साहिब कितनी सोचसे काम लेते थे, इसका अनुमान इसी बात से हो सकता है, कि एक दिन प्रातःकाल के अन्धेरे में ही कुच्छ आवाज़ें सुनाई दीं, जिस से यह भय हुआ कि या तो किसी शत्रु ने हल्ला बोला है या कोई डाका पड़ा है। मुसलमान इधर-उधरसे एक स्थान पर एकत्रित होने प्रारम्भ हुए ताकि मुक़ाबिले के लिए तय्यारी करके निकलें। इतनेमें क्या देखते हैं कि हज़रत साहिब स्वयं घोड़े पर बग़ैर काठी के सवार बाहिरसे पधार रहे हैं। आपने लोगोंको सूचना दी कि चिन्ता न करो मामूली बात है।

आप एक उच्च कोटि के बुद्धिमान् शासक और दूर की दृष्टि रखने वाले सेनापति ही नहीं थे, अपितु एक वीर सैनिक के लिए भी आप का जीवन अपने भीतर एक आदर्श रखता है और बताता है कि सैनिक को किस प्रकार बे-धड़क होकर काम करना चाहिये।

युद्धों की रोक—संक्षेपतः मदीना इन कठिनाईयों में फंसा हुआ था। इस लिए नबी करीम को अत्यधिक सोच से काम लेना पड़ता और प्रत्येक ओर की ख़बरगीरी रखनी पड़ती थी। जहां यह पता लगता था कि किसी क़बीले में मदीने पर आक्रमण की तय्यारी प्रारम्भ हुई है तो आप एक दम एक टुकड़ी अपने पवित्र सैनिकों की वहां भेज देते, जो उन के जत्थे को बढ़ने से पूर्व ही भगा देती और इस प्रकार इस थोड़ी सी सोच के द्वारा आप ने कई भयानक युद्ध रोक लिए। मूर्ख शत्रु कहते हैं कि तलवार के साथ लोगों को मुसलमान बनाया गया। तलवार के साथ क्या मुसलमान बनाने थे ? मुसलमान होने के अर्थ तो शत्रु की तलवार के नीचे सिर रख देने के थे। जितनी भी सेनाएँ नबी करीम को फ़साद मिटाने के लिए बाहिर भेजनी पड़ीं, किसी एक के

सम्बन्ध में भी यह सिद्ध नहीं होता कि उन्हों ने किसी को मुसलमान किया होवे। मुसलमान बनाने के लिए तो आप ने प्रचारक रखे हुए थे। इस कार्य्य के लिए आप सेना नहीं भेजते थे, अपितु उपदेशक या प्रचारक भेजते थे और जहां से मांग आती थी, वहां ही भेजते थे। हां! जाति द्रोही कई समयों पर इस बहाने से आप के उपदेशकों का वध कर दिया करते थे, जैसा कि बिरमाऊनों की प्रसिद्ध घटना है—जो सफर सन् ४ हिजरी में हुई। बनी आमिर और बनी सलीम हवाज़न में से थे। उन का नेता अबु-बरा हज़रत साहिब की सेवा में उपस्थित हुआ और कुच्छ भेंट आदि उपस्थित करके (जो आपने स्वीकार न की) यह कहा कि आप मेरे साथ कुच्छ उपदेशक भेज दें, तो स्यात् मेरी जाति मुसलमान हो जाए। हज़रत साहिब ने कहा कि मुझे नजद के लोगों से भय लगता है।

बिरमाऊना में सत्तर प्रचारकों का वध—

हज़रत साहिब के ऐसे वचन सुन कर अबुबरा ने रक्षा का वचन दिया और आप ने सत्तर प्रचारक उसके साथ भेज दिए। जब यह लोग बिरे-माऊना

के स्थान पर पहुंचे तो उन्होंने एक दूत को एक पत्र देकर उन जातियों के पास भेजा, किन्तु किसी उत्तर के स्थान पर, एक शक्तिशाली सेना झट तय्यार हो गई और उन सारे इस्लाम के प्रचारकों का एक-एक करके वध कर दिया। केवल एक अमरू-उमीया जीता बचा, जिसने यह समाचार हज़रत साहिब तक पहुंचाया। आप को इससे अत्यन्त खेद हुआ, क्योंकि यह लोग विशेषतया इस्लाम के प्रचार के लिए तय्यार हुए थे।

रजीह में दस प्रचारकों का वध—ऐसी ही एक और घटना रजीह की है कि दो क़बीलों ने कुच्छ मनुष्य हज़रत साहिब के पास भेजे कि हमारे क़बीले ने इस्लाम ग्रहण कर लिया है। कुच्छ व्यक्ति दीन की शिक्षा देनेके लिए हमारे पास भेजे जाएँ। आप ने दस उपदेशक भेजे। रजीह के स्थान पर इन लोगों के साथ वैसा ही द्रोह किया गया। इन में से आठ तो लड़ते हुए शहीद हो गए। दो ने, जिन के नाम ख़ुबीब और ज़ैद थे, क़ाफ़िरों की प्रतिज्ञाओं पर विश्वास करके अपने आप को इनके हवाले कर दिया। परन्तु उन्होंने वचन भंग करके उनको बन्दी

किया और मक्के वालों के हाथ बेच दिया। ख़ुबीब को हारस-वंश ने हरम की सीमाओं से बाहिर ले जाकर क़त्ल कर दिया। वध होने से पूर्व उन्होंने दो रकअ़त निमाज़ पढ़ी और पुनः यह शब्द पढ़े:—"जब मैं मुसलमान होने की दशा में मारा जाता हूं, तो मुझे यह पर्वाह नहीं कि मैं किस ओर गिरता हूं। और यह सब कुच्छ परमेश्वर की ओर से हो रहा है। वह यदि चाहे तो शरीर के इन छोटे २ टुकड़ों पर कृपा कर देवे।"

ज़ैद को सुफ़वान-बिन-उम्मीआ ने वध करने की नीयत से ख़रीदा। इनके वध के समय अबु-सुफ़िआन और अन्य बड़े २ क़ुरैशी उपस्थित थे। जब इन पर चलने के लिए तलवार निकल चुकी थी तो अबु-सुफ़िआन ने कहा, "क्या तू पसन्द नहीं करता कि तू बच जाए और मुहम्मद साहिब का वध किया जाए?" उन्होंने कहा "मैं तो अपनी जान को इतनी महानता भी नहीं देता कि मैं बच जाऊँ और हज़रत साहिब को एक कांटा भी चुभ जाए।" यह उन लोगों का ईश्वर के रसूल के साथ प्रेम का एक उदाहरण है।

इस प्रकार की घटनाओं के साथ जब इन क़बीलों

ने धोका देकर आपके निर्दोष प्रचारकोंका मारना प्रारम्भ किया, तो आप को बड़ा दुःख हुआ। आप स्वयं हर प्रकारके कष्ट सहन कर सकते थे, परन्तु उन लोगोंके दुःख और कष्ट आप से नहीं सहे जाते थे, जिन्होंने सत्य के सन्देश को स्वीकार करके आप का साथ दिया और सब प्रकार के बलिदान करके बता दिया कि वह ईश्वरीय दृष्टि में कितने उच्च स्थान पर पहुंच चुके हैं। उपदेशकों के वध की घटनाओं ने आप के हृदय को इतना अधिक धक्का पहुंचाया कि आपने एकबार इन कई क़बीलोंके वास्ते, जो धोखेसे मुसलमानों का वध कर रहे थे, शाप देने का निश्चय भी किया। और कुच्छ दिन शाप दिए भी। ऐसे लोगों के लिये दण्ड तो यही था कि उनको इसी प्रकार के कष्ट देकर मारा जाता, किन्तु आप ने सारा मामला परमेश्वर पर ही छोड़ा। परन्तु वह परमात्मा, जिसने आप को सारे संसार से बढ़ कर प्रेम करने वाला और दया करनेवाला बनाकर भेजा था, नहीं चाहता था कि आप के पूर्ण दयावान हृदय में से शत्रु के लिए भी शाप निकले।"

शाप से रोका जाना—इसलिये आप को

वह आकाश-वाणी हुई जो इस काण्ड के प्रारम्भ में लिखी गई है, "तेरा इस मामले में कोई दख़ल नहीं। चाहे ईश्वर उन पर कृपा करे और या उन को दुःख दे। बेशक़ वह अत्याचारी हैं।" इस पवित्र वाणी के आते ही आप ने शाप देना छोड़ दिया। अन्य किसी पैग़म्बर के जीवन में ऐसा पवित्र उदाहरण हमें नहीं मिल सकता।

छोटे २ युद्ध—बात क्या? उहद के युद्ध के पीछे यहूदियों, विरोधियों और क़ाफ़िर क़बीलोंमें मुसलमानों को, जिस प्रकार भी हो सके, दुःख और कष्ट देने की एक परिपाटी सी चल पड़ी। यदि हज़रत साहिब इतनी दूरदर्शिता से काम न लेते कि जहां किसी क़बीले में इस्लाम के विरुद्ध संगठन हुआ तो झटपट उसकी शक्ति को अन्य लोगों के साथ मिलने से पहिले ही तोड़ देते, तो मदीने में मुसलमानों का एक दिन भी रहना कठिन था। क्योंकि चारों ओर शत्रु ही शत्रु बिखरे हुए थे और उनके बल का संगठन मुसलमानों के सत्यानाश का निश्चय ही मूल था। इस दशा में जो छोटी-छोटी लड़ाईयां हुईं, उन के विस्तार पूर्वक वर्णन की इस संक्षिप्त स्थान में

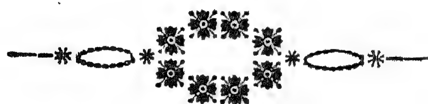
गुञ्जाइश नहीं । इनमें से एक लड़ाई बदर सुग़रा या ग़ज़वाह-बदर-उल-आख़रा के नाम से प्रसिद्ध है । इसमें युद्ध कोई नहीं हुआ । उहद से चलते हुए क़ुरैश कह गए थे कि अगले वर्ष बदर पर हमारा तुम्हारा फिर संघर्ष होगा । नबी करीम इस वचन के कारण बदर तक पधारे, किन्तु शत्रु नहीं आया था, इसलिये आप के साथी वहां एक व्यापारिक उत्सव में जो प्रतिवर्ष होता था, कुच्छ व्यापार करके वापिस आ गए । ग़ज़वाह (लड़ाई) दूमतुल-जंदल और ग़ज़वाह-ज़ाते-उलरिक़ाह जो सन् ५ हिजरीमें हुए और ग़ज़वाह-बनी-लिहान और ग़ज़वाह-ज़ीकरो जो सन् ६ हिजरी में हुए, इसी प्रकार के ग़ज़वे (युद्ध) थे कि शत्रु के निश्चय और तय्यारी का समाचार पहुंचते ही एकदम सेना की कोई टुकड़ी वहां पहुंच गई । और यह लोग स्वयं ही बिखर गए या कोई छोटी सी लड़ाई होकर निर्णय हो गया । इसी प्रकार के कई छोटे २ हल्ले (ग़ज़वे) हैं, किन्तु ग़ज़वाह मुरीसीह या ग़ज़वाह-बनी-उल-मुसतलिक जो शहिवान् सन् ५ हिजरी में हुआ, विशेषतया वर्णन करने के योग्य है ।

बनी-उल-मुसतलिक का युद्ध—बनी-उल-मुस-

तलिक़-ख़ज़ा की जाति में से थे और ख़ज़ा जाति के क़ुरैश के साथ विशेष संबंध थे। बनीउल-मुसतलिक़, मुरीसीह के स्थान पर बसते थे, जो मदीना शरीफ़ से नौ मंज़िलों के अन्तर पर था। इनके सर्दार हारस बिन-अबी ज़रार ने मदीने पर आक्रमण की तय्यारी शुरू कर दी। सम्भव है कि क़ुरैश की प्रेरणा पर उनकी सहायता के लिए तय्यार हुआ हो। हज़रत साहिब को इसका समाचार मिला। आप ने खोज की तो समाचार सत्य निकला। आप ने उनके विरुद्ध तय्यारी करने की आज्ञा की। हारस को मुसलमानों की सेना के पहुंच जाने की सूचना मिली तो वह अपने जत्थे सहित भाग गया। परन्तु मुरीसीह के निवासियों ने नबी करीम के साथ युद्ध किया तो हार खाई। ६०० बंदी हुए और बहुत से ऊँट और बकरियां, लूट में हज़रत साहिब के हाथ आईं। बन्दियों में हारस की पुत्री जूयरीआ भी थी। हारस हज़रत साहिब की सेवा में उपस्थित हुआ और अपनी पुत्री को वापिस ले जाना चाहा। आपने यह बात जूयरीआ की मर्ज़ी पर छोड़ी। जूयरीआ ने आप के पास रहना पसंद किया और नबी करीम ने रक़म अपने पास से देकर

उसके साथ निकाह कर लिया। इस निकाह का परिणाम यह हुआ कि जितने बन्दी इस जाति के थे, वह सभी के सभी सुहाबा ने स्वतन्त्र कर दिये, क्योंकि इनको हज़रत साहिब के ससुराल होने का मान मिला।

हज़रत आइशा पर झूठा आरोप—इसी युद्ध से वापिसी के समय वह घटना घटित हुई, जिससे नीच विरोधियों को उत्पात फैलाने का अवसर हाथ लगा। अर्थात् हज़रत आइशा सदीक़ा पर दोषारोपण किया गया। सदीक़ा पर दोष लगाना उसी ईश्वरीय नियम के आधीन हुआ, जिस प्रकार सब सत्य-वादियों पर झूठ थोपा जाता है। एक अन्य सदीक़ा हज़रत ईसा जी की माता हज़रत मरयम जी हैं। उन पर भी दूषण लगाया गया। हज़रत आइशा पर दूषण लगाने में दो-चार मुसलमान भी भोलेपन से विरोधियों की शरारत में आ गए। अन्त में एक ओर सच्ची घटनाओं ने, और दूसरी ओर ईश्वर की वही ने सदीक़ा की सफ़ाई उपस्थित की और नीच विरोधियों की शरारत का भेद खुल गया।



१८—अहज़ाब का युद्ध

—:***:—:*:—:***:—

" और तब मोमनों ने सेनाओं को देखा, इस प्रकार बोल पड़े—यह वह है, जिसका वचन ईश्वर और ईश्वर के रसूल ने किया था, और ईश्वर तथा उसके रसूल ने सत्य कहा था और उसने इनको केवल ईमान और आज्ञा पालन करने में बढ़ाया।"

(अल अहज़ाब—२२)

अरबी क़बीलों का संगठन—चाहे अरब के क़बीलों की शरारतों का नबी करीम साथ के साथ ही प्रबंध करते रहे थे, और आप ने केवल अपनी बुद्धिमत्ता से किसी बड़े युद्ध तक नौबत नहीं पहुंचने दी थी और इस प्रकार बहुत सा लहू बहने से रोका। किन्तु इन बातों का क़ुरैश के इरादों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता था। इधर यहूदियों में इस्लाम के विरुद्ध वैर-भाव बढ़ता गया। जिन यहूदियों को मदीने से निर्वासित किया गया

था, वह खैबर नाम के स्थान पर बस गए थे। उन्होंने अब क़ुरैशियों के साथ मिल कर चाहा कि इस्लाम का समूल ही नष्ट कर दिया जाए, अतः ज़ीक़अ़द सन् ५ हिजरी में उहद के युद्ध से लगभग दो वर्ष बाद यहूदियों और क़ुरैशों के उभारने पर मक्के के आस-पास के बहुत से क़बीले इस्लाम के विरुद्ध युद्ध के लिए तय्यार हो गए। इस्लाम को नष्ट करने का यह अंतिम प्रयास था, और सेनाओं का एक टिड्डी-दल इस्लाम के विरुद्ध खड़ा हो गया, जिसका अनुमान कम से कम दस हज़ार और अधिक से अधिक चौबीस हज़ार है। क़ुरैश से भिन्न, जो अब अपनी पूरी शक्ति के साथ उठे थे, ग़तफ़ान, बनों असद, बनों सलीम, बनों सअ़द सभी सम्मिलित थे। मदीने के भीतर भी एक जाति यहूदियों की थी। वह भी इस समय द्रोह कर के इस्लाम के शत्रुओं के साथ मिल गई। और प्रकटतया सेनाओं की इस महान् बाढ़ के आगे, अब मुसलमानों के बचे रहने की कोई सम्भावना नहीं थी।

खन्दकों (खाईयों) की खुदाई—जब यह सूचना मदीने पहुंची तो हज़रत साहिब ने सुहाबा को

बुलाकर परामर्श किया । हज़रत सलमान-फ़ारसी ने यह सम्मति दी कि एक खाई खोदी जावे, जो शत्रु के और घिरी हुई सेना के मध्य में रुकावट डाले। मदीने की एक ओर चट्टानों की स्वाभाविक रक्षा थी, दूसरी ओर गृहों की लड़ीदार दीवारों ने एक क़िले की आकृति धारण कर ली थी । इसलिये जो दिशा खुली थी, उधर झट खाई खोदने का काम प्रारम्भ हो गया । नबी करीम ने स्वयं इस के चिह्न लगा कर दस-दस व्यक्तियों में इस खाई के भाग बांट दिए ।

दो जहान के स्वामी स्वयं मज़दूरों में—

और किसी की क्या बात है, स्वयं रसूल साहिब इस खाई के खोदने वाले मज़दूरों में सम्मिलित थे। महान् प्रतिष्ठा तथा उच्च सत्कार योग्य सुहाबा और स्वयं हज़रत साहिब मिट्टी में लतपत हो रहे हैं, किन्तु इस अवस्था में भी हृदयों में वह प्रसन्नता है, जो बहुत लोगों को राज्य सिंहासन पर बैठ कर भी प्राप्त नहीं होती। सारे यही गा रहे थे :—

"हे परमात्मन् ! यदि तुम्हारी कृपा न होती, तो हमें शुभ बुद्धि कहां से मिलती । न हम दान

देते और न निमाज़ पढ़ते । हे ईश्वर ! तू हमें शक्ति प्रदान कर और जिस समय शत्रु सामने आवे तो हमें अटल पराक्रम प्रदान कर । यह लोग हमारे विरुद्ध अकारण ही उठ खड़े हुए हैं । वह हमें दुःख देकर सन्मार्ग से विचलित करना चाहते हैं और हम इसे अस्वीकार करते हैं।

अन्तिम शब्द 'अब्बीना' (हाँ ! हम अस्वीकृत करते हैं) बारम्बार दोहराया जाता था । साथ ही नबी करीम इन शब्दों में हिजरतियों और अनसारियों को आशीश और वर देते जाते थे, "हे परमपिता !, आगे की भलाई ही वास्तविक भलाई है, अतः तू अनसार और हिजरतियों के काम में वृद्धि कर।" कौम का राजा और जाति का नेता, किन्तु इस दुःख के काल में नम्र मज़दूरों में काम करनेवाला एकही मनुष्य संसारमें हुआ है । मज़दूरी कर लेना मुसलमान के लिए अत्यन्त गर्व की बात है, क्योंकि स्वयं रसूल ने वह काम किया था ।

फ़ारस और रूम की विजय का शुभ समाचार—यदि आप बादशाहों में सबसे बुद्धिमान बादशाह हैं तो मज़दूरों में भी सब से वीर मज़दूर हैं

और यह एक आश्चर्य्यजनक भाग हज़रत साहिबके जीवन का है। इस खाई के खोदने में एक स्थान पर एक सख़्त पत्थर आ गया। सभी अपनी २ शक्ति लगा कर थक गए, किन्तु पत्थर न टूटा। आप के पास बिनती की गई कि खाई को वहां से फेरने की आज्ञा दी जावे। आप उठे, पवित्र हाथों में फावड़ा पकड़ा और खाई में उतर कर इस ज़ोर के साथ मारा कि पत्थर में छेद पड़ गया। इस के साथ ही एक प्रकाश निकला, जिस पर आप ने "अल्लाहो अकबर!" कहा और एक सुहाबा ने भी "अल्लाहो अकबर!" का घोष किया। आप ने वचन किया, "शाम की चाबियां मुझे दी गईं"। फिर आप ने दूसरी चोट लगाई और पत्थर और अधिक फट गया। पुनः प्रकाश हुआ और "अल्लाहो अकबर!" की ध्वनि सुनाई दी। फिर आपने कहा, फ़ारस की चाबियां मुझे दी गईं।" तीसरी बार यही घटना हुई तो पत्थर टूट गया। "अल्लाहो अकबर" की ध्वनि फिर सुनाई दी तो आप ने कहा, मुझे यमन की चाबियां दी गईं।" और आपने यह भी कहा, "पहिली बार मुझे क़ैसर

के महल दिखाये गये, अर्थात् शाम के और दूसरी बार मदाइन में कसरा के महल दिखाए गए तथा तीसरी बार सनआ के महल दिखाए गए।" और आपने कहा 'जबराईल ने मुझे अभी ही सूचना दी है कि मेरी उम्मत उन (देशों) को जीतेगी।"

चौबीस हज़ार शत्रु मुट्ठी भर मुसलमानोंका नाश करने के लिए मदीने पहुंच चुका हो, सारा अरब ईश्वर के रसूल के रुधिर का प्यासा हो, ऐसे समय में यमन, ईरान और रूम की बादशाही के दृश्य दिखाए जायें, यह मनुष्यकी कल्पना शक्ति से भी ऊंची बातें हैं। गुप्त सांसारिक बातों को समझने वाली व्यक्ति के अतिरिक्त इन ईश्वरीय भेदों को ऐसे समय में कौन प्रकट कर सकता था, जब प्रकटतया इस्लाम के जीवन की कोई आशा इनको नहीं रही थी।

सुहाबा का ईमान—चौबीस हज़ार सेना ने तीन भागों में बांटी जाकर ऐसे वेग से मदीने पर आक्रमण किया कि सचमुच ही मदीने की भूमि पर भूंचाल आ गया। क़ुरान करीम में, जिन शब्दों में इस युद्ध का चित्र खींचा गया है, उन से ज्ञात होता है कि उस समय मदीने की क्या दशा थी

और साधारण लोगों के क्या विचार थे। क़ुरान करीम ने इसका चित्र यूं खींचा है:—

"कि जब शत्रु तुम पर ऊपर की ओर से और नीचे से अर्थात् चारों ओर से आ पड़े और जब आंखें फट गईं और कलेजा मूंह को आने लगा तो तुम ईश्वर के सम्बन्ध में भिन्न २ प्रकार के सन्देह करने लगे।" परन्तु सच्चे मोमनों के हृदयों की क्या अवस्था थी, उसका चित्र उस आयतमें खींचा है, जो इस अध्यायके आरम्भ में दी गई है अर्थात् जब मोमनों ने इकट्ठी हुई सेनाओं के टिड्डी दल को देखा तो कहा—"यह वही है, जिसकी प्रतिज्ञा, ईश्वर तथा उसके रसूल ने हमारे साथ की थी, और रब्ब तथा उसके रसूल ने सत्य कहा था।* इस बात ने उनके भरोसे और आज्ञा पालन करने को और भी बढ़ा दिया अर्थात् मुसलमानों ने देख लिया कि कुफ़र ने अब अपनी पूरी शक्ति लगा ली है और सब क़बीले इस्लाम का नाश करने के लिए एकत्रित हो गए हैं।

---

*इस में संकेत उस भविष्य वाणी की ओर है, जो बहुत काल पूर्व की जा चुकी थी। (अहिज़ाब—११) कितनी बड़ी हारी हुई सेना अहिज़ाब में से है।

इसलिये जो पहिले से ही कहा गया था कि अहिज़ाब की सेना हार खाएगी, उसके पूरे होने का समय अब आ गया था।

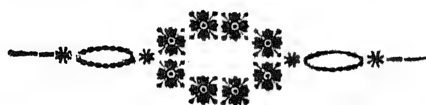
बचाव के विचार से स्त्रियों को सुरक्षित दुर्गों में भेज दिया गया और चूंकि यहूदियों की ओर से आक्रमण का भय था, इसलिए उनकी रक्षा का कुछ प्रबन्ध कर दिया गया।

घिरे होने की तकलीफ़—एक मास तक मदीना घिरा रहा। सुहाबा और स्वयं हज़रत साहिब को इस समय कई बड़े २ उपवास सहने पड़े—दो दो तीन तीन समय खाने को न मिलता तो पेट पर पत्थर बांध लेते। यह होते हुए भी शक्ति इतनी थी कि एक दिन नबी करीम ने अनसार को कहा कि यदि तुम पसन्द करो तो हम मदीने की उपज का तीसरा भाग देने की शर्त पर अतफ़ान क़बीले के साथ सन्धि कर लें और इस प्रकार काफ़िरों की शक्ति टूट जाए। उन्होंने विनती की कि परजनों को 'कर' तो हमने कुफ़र के समय भी कभी नहीं दिया अब हम उनसे दब नहीं सकते। जो कुछ भी हो, हम युद्ध करेंगे। विरोधी और यहूदी इस ताक में थे

कि बाहिर से शत्रु का अधिक वेग हो तो अन्दर से यह उठ खड़े हों और मुसलमानों को भागने का या बचाव का कोई मार्ग न मिले। पहिले एक एक दो दो की टक्कर होती रही, जिनमें मुसलमानों का पलड़ा भारी ही रहा। अरब का एक प्रसिद्ध पहलवान उमरू-बिन-वुद जो एक हज़ार मनुष्यों के बराबर समझा जाता था, हज़रत अली के हाथों मारा गया। अन्त में काफ़िरों ने पूरे वेग से आक्रमण किया। खाई के कारण वह अधिक संख्या में आगे नहीं बढ़ सकते थे; परन्तु तीरों और पत्थरों की वर्षा इतनी थी कि यदि मुसलमान उच्च कोटि की दृढ़ता न दिखाते तो शत्रु अवश्य सफल हो जाता। अन्त में मुसलमानों की शक्ति फल लाई। चौबीस हज़ार सेना हाथ पैर हिलाए बग़ैर पड़ी पड़ी थक गई। इतनी बड़ी सेना को रसद पहुंचाना भी बड़ा कठिन काम था। कुच्छ इस कारण से सेना में अविश्वास फैला, कुछ ईश्वरीय शक्तियां मुसलमानों की सहायक हो गईं।

अन्धेरी का चलना और शत्रु सेना का भागना—शरद् ऋतु थी। एक भयानक अन्धेरी, रात्रि के समय चली जिससे खेमों के खूंटे उखड़ गए

और चूल्हों पर से देगें उलट गईं। क़ुरान शरीफ़ में आया है कि हमने उन पर वायु भेजी और एक बड़ी भारी सेना जिसको तुम नहीं देखते थे। इस वायु और सेना ने वह काम किया, जो मुसलमान नहीं कर सकते थे। चौबीस हज़ार मनुष्यों ने ईश्वरीय शक्तियों को अपने विरुद्ध देख कर दिल छोड़ दिया और रात ही रात भाग गए। प्रातःकाल हुआ तो नगरके आस-पास सब स्थान ख़ाली पड़े थे। यह थी ईश्वरीय विजय जिसने थोड़े से मुसलमानों को बाहिर के टिड्डी-दल से और भीतरी शत्रुओं के षड्यन्त्रों से बाल-बाल बचा लिया और कुफ़र अपना सारा बल मुसलमानोंके विरुद्ध ख़र्च करके सर्वदा के लिए इन आक्रमणों से निराश हो गया। इससे पीछे क़ुरैशों और अन्य क़बीलों को मदीने पर आक्रमण करने का कभी साहस नहीं हुआ।



१६—यहूदियों और मुसल-मानों के सम्बन्ध

——:***:—:*:—:***:——

" उनके मुखों से ईर्ष्या प्रकट हो गई और जो इनके हृदय छिपाते हैं वह इससे बढ़कर है।"

(आल इमरान—११)

यहूदियों की ईर्ष्या और उन की शरारतें—हम देख चुके हैं कि मदीने के भीतर यहूदियों का एक शक्तिशाली समूह था। बनी-क़ीनक़ाह, बनी नज़ीर, और बनी क़रीज़ा, इन के तीन बड़े क़बीले थे। चूंकि यह एक व्यापारी और ब्याज आदि का कार्य्य करने वाली जाति थी इसलिये यह धनाढ्य भी थे। अनसार इनसे उधार भी लेते रहते थे। पुनः विद्या में भी यह अनसारियों से बढ़ कर थे। बात क्या, हर प्रकार की प्रतिष्ठा उन्हें प्राप्त

थी। हज़रत साहिब के मदीने पधारने पर यहूदियों ने हज़रत साहिब के साथ समझौता किया था, जिसका वर्णन इस से पूर्व हो चुका है। किन्तु इस्लाम की दिन प्रति दिन उन्नति देख कर इन के हृदयों में द्वेषाग्नि उत्पन्न हुई और विरोधियों के साथ मिल कर भीतर ही भीतर मुसलमानों को हानि पहुंचाने के भिन्न-भिन्न प्रकार के यत्न करके नबी करीम के व्यक्तित्व के संबंध में भी अपमान-जनक और निकम्मे वाक्य कहने से न हिचकिचाते। राइना (हमारी रियायत करो) को तोड़-मरोड़ कर रैअना (मूर्ख है) कह देते। अस्सलाम-अलैकम के स्थान पर अलसाम-अलैकम (तुम पर मृत्यु आवे) का शब्द वर्तते। इन में से कईयों ने विरोधता वाले तरीके धारण कर लिए। कईयों ने ऐसे प्रस्ताव भी किए कि प्रकटतया इस्लाम में प्रविष्ट होकर फिर जाएँ तो दूसरों के हृदय पर बुरा प्रभाव पड़ेगा और शायद बहुत से मुसलमान पतित हो जाएँ।

बनी-कीनकाह—धीरे २ उन की शत्रुता यहां तक बढ़ी कि भीतर ही भीतर इस्लाम के बैरी हो गए। मुसलमान-स्त्रियों को कविता में ठट्ठे-मखौल

करते। शिष्टाचार से ऐसा नीचे गिर गए कि छेड़-छाड़ से भी न टलते। मदीने के बाज़ार में एक मुसलमान स्त्री के साथ छेड़-छाड़ करने का परिणाम यह निकला कि एक यहूदी और एक मुसलमान मारा गया और दोनों जातियों में युद्ध छिड़ गया। यह झगड़ा बनी-कीनक़ाह के साथ हुआ और उन्होंने अपनी शक्ति के घमण्ड में आकर यह कहा कि हम क़ुरैश की भांति नहीं हैं। मुसलमानों को हमारे साथ वास्ता पड़ेगा तो पता लगेगा। हज़रत साहिब के साथ जो समझौता उन्होंने किया था, उसको तोड़ दिया और युद्ध का निश्चय करके दुर्ग में जा बैठे। हज़रत साहिब ने इनके दुर्गों को घेरा डाल लिया। पन्द्रह दिन तक घिरे रहने के अनन्तर इस बात पर राज़ी हुए कि जो निर्णय हज़रत साहिब करें, वह हमें स्वीकार है। आप ने कहा कि मदीना छोड़ जाओ, अतः वह लोग शाम के प्रदेश में जा बसे। यह घटना सन् २ हिजरी बदरके युद्ध से एक मास पीछे की है।

बनी नज़ीर—बनी नज़ीर ने संधि के होते हुए भी प्रारम्भ से ही क़ुरैश के साथ बात-चीत जारी रखी। बदर की लड़ाई के पहिले क़ुरैश ने

इनको पत्र लिखा था कि तुम हज़रत मुहम्मद साहिब का वध करो। स्पष्टतया ऐसा करनेकी उनमें सामर्थ्य नहीं थी। इसलिए अनेक प्रकारके गुप्त उपायोंके साथ वह इस्लाम के विरुद्ध षड्यन्त्रों में सम्मिलित रहते। इस्लाम के शत्रुओं के साथ इनका पूरा संबंध था। एक बार उन्होंने नबी करीम को बुला कर, उन्हें वध करने का निश्चय किया। आप ने ऐसी घटनाओं को देखकर उनको कहा कि अब आप मदीने में केवल इसी अवस्था में रह सकते हो कि संधिपत्र फिर नये सिरे से लिख दो। बनी-करीज़ा ने नया संधिपत्र लिख दिया, चाहे उनकी ओर से आज तक ऐसी शरारतें भी नहीं हुई थीं। परन्तु बनी नज़ीर ने समझौता करने से इन्कार कर दिया। इससे पता लगा कि वह अब प्रकट तौर पर इस्लाम के साथ शत्रुता करने के लिए तत्पर हो गए हैं। इधर विरोधियों के नेता अब्दुल्ला-बिन-उब्बी ने उनको वचन दिया था कि मैं तुम्हारी सहायता करूँगा। अतः वह और भी विरोधता पर अड़ गए। यह काल उहद के युद्ध के पीछे का है, जब चारों ओर से मुसलमानों के शत्रु उठ खड़े हुए थे। बाहिर के शत्रु तो आक्रमण करके ही आ

सकते थे और उनकी सूचना मिल सकती थी; परन्तु यह भीतर के शत्रु बड़े भयानक थे। शत्रुओं के साथ इनके संबंध मित्रतावाले थे, इसलिये इनका नवीन संधि-पत्र लिखने से इन्कार करना एक अर्थमें युद्धकी घोषणा थी। इससे भिन्न हज़रत साहिबको धोका देकर क़त्ल करने का प्रयास कर चुके थे। विवश होकर हज़रत साहिब को उन्हें घेरना पड़ा। अन्त में इस बात पर फ़ैसला हुआ कि बनी नज़ीर मदीना छोड़ जाएँ और अपना जितना माल अस्बाब अपने ऊँटों पर ले जा सकते हैं ले जाएँ। इनमें से कई लोग ख़ैबर में बस गए। यह घटना सन् ३ हिजरी की है।

अशरफ़ के पुत्र कआ़ब का वध—सन् तीन हिजरी की एक और घटना भी यहां वर्णन करने योग्य है। क़ाअ़ब-बिन-अशरफ़ एक प्रसिद्ध यहूदी कवि था और अपनी जाति में उसका इतना प्रभाव था, कि यहूदियों के बड़े २ विद्वान् उसके आश्रित थे, और उसकी सम्मति के अनुसार चलते थे। इस बात के होते हुए कि यहूदियों ने हज़रत साहिब के साथ सन्धि कर ली थी, यह पुरुष न केवल इस्लाम का शत्रु

ही रहा, प्रत्युत इस्लाम के शत्रुओं के साथ मिला हुआ था और मुसलमानों के विरुद्ध उन्हें भड़काता रहता था। यहूदी विद्वानों से भी उसने मुसलमानों के प्रति शत्रुता का वचन लिया। बदर के युद्ध के पीछे क़ुरैश को फिर भड़काया कि बदरकी हार का बदला लिये बिना न रहना। दूसरे क़बीलोंको भी अपनी कविता द्वारा इस्लाम के विरुद्ध भड़काने में लगा रहता था। नबी करीम की निन्दा करता था और आप के वध करने के पीछे भी पड़ा हुआ था। यहां तक कि एक बार वध का परामर्श भी किया। एक समझौता की हुई जाति में से होते हुए भी इतनी शत्रुता करनी और फिर इस्लाम के वैरियों के साथ षड्यन्त्र करने तथा इससे भिन्न हज़रत साहिब के वध करने की सलाह करनी ऐसी बातें नहीं थीं कि उन पर चुप रहा जाता। इसकी यह चालें कड़े से कड़े दण्ड के योग्य थीं, परन्तु इस संधि-संबंध के होते हुए भी कि झगड़े की दशा में अंतिम निर्णय नबी करीम करेंगे, कोई ऐसा न्यायालय नहीं था जो इसको पकड़ कर दण्ड दे सकता। यदि यह पुरुष प्रकटतया शत्रु-जाति में से होता तो इसके साथ शत्रुओं जैसा

वर्ताव होता। अतः उसको छोड़ देने के लिए कोई अन्य उपाय धारण करना आवश्यक था। अपने षड्यन्त्रों और कुचक्रों के कारण वह वध किए जाने के दण्ड का भागी था और ऐसी परिस्थिति में इसको दण्ड देनेका केवल एकही उपाय था अर्थात् यह कि उसको किसी और ढंग से वध करा दिया जावे। अतः हज़रत साहिब की आज्ञा से और औस के नेताओंके परामर्श से मुहम्मद-बिन-सलमा ने रबी-उल-अव्वल सन् ३ हिजरी को उसका वध कर दिया। इस कारण से विरोधी हज़रत साहिब पर आपत्ति करते हैं, कि उसका गुप्त उपायों से वध कराया गया। देखनेवाली बात तो केवल इतनी है कि क्या वह मृत्यु-दण्ड का अधिकारी था या नहीं। यदि जिस प्रकार कि घटनाएँ बताती हैं, यह मृत्यु के दण्ड का अधिकारी था, तो गुप्त उपायों से भिन्न उस के वध का और कोई उपाय था ही नहीं।

बनी कुरेज़ा—अहिज़ाब के युद्ध में क़ुरैश और अ़रब के कबीलों को भड़काने में बनी नज़ीर ने बड़ा काम किया और चारों ओर दौड़ते-भागते रहे। उन्होंने बनी कुरीज़ा को भी जिन के सम्बन्ध अब

तक मुसलमानोंके साथ अच्छे रहे थे, भड़काया । प्रारम्भ में तो बनी क़ुरीज़ा ने इस्लाम के शत्रुओंके साथ सम्मिलित होने से इन्कार कर दिया, किन्तु हुय्यी का जादू चल गया । उसने इनको समझाया कि इस टिड्डी-दल के समक्ष जो अब मुसलमानों पर चढ़ आया है;.........मुसलमान बच नहीं सकते। तुम्हारे लिये अब निश्चय करने का समय है। साथ ही यह भी कहा कि यदि क़ुरैश इसी प्रकार ही वापिस हो गए तो मैं स्वयं तुम्हारे दुर्ग में चला आऊँगा। अन्त में बनी क़ुरीज़ा ने नबी करीम के साथ हुए समझौते को तोड़ कर क़ुरैश के साथ संधि की कि अहिज़ाब के युद्ध में वह भी उसकी सहायता करेंगे, और संधि-पत्र केवल लिखने तक नहीं रहा अपितु उन्होंने क्रियात्मिक रूप में अहिज़ाब के युद्ध में भाग लिया। क़ुरान शरीफ़ में भी इसका वर्णन सूरा अहिज़ाब में आया है, अर्थात् कितेबी (पुस्तकावलम्बी) लोगों में वह लोग जिन्होंने उन (क़ाफ़िरों) की सहायता की, इतिहास में भी उनके युद्ध में भाग लेने का प्रत्यक्ष प्रमाण मिलता है, प्रत्युत उन्होंने मुसलमान स्त्रियों पर भी आक्रमण करने की नीयत धारी थी । यह अवसर

मुसलमानों के लिए अत्यन्त चिन्ताजनक था, क्योंकि चौबीस हज़ार शत्रु सेना बाहिर इनको कुचलने के लिये बैठी थी। विरोधियों की ओर से भी निश्चिन्तता नहीं थी। अब बनी क़ुरीज़ा के इस द्रोह से कठिनाइयां दस गुणा हो गईं। अतः अहिज़ाब के युद्ध के समाप्त होने पर नबी करीम उनको दण्ड देने के लिए निकले और उनके इर्द गिर्द घेरा डाल लिया। थोड़ा सा संघर्ष होने के पश्चात् उन्होंने कहा कि हमें साअ़द बिन मुआज़ का जो पहिले उनके साथी थे, निर्णय स्वीकृत है। यदि यह लोग स्वयं नबी करीम के निर्णय पर सन्तुष्ट होते तो बहुत हद तक आप उनके साथ वही व्यवहार करते, जो उनसे पूर्व बनी कीनकाह और बनी नज़ीर से किया था अर्थात् उन को देश निकाला दे देते, परन्तु हज़रत साअ़द को इनके भयानक द्रोह के कारण इन पर इतना क्रोध था कि उन्होंने इनका निर्णय तौरेत के लिखे अनुसार किया, जिस से वह इनकार नहीं कर सकते थे। तौरेत में लिखा है कि जब शत्रु, सन्धि के लिए राज़ी न हो तो उसको घेरे में ले लिया जावे और फिर "यदि तेरा ईश्वर तुझे उन पर अधिकार

दिला दे तो जितने पुरुष हों, उन सब का वध कर दे। शेष बच्चे, स्त्रियां, पशु, पत्ती और अन्य वस्तुयें जो नगर में उपस्थित हों सब तेरे लिए लूट का माल होंगी।" अतः साअद ने निर्णय किया कि बनी कुरीज़ा के पुरुषों का, जो संख्या में लगभग तीन सौ थे, वध कर दिया जावे। स्त्रियां और बच्चे बन्दी हों और माल अस्बाब, लूट का माल समझा जावे। यह वही निर्णय था, जो यहूदी स्वयं अपने शत्रुओं के लिये देते थे। इस बात के होते हुए भी जा भयानक द्रोह उन्होंने किया, आज इस सभ्यता के युग में भी यदि कोई जाति इस प्रकार का द्रोह करे तो उसके साथ इस से नर्म व्यवहार न किया जावेगा। फिर पहिले तो निर्णय उस मनुष्य का, जिसको उन्होंने स्वयं न्यायाधीश माना, दूसरे वह निर्णय बिल्कुल तौरेत के निर्णय के अनुसार और तौरेत उन की अपनी आसमानी किताब। तीसरे उनका द्रोह इतना था कि उसके लिये भयानक दण्ड चाहिये था। अतः इस निर्णय के कारण हज़रत साहिब पर आपत्ति उठाना बे-समझी है। यहूदियों की शरह के अनुसार यह निर्णय जिस पर इस्लाम के विरोधी इतना शोर

मचाते हैं, यह भी बताता है कि इस्लामी शरह कितनी दया लेकर आई थी और मूसवी शरह के रद्द करने की कितनी आवश्यकता थी। यह घटना सन् ५ हिजरी की है।

ख़ैबर की लड़ाई—ख़ैबर की लड़ाई की घटना चाहे हुदीबियों की सन्धि के पीछे के काल की है, परन्तु इसका वर्णन भी इसी स्थान पर यहूदियों और मुसलमानों के आपस के सम्बन्धों में करना अधिक योग्य है। बनी नज़ीर को जब मदीने से देश निकाला दिया गया तो उनका बड़ा भाग, विशेषतया नेता लोग ख़ैबर में जा बसे। ख़ैबर मदीने से लगभग दो सौ मील के अन्तर पर अरब में यहूदियों का विशेष स्थान था। यहां इनके कई क़िले थे और राज्य भी इन का ही था। बनी नजीर के वहां जाने पर इन लोगों के हृदयों में इस्लाम के विरुद्ध शत्रुता का बीज बोया गया। हुय्यी ने स्वयं फिर कर अहिज़ाब के युद्ध के लिये मक्के के लोगों को और ग़फ़तन के अन्य क़बीलों को भड़काया था। प्रत्युत बनी क़ुरीज़ा को भी अपने साथ मिलाया था। अहिज़ाब के युद्ध में क़ुरैशियों की असफलता के साथ चाहे इस्लाम का

क़दम मदीने में पक्का हो गया था, किन्तु यहूदियों के दिलों में शत्रुता दिन प्रति दिन उन्नति पर थी। विरोधियों के नेता अब्दुल्ला-बिन-उब्बी का उनके साथ पत्र-व्यवहार था और वह बराबर इनको उभारता रहता था कि तुम हज़रत मुहम्मद का मुक़ाबिला कर सकते हो । अतः सन् ६ हिजरी के अन्तिम दिनों में जब क़ुरैश ने मुसलमानों को हज्ज से रोक दिया तो हज़रत साहिब को कमज़ोर शर्तों पर क़ुरैश के साथ सन्धि करनी पड़ी तो यहूदियों ने फिर ग़तफ़ान क़बीले के साथ मिलकर मदीने पर आक्रमण करने की सोची। नबी करीम को इस षड्यन्त्र का पता लगा तो आपने पहिले इस समाचार की छान बीन की। पक्की सूचना होने के बाद आप १६०० सहाबा को साथ लेकर ख़ैबर की ओर बढ़े और रजीह के स्थान पर जो ख़ैबर और ग़तफ़ान के मध्य में था, सेनाएं उतार दीं । इस' प्रकार ग़तफ़ान यहूदियों की सहायता के लिये न पहुंच सके प्रत्युत उनको स्वयं अपने घर की चिन्ता पड़ गई । हज़रत साहिब का विचार था कि मुसलमानों की शक्ति को देखकर यहूदी सन्धि कर लेंगे, परन्तु जब

आप ख़ैबर पहुंचे तो यह लोग लड़ाई के लिए बिल्कुल तय्यार थे, इसलिये युद्ध आरम्भ हो गया और कुच्छ क़िले जीते गए। परन्तु कमूस का दुर्ग बहुत ही दृढ़ दुर्ग था। इसमें सेना भी बड़ी बलवान् थी। लगभग बीस दिन के घेरे के पीछे यह क़िला हज़रत अ़ली के हाथों विजित हुआ।

हज़रत जी को विष देने का प्रयत्न—

विजय के पीछे यहूदियों वे हज़रत साहिब के पास विनती की कि विजय की हुई भूमि की आधी पैदावार (उपज) देने की शर्त पर उन्हीं के अधिकार में रहने दी जावे। हज़रत साहिब ने प्रार्थना स्वीकार कर ली और यहूदियों को वहां से बेदख़ल न किया। चाहे आप जानते थे कि यह लोग शरारती हैं और इस्लाम के विरुद्ध शरारतें करने से न हटेंगे। अतः विजय के पश्चात् इनकी सबसे पहिली शरारत यह थी कि बड़े २ यहूदियों की सम्मति से ज़ैनब-बिनत अलहारस ने जो एक वध किए गए यहूदी धनी की धर्म्मपत्नी थी, हज़रत साहिब को न्योता दिया, और खाने में विष मिला दिया। परमात्मा ने अपने नबी

को बचा लिया। आप ने एक ग्रास उठा कर हाथ रोक लिया; परन्तु एक सहाबी बशर बिन-बरा, जिन्हों ने पेट भर कर खाना खा लिया था, विष के प्रभाव से स्वर्गवासी हो गए। क्योंकि इनकी शरारतें हज़रत उमर के समय तक न रुकीं यहां तक कि उनके सुपुत्र अब्दुल्ला को उन्होंने कोठे पर से गिरा दिया। इसलिये अन्त में हज़रत उमर ने उन को देश निकाला देकर शाम देश में भेज दिया और अरब देश को सदा के लिए इनके षड्यन्त्रों से मुक्त कर दिया।

सफ़ीया के साथ निकाह—नबी करीम तो साक्षात् दया के रूप थे। आपने इच्छा की कि इस जाति से भी सहानुभूति की जावे। शायद यह इसी उपाय से ही शरारतों से हट जाएँ। विष देने की घटना पर आपने आमतौर पर यहूदियों को कोई दण्ड नहीं दिया, हां! बशर के चल बसने पर, बदले के तौर पर ज़ैनब को मरवा डाला। चाहे आप की जान लेने का प्रयत्न एक ऐसा जुर्म था कि इस पर समस्त जाति को भी नष्ट कर दिया जाता तब भी हस

दशा में योग्य था। परन्तु आप चाहते थे कि किसी प्रकार इस जाति का सुधार हो जाए और इन की शत्रुता इस्लाम के साथ कम हो जाए, इस वास्ते आगे के लिए इस प्रकार की शरारतों को रोकने के लिए आप ने उनके साथ विशेष सम्बन्ध जोड़ने चाहे। अतः जब उनको पता लगा कि इनके सरदार कनाना की सुपुत्री सुफ़ीहा भी लूट में आकर किसी सहाबी के भाग में आ गई है तो आप ने उनको स्वतन्त्र कर के स्वयं उन के साथ निकाह कर लिया। लूट के माल के सम्बन्ध में जो यहूदियों के ख़ज़ानों की कथाएँ आती हैं वह सब काल्पनिक हैं। लूट के माल का अनुमान तो इसी से हो सकता है कि जब हज़रत साहिब ने हज़रत सुफ़ीहा के साथ निकाह किया तो निकाह के सहभोज के लिए आप के पास कुच्छ भी नहीं था और आप ने सुहाबा को आज्ञा की कि अपना-अपना खाना ले आवें और इकट्ठे बैठ कर खा लें। सो इस प्रीति-भोजन में खजूरों और सत्तू के अतिरिक्त कुच्छ भी नहीं था। यह उस सहभोज का हाल है जिस में एक विजयी राजा का विवाह एक राजपुत्री से होता है। लूट के माल में बन्दियों के

अतिरिक्त जो माल बांटा गया वह भी खजूरों के सिवाय कुच्छ नहीं था। यहूदियों के उन समस्त षड्यन्त्रों के होते हुए, जो वह इस्लाम के पैग़म्बर के विरुद्ध करते रहे, मुसलमानों ने सर्वदा इस जाति की रक्षा की है और संसार भर में, यदि इन को कहीं शान्ति मिली है तो वह मुसलमानों के आधीन मिली है।



२०—हुदीबिया की सन्धि

——:***:—:*:—:***:——

"हमने तेरे लिए एक खुला विजय (का मार्ग) खोल दिया है ताकि परमात्मा तेरे लिए उसकी रक्षा करे, जो तेरे दोष (काल्पनिक) से पहिले गुज़र चुका और जो पीछे रहा और अपनी कृपा से तेरे ऊपर पूरा करे और तुझे सीधे मार्ग पर ले चले और परमात्मा महान विजय के साथ तेरी सहायता करे।"

(अल फ़ताह—३०१)

इस्लाम का प्रचार तलवार के साथ नहीं हुआ—अहिज़ाब के आक्रमण के अनन्तर जो सन् ५ हिजरी के अन्तिम दिनों में हुआ, यह सिद्ध कर दिया कि इस्लाम के अन्दर या इसके पीछे, कोई ऐसी अदृश्य शक्ति है कि अरब की सम्मिलित शक्ति भी इसको नष्ट करने की सामर्थ्य नहीं रखती। क़ुरैश ने अपना पूरा बल पहिले बदर के युद्ध में

और फिर उहद की लड़ाई में लगाया, परन्तु इस्लाम का कुच्छ न बिगाड़ सके। अरब के क़बीलों ने पृथक्-पृथक् यत्न करके देख लिए, परन्तु इस्लाम के दृढ़ क़दम को न हिला सके। विरोधियों और यहूदियों ने भीतर से इस्लाम को नष्ट करना चाहा, किन्तु असफल रहे। अन्त में क़ुरैशों, अरब के क़बीलों, यहूदियों और विरोधियों—भीतर और बाहिर के सब शत्रुओं ने एक सम्मिलित प्रयत्न किया, परन्तु वही हार उनके भाग में आई जो पहिले आती रही थी। यह क़ुरैश का अन्तिम प्रयास था, इससे पीछे उनको मदीने पर आक्रमण करने का साहस नहीं हुआ। जिन लोगों के कान इसी ध्वनि से पूर्ण हो रहे हैं कि इस्लाम तलवार के बल से फैलाया गया, वह इन घटनाओं को पढ़ कर, जिनको शत्रु और मित्र सब एक समान मानते हैं, जान लेंगे कि यह कैसा उलटा सा दोष इस्लाम के ऊपर है। सच्ची बात तो यह है कि इस्लाम तलवार के ज़ोर से नहीं फैलाया गया, अपितु तलवार के ज़ोर का मुक़ाबिला करता हुआ फैला है। किसी मत ने इस शक्ति का सबूत नहीं दिया, जिस शक्ति का इस्लाम ने दिया है कि

चारों ओर से इस पर तलवारें बरसती हों, परन्तु वह सभी इस के नाश का नहीं, अपितु इस की उन्नति का कारण सिद्ध हों। तीन आक्रमण जो पांच वर्षों में आगे-पीछे मदीने पर हुए और जिनका आशय इस्लाम का और मुसलतानों का चिह्न तक मिटाना था, जिनमें से पहिले से दूसरा और दूसरे से तीसरा ज़ोर और सख़्ती में बढ़-चढ़ कर था, इस्लामका कुच्छ भी न बिगाड़ सके अपितु इस्लाम की संख्या में दिन प्रति दिन उन्नति दिखाई देती है। यदि बदर में तीन-सौ तेरह पुरुष निकलते हैं तो एक वर्ष पश्चात् उहद में सात-सौ पुरुष हैं तथा दो वर्ष पीछे अहिज़ाब के संग्राम में डेढ़ दो हज़ार से कम का जत्था नहीं। अतः जितना प्रयत्न इस्लाम के शत्रु इस्लाम का नाम निशान मिटाने के लिए करते थे, उतना ही भगवान् के हाथों का लगाया हुआ यह पौदा अधिक हरा-भरा होता जाता था। कोई प्रचण्ड वायु इसकी जड़ों को न हिला सकी और विष युक्त वायु का झोंका इसकी हरी-भरी टहनियों को जला न सका, प्रत्युत यह सारा विरोध, खाद का काम देता रहा।

नबी जी का हज्जके विचारसे निकलना—अहि-

ज़ाब के युद्ध को हुए एक वर्ष का समय व्यतीत हो गया, हज्ज की ऋतु निकट आई, तो नबी करीम ने स्वप्न में देखा कि आप अपने सुहाबा सहित क़ाअ़्बे का हज्ज कर रहे हैं। आप ने विचार किया कि अब क़ुरैशी और अ़रब के क़बीले अपना पूरा बल लगा कर देख चुके हैं कि वह इस्लाम का कुछ नहीं बिगाड़ सकते, इस लिए इस्लाम की सत्यता अवश्य इन के हृदयों में स्थान बना चुकी होगी। दूसरी ओर ख़ाना क़ाअ़्बा का हज्ज एक ऐसी बात थी कि जिस से कभी भयानक से भयानक शत्रु को भी नहीं रोका गया था। इस वास्ते कोई कारण नहीं था कि काफिर आपके हज्ज करने में रुकावट डालें। अतः आप तेरह चौदह सौ के लगभग सुहाबा को साथ लेकर ज़ीक़ाद सन् ६ हिजरी में उमरा (हज्ज) के लिए मक्के की ओर चल पड़े। अधिक चौकसी के लिए आपने आज्ञा दी कि युद्ध के शस्त्र और तत्सम्बन्धि अन्य सामान साथ न लिया जावे, ताकि क़ुरैशियों के दिलों में किसी प्रकार का सन्देह उत्पन्न न हो और वह रुकावट

डालने के लिए कोई बहाना न ढूण्ढ लें। केवल तलवार और वह भी म्यान में साथ रहे क्योंकि यह एक ऐसी वस्तु थी, जिस को अरब वासी किसी अवस्था में भी नहीं छोड़ते थे। चौदह सौ आज्ञाकारी सेवक आपके साथ चले। क़ुरबानी के पशु भी आप के साथ थे उमरा का इहराम (हज्ज का वेष) आपने और आप के साथियों ने धारण कर लिया। मक्के शरीफ़ के समीप जाकर पता चला कि क़ुरैशी मुक़ाबिले के लिए तय्यार होकर निकल आये हैं। खज़ाया का क़बीला अभी मुसलमान नहीं हुआ था; परन्तु इस्लाम के सहायकों में से था। इसके सरदार बुदबल ने हज़रत साहिब को मक्के के क़ुरैशियों के इरादे की सूचना दी।

हुदेबिया और रुकावट—आपने उसी को दूत बना कर क़ुरैश के पास भेजा कि वह उन को कह दे कि हम युद्ध के अभिप्राय से नहीं आए प्रत्युत हज्ज के विचार से आए हैं और अच्छा हो यदि क़ुरैश कुच्छ समय के लिए हमारे साथ सन्धि कर लें। आपने हुदेबिया के स्थान पर जहां एक

कुंआ था, डेरे लगा दिये। यह स्थान मक्के शरीफ़ से एक पड़ाव के अन्तर पर है।

सुहाबा का प्रीतम के साथ प्रेम—जब बुद्बल ने हज़रत साहिब का सन्देश क़ुरैशों को पहुंचाया और अनुभवी लोगों को, जो देख चुके थे कि उन की समस्त शक्ति भी इस्लाम का कुच्छ भी न बिगाड़ सकी, यह प्रस्ताव पसन्द आया क्योंकि उनका अपना व्यापार भी शाम देश के साथ रुका पड़ा था। अरवा ने कहा कि मुझे जाकर हज़रत मुहम्मद साहिब के साथ बात-चीत कर लेने दो। अतः उसने हज़रत साहिबकी सेवामें उपस्थित होकर कुच्छ बात-चीत की और यह भी कहा कि यदि आप पर कोई विपत्ति आई तो यह लोग जो आप के साथ इकट्ठे हुए हुए हैं, धूल की भांति उड़ जाएँगे। यह सुन कर हज़रत अबु-बकर को क्रोध आ गया और आप ने उसको कुच्छ सख़्ती के साथ उत्तर दिया। कारण-वश उसी समय निमाज़ का समय हो गया। हज़रत साहिब ने वुज़ू किया तो सुहाबा के प्रेम की यह अवस्था थी कि आप के वुज़ू का जल पृथ्वी पर नहीं गिरता था। अरवा इस प्रेम की दशा को देख

कर बड़ा हैरान हूआ। बात तो कोई भी समाप्त न हुई परन्तु अरवा इस प्रभाव को अपने साथ ले गया और जाकर क़ुरैश को कहा कि मैंने क़ैसर और किसरा के दर्बार देखे हैं, किन्तु जीवन न्यौछावर करने वाले जो प्रेमी मुहम्मद साहिब को मिले हैं, वैसा उदाहरण मैंने कहीं नहीं देखा।

क़ुरैश के पास प्रतिनिधियोंको भेजना—हज़रत साहिब ने फिर एक दिन एक दूत क़ुरैश के पास भेजा, परन्तु उसके साथ उन्होंने यह वर्ताव किया कि उस की सवारी का ऊँट मार दिया। सेना का एक जत्था मुसलमानों पर एकदम आक्रमण करने के लिये निकला, किन्तु स्वयं पकड़ा गया। क्योंकि हज़रत साहिब का आशय युद्ध का नहीं था, अतः आप ने उनको छोड़ दिया। अन्त में हज़रत साहिब ने हज़रत उस्मान को जिनका मक्के में अच्छा प्रभाव था, प्रतिनिधि बना कर भेजा। परन्तु क़ुरैश ने उन को नज़रबन्द कर लिया और यह खबर प्रसिद्ध हो गई कि हज़रत उस्मान मारे गए हैं। अब हज़रत साहिब ने समझा कि क़ाफ़िर युद्ध करने पर तुले बैठे हैं।

अवसर अत्यन्त चिन्ताजनक था, शस्त्र और युद्ध-सामग्री साथ नहीं, क़ुरैश अपने घर में हैं, इस पर आप का जत्था भी थोड़ा ही है। परन्तु परमपिता परमात्मा की रक्षा पर आप का भरोसा इतना था कि जब बार-बार सन्धि के संदेशों की क़ुरैशों ने पर्वाह न की, तो अंत में आपने सुहाबा से यह वचन लिया कि इस्लाम की रक्षा के लिये अपनी जानों की पर्वाह नहीं करेंगे। पीठ दिखाना मुसलमानों की परम्परा नहीं था।

रिज़वान का वचन—एक बबूल के वृक्ष के नीचे, सब सुहाबा से वफ़ादारी का वचन लिया, जो "रिज़वान के वचन" के नाम से प्रसिद्ध है। सब लोगों ने प्रतिज्ञा की कि यदि काफ़िरों ने युद्ध किया तो हम अपनी जानें न्योछावर कर देंगे। परन्तु ईश्वर के रसूल के साथ इतनी भक्ति के होते हुए भी 'एकता' का उनके विचारों पर इतना प्रभाव था कि जब बाद के काल में लोगों ने इस वृक्ष के, जहां इस प्रकार की महान् घटना घटित हुई थी, दर्शनों के लिए आना प्रारम्भ कर दिया तो हज़रत उमर ने इस वृक्ष को कटवा छोड़ा।

सन्धि की शर्तें—क़ुरैश, मुसलमानों के हाथ तो बार-बार देख चुके थे। उनको जब पता लगा कि मुसलमान मरने मारने के लिए तैय्यार हैं तो संधि की शर्तों का निश्चय करने के लिए सुहेल-बिन-उमरू को प्रतिनिधि बनाकर भेजा। किन्तु साथ ही यह अड़चन लगा दी कि इस वर्ष हम कदाचित् हज्ज करने की आज्ञा नहीं देंगे। सुहेल ने यहां आकर कुच्छ शर्तों का निर्णय किया, जिस में मुनलसानों को एक हारे हुए पक्ष की हैसियत दी गई। वह प्रतिज्ञापत्र दस वर्ष के लिए था और उसकी बड़ी २ शर्तें यह थीं :—

(१) मुसलमान इस वर्ष बग़ैर हज्ज किए लौट जाएँ।

(२) अगले वर्ष आएँ, किन्तु तीन दिन से अधिक मक्के में न ठहरें।

(३) मक्के में जो मुसलमान हैं उनको साथ न ले जाएँ तथा मुसलमानों में से यदि कोई मक्के में रहना चाहे तो उसे न रोकें।

(४) मक्के वालों में से यदि कोई पुरुष मदीने जाए, तो तुसलमानोंके लिए आवश्यक होगा कि वह उसे

वापिस कर दें। किन्तु यदि मुसलमानों में से कोई मक्के में चला जाए तो क़ुरैशी उसे वापिस नहीं करेंगे।

(५) अरब के क़बीलों का अधिकार होगा कि जिस पक्ष के साथ चाहें समझौता कर लें।

प्रतिज्ञापत्र लिखना प्रारम्भ हुआ तो पहिले बिसमिल्ला (अर्थात् प्रारम्भ ईश्वर के नाम के साथ जो अत्यन्त कृपालु और दयालु है) पर ही आपत्ति उठाई गई कि हम " बिइस्मे कलहुम " जिसका अरब में रिवाज चला आता था, लिखेंगे। हज़रत साहिब ने इसको भी स्वीकार कर लिया ! फिर जब यह लिखा गया कि यह संधिपत्र मुहम्मद रसूल अल्लाह और अमुक के मध्य है तो सुहेल ने फिर आपत्ति उठाई कि यदि हम तुम्हें अल्लाह का रसूल मानते तो यह लड़ाईयां क्यों होतीं। हज़रत अली ने, जो सन्धिपत्र लिख रहे थे, बिनती की कि मैं रसूल अल्लाह के शब्द अपने हाथ के साथ नहीं मिटा सकता। यह सुन कर हज़रत साहिब ने स्थान दिखाने पर स्वयं उनको मिटा दिया और उस के स्थान पर मुहम्मद-बिन-अब्दुल्ला लिखा गया।

अबु-जन्दल की घटना—यह शर्तें मुसलमानों

को बहुत बुरी लगीं, परन्तु अदब करके चुप थे। इतने में अबु जन्दल जो सुहेल के सुपुत्र थे और मक्के में मुसलमान हो चुके थे तथा मुसलमान होने के कारण इनको कड़े कष्ट दिए जाते थे, आ पहुंचे और अपनी बुरी दशा हज़रत साहिब को सुनाई। हज़रत साहिब ने बहुतेरा चाहा कि किसी प्रकार अबु-जन्दल इस सन्धि से अलग रखे जाएँ, किन्तु सुहेल ने एक न मानी और अन्त में हज़रत साहिब को विवश होकर मानना पड़ा कि अबु-जन्दल कुरैशोंके अधिकार में ही रहे। परन्तु मुसलमानों से अबु-जन्दल की दशा देखी नहीं जाती थी। एक ओर वचनों का पालना और दूसरी ओर अत्याचरसे एक मुसलमानकी यह दशा।

हज़रत उमर की विनती—अन्त में हज़रत उमर से न रहा गया और मुसलमानों के विचारों को नबी करीम की सेवा में उपस्थित किया और विनती की, कि हे अल्लाह के रसूल! क्या आप सत्य के रसूल नहीं? हज़रत साहिब ने कहा! निश्चय ही हूं। पुनः विनती की, कि क्या हम सत्य पर नहीं हैं? आप ने कहा निसंदेह ही तुम सत्य पर हो। फिर

निवेदन किया, फिर धर्म्म में हमारी इतनी दुर्दशा क्यों की जाती है ?" आप ने कहा, "मैं परम-पिता परमात्मा की आज्ञा के अनुसार करता हूं।" फिर एक प्रार्थना की गई कि क्या आप ने आदेश नहीं किया था कि हम हज्ज करेंगे ? आपने कहा, "परन्तु यह नहीं कहा था कि इसी वर्ष करेंगे।" यही बातें हज़रत उमर ने हज़रत अबु-बकर को कहीं और वही उत्तर हज़रत अबु-बकर ने दिया कि रसूल साहिब जो कुच्छ करते हैं, परमेश्वर की आज्ञा से करते हैं।

बात क्या, अबु-जन्दल के कारण मुसलमानों को बड़ा क्रोध चढ़ा हुआ था, परन्तु कर कुच्छ नहीं सकते थे। हज़रत साहिब ने कहा कि हम वचन का पालन करना नहीं छोड़ सकते। यह काफ़िरों के साथ किए गए वचन का सन्मान है, आप ने अबु-जन्दल को समझाया कि ईश्वर तेरे लिए भी कोई मार्ग निकाल देगा, परन्तु हम शर्तों के विरुद्ध कुच्छ नहीं कर सकते।

साफ़ जीत—वापिसी पर हज़रत साहिब पर सूरा-फ़तह उतरी, जिस की प्रारम्भिक आयतें इस

अध्याय के प्रारम्भ में उद्धृत की गई हैं, और जिस का प्रारम्भ इन शब्दों से होता है कि हमने तुम्हें साफ़ जीत प्रदान की है। जिस को मुसलमान अपमान-जनक सन्धि समझ रहे हैं, ईश्वर उसको इस्लाम की खुली विजय कहता है; हज़रत साहिब ने हज़रत उमर को बुलवाया। आप डरते हुए गए कि नबी की दर्गाह में गुस्ताखी (घृष्टता) की है, कोई क़हर न वर्ता हो। परन्तु वहां शुभ सूचना थी। आप ने पूछा क्या यह समझौता ही खुली और साफ़ विजय है ? आप ने उत्तर दिया हां ! फिर भला कौन मुसलमान था, जो इसके विजय होने का भरोसा न करता। सारे लोग एक ओर अभी जहां इसको अपना अपमान समझते थे, अब उसको अपनी विजय मान कर प्रसन्न हो रहे हैं और सूरा-फ़तह को पढ़ रहे हैं, किन्तु क्या यह इनका पागलों वाला काम था ? कई घटनाएँ इन को बतला चुकी थीं कि जहां इस्लाम की हार उनको दृष्टिगोचर हुई है वहां वास्तव में इस्लाम की विजय सिद्ध हुई है।

मिलने-जुलने से इस्लाम की उन्नति—अगली

घटनाओं ने हुदीबिया की सन्धि को साफ़ विजय सिद्ध कर दिया। इसकी खुली गवाही यह है, कि डेढ़ था पौने दो वर्ष पीछे जब हज़रत साहिब मक्के को चलने लगते हैं तो चौदह सौ मनुष्यों के स्थान पर दस हज़ार प्रेमी आप के साथ थे। यह उन्नति किस प्रकार हुई ? पहिले इतने काल में मुसलमानों की संख्या में इतनी उन्नति कभी नहीं हुई। बात यह है कि लड़ाईयां इस्लाम की उन्नति के मार्ग में एक भारी रुकावट थीं। इस्लाम जिसका अर्थ सुलह और प्रेम है—सुलह और प्रेम में जो उन्नति कर सकता है, वह दूसरी दशा में नहीं कर सकता। जब से हज़रत साहिब मक्के से निकले, क़ुरैशियों में प्रत्युत सारे अ़रब में और मुसलमानों में युद्ध छिड़ गया, जिस का भाव इस्लाम का चिह्नमात्र भी मिटाना था। सो प्रत्येक हृदय में मुसलसानों के लिए घृणा बैठी हुई थी। कौन था, जो इस प्रकार की अवस्था में ठंडे हृदय के साथ इस्लाम की शिक्षा पर ध्यान करता ? वहां तो इस्लाम का सत्यानाश करने के भाव हृदयों में उछल रहे थे। कौन था ? जो यह देखता कि मुसलमान का जीवन कैसा पवित्र जीवन है और जिन

लोगों ने हज़रत मुहम्मद साहिब का साथ दिया है, वह किस प्रकार हर तरह की मैल से पवित्र होकर एक उच्च स्थान पर खड़े हो गए। जिनको अपना शत्रु समझा जावे, उनकी अवस्था पर ध्यान कहां हो सकता है ? अब जो सन्धि हुई तो मेल-मिलाप और संबंध नए सिरे से पैदा हुए तो काफ़िरों को अवसर मिला कि मुसलमानों में आकर रहें और ठंडे हृदय से इस्लाम की शिक्षा को विचार करें तथा मुसलमानों के जीवन के हाल का अध्ययन करें। इस मेल-मिलाप से हज़रत साहिब सम्बन्धि वह सारे विचार जो उन्होंने अपने हृदयों में बैठाए हुए थे, कि आप निर्दय हैं और झगड़ा उत्पन्न करते हैं, एक बार ही दूर हो गए, और नबी करीमके उच्चाचरण को देखने का इनको सुअवसर मिला।

जो दोष वे हज़रत साहिब पर लगाते थे वह इनकी भूल थी—वास्तव में नबी करीम के जीवन में यह पहिला अवसर था कि काफ़िरों ने पक्षपात से रहित दृष्टि के साथ आप के हाल को देखा और इस देखने के साथ ही वह सारे झूठे विचार जाते

रहे जो हज़रत साहिब संबंधि इन के हृदयों में थे, दूर हो गए। अब इनको पता लगा कि जो दोष (पाप) वह हज़रत साहिब पर लगाते थे, वह सब इनकी भूल थी अथवा लोगों ने धोखा दे रखा था। इस्लाम और हज़रत साहिब के पवित्र आकृति ने उन को अपना प्रेमी बना लिया और क़ुरान करीम के उच्च शब्द सत्य सिद्ध हुए जो हदेबिया से लौटते हुए आप पर उतरे थे कि "जो २ आरोप आप पर थोपे जाते हैं, उन समस्त को दूर करेगा और आप की पवित्रता और सत्यता को लोगों पर प्रकट कर देगा।" हां! जो बुराई की बातें पीछे से उन पर मढ़ी गईं, उनके सम्बन्ध में भी परमात्मा का वचन है कि इसी प्रकार दूर कर देगा। और हम आज अपनी आंखों से देख रहे हैं कि किस प्रकार नबी करीम की वह अन्धकारमयी मूर्ति जो एक समय यूरुप में खैंची जाती थी, आज अपने आप मिट रही है और इसके स्थान पर आप की प्रतिष्ठा, उच्चता, शुभ आचरण और पवित्र जीवन को माना जा रहा है। हां! इस्लाम को संसार में फैलने के लिए सुलह और शान्ति चाहिये और वह सुलह-

शायद अब एक सीमा तक स्थापित हो गई हो, जबकि यूरुप के देशों की जीतने की भूख मरती जाती है तथा "और आवे" का जयकारा लगाने का स्थान शेष नहीं रहा। दूर की दृष्टि के साथ जो मुसलमानों को मनुष्य-समाज का शत्रु समझा जाता था, अब समय आ गया है कि इन के समीप होकर, इन के हाल को जानकर वह विचार बदल जाएँ और इस्लाम की वास्तविक शिक्षा की ओर ध्यान हो। यह परमेश्वर के काम हैं कि इस काल में फिर इस्लाम की प्रकट हार में इसकी वास्तविक जीत छुपी हुई है।

इस्लाम और सन्धि—पहिले तो मुसलमानों को इस सन्धि की शर्तें बहुत बुरी लगीं किन्तु इसमें भी बड़ी बुद्धिमत्ता छुपी हुई थी कि ऐसी सख़्त शर्तों पर हज़रत साहिब ने संधि करना स्वीकार कर लिया। पहिले तो यह घटना बताती है कि आप को लड़ाई से कितनी घृणा थी। मुसलमान अब तक किसी युद्ध-क्षेत्र में भी काफ़िरों के हाथ से नहीं हारे, न ही नत-मस्तक हुए हैं। अब भी वह लड़ने-मरने को कटिबद्ध हैं और नत-मस्तक नहीं होते। परन्तु

इस बात के होते हुए भी जब काफ़िरों का कुच्छ-झुकाव आप को सुलह की ओर दृष्टिगोचर होता है तो आप न हारते हुए भी हारे हुए पक्ष जैसी शर्तें स्वीकार कर लेते हैं। जिस पुरुष की इच्छा यह हो कि तलवार के बल से अपनी बात मनवाए, उस के लिए ऐसा रुख़ धारण करना असम्भव है। इस से पता लगा कि आप सन्धि के लिये कितने इच्छुक थे। क़ुरान शरीफ़ में साफ़ लिखा है कि यदि शत्रु की रुचि सन्धि की ओर हो तो आप भी संधि करो। क्रियात्मिक रूप में भी आपने यही कुच्छ कर दिखाया और सन्धि के लिये उन शर्तों को भी स्वीकार कर लिया, जो सुहाबा को अपमानजनक दृष्टिगोचर होती थीं।

कष्ट के होते हुए इस्लाम की उन्नति—इसका फल क्या निकला ? मक्के में लोग मुसलमान होने से नहीं रुकते। उनके सामने अब भी मुसलमानों की दीनता का चित्र है कि वह उन लोगों को, जो इस्लामी मत ग्रहण करें, काफ़िरों के अत्याचारों से छुड़ा नहीं सकते। नहीं! प्रत्युत यदि वह स्वयं किसी प्रकार इन अत्याचारों से मुक्ति प्राप्त कर के भाग कर इनके पास पहुंचें तो वह इन को अपने पास

नहीं रख सकते । मनुष्य के लिए कभी कभी कष्ट सहना इस प्रकार भी सरल हो जाता है कि उसके समीप इसके विचारों के ही मनुष्य हों, चाहे वह भी कष्ट सहन कर रहे हों । मुसलमानों को जो अब तक अवसर मिला हुआ था कि हिजरत करके मदीने पहुंच जाएँ, हदीबिया की संधि के अनन्तर अब यह अवसर भी हाथ से जाता रहा है । अब वह किस आश्रय पर इस्लाम ग्रहण करें। घर में जो दुःख मिलते हैं, वह कहने-सुनने से परे हैं। भाग कर मदीने में जाने का मार्ग भी बन्द हो गया। अबु-जन्दल की घटना सामने है कि किस प्रकार पैरों में बेड़ियां पड़े हुए आततताईयों के कष्ट सहने के लिये उसे वापिस करना पड़ा । बात क्या ? अब नए बने मुसलमानों के लिए कोई उपाय भी शेष नहीं रहा था। चाहिए तो यह था कि इसके अनन्तर इस्लाम की उन्नति बिल्कुल ही रुक जाती, परन्तु इस के स्थान पर हम देखते हैं कि इसी काल में ऐसी ही दशा के होते हुए इस्लाम पहिले से दुगुणी उन्नति कर रहा है। ज्ञात होता है कि इसके भीतर अपने गुण इतने थे कि इसके प्रेमियों को संसार के सब

कष्ट तुच्छ भासते थे। न काफ़िर कष्ट देने में कमी करते हैं, न मुसलमान अपने पास फटकने की आज्ञा देते हैं, 'न जाने को मार्ग, न खड़ा होने को स्थान' वाला हिसाब बन गया है। परन्तु कैसी सुन्दरता और प्रतिष्ठा इस्लाम और उसके पवित्र पैग़म्बर में दृष्टि-गोचर होती थी कि आंखों के साथ देखते हुए दुःखों की अग्नि में कूदते और कुच्छ भी पर्वाह न करते कि संसार में उनके लिये शान्ति का कोई स्थान है या नहीं। क्या यही तलवार के बल से मुसलमान होना है? यदि इस्लाम के इतिहास पर एक भी गूढ़-दृष्टि इस्लाम पर कटाक्ष करने वालों ने डाली होती तो यह शब्द कभी उनके मुख से न निकलते कि इस्लाम तलवार के ज़ोर से फैला है। हदीबिया के इतिहास में फिर वही सत्य आंखों के सामने आ जाता है, कि इस्लाम तलवार के ज़ोर से नहीं फैला है बल्कि इस पर तलवार का ज़ोर होते हुए फैला है। सभी ओर से इस पर तलवार पड़ती है, किन्तु कोई तलवार इस को हानि नहीं पहुंचा सकती। हां! इस पर तलवार चलाने वाले स्वयं ही नष्ट हो जाते हैं और यह मसीह के इन शब्दों के समान सिद्ध होता है, "जो

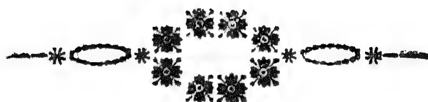
इस पत्थर पर गिरेगा, चूर हो जायगा, किन्तु जिस पर यह गिरेगा, उसको पीस डालेगा।"

किए हुए वचन का आदर—अबु-जन्दल की घटना ऊपर वर्णन की गई है। एक और वीर मुसलमान उतबा-बिन-उसीद काफ़िरों के हाथों तङ्ग आकर मक्के से भागा और मदीने जा पहुंचा। साथ ही क़ुरैश के दो प्रतिनिधि पहुंचे कि शर्तों के अनुसार उतबा को वापिस किया जावे। हज़रत साहिब ने उतबा को आज्ञा दी कि वापिस जाओ। उसने आश्चर्य्य किया और विनती की कि क्या आप मुझे काफ़िर होने पर मज़बूर करते हैं? कितनी बड़ी परीक्षा है! यदि आप उतबे को रख लें तो अधिक से अधिक यह होगा कि क़ुरैश चढ़ाई कर के आएँगे और वह मदीने में आप का कुच्छ बिगाड़ नहीं सकते। परन्तु किए हुए वचन का इतना आदर है, इस को पूर्ण करने के कारण यदि मुसलमान भी काफ़िर होता है तो होवे। आप उतबे को कहते हैं कि हम तो तुन्हें वापिस करनेके लिए बाधित हैं। हां! परमेश्वर स्वयमेव कोई मार्ग निकाल देवेगा। एक ओर हज़रत साहिब का वचन पालन करना आश्चर्य्यमय है और दूसरी ओर इस नवीन

मुसलमान का प्रेम और इसका आज्ञा पालन भी कुच्छ कम हैरान करने वाला नहीं । यह नहीं कहता कि मुझे ऐसा मत धारण करने का क्या लाभ ? जब आप स्वयं ही मुझे काफ़िरों के हाथ में वापिस देते हो । नहीं ! आज्ञा मानता है, वापिस चला जाता है। हां ! भली प्रकार जानता है कि अब मुझे जीता नहीं छोड़ेंगे । अब संसार में कोई इसको बचानेवाला नहीं, कोई इसका पक्ष लेने वाला नहीं, इसलिए वह आत्मरक्षा का अवलंबन करता है । जिन दो पुरुषों की देख-रेख में है, समय पाकर उनमें से एक का वध कर देता है । दूसरा स्वयमेव भाग जाता है । उतबा फिर मदीने में आता है और बिनती करता है कि आप ने अपना वचन पूरा कर दिया । अब मैं स्वतन्त्र हूं । और वहां से निकल कर ईसा के स्थान में, जो समुद्र के किनारे पर है, रहने लग जाता है ।

अत्याचार पीड़ित मुसलमानों की नई बस्ती—ईसा एक ऐसी जगह है, जहां न नबी करीम का अधिकार है और न क़ुरैशका । इसी प्रकार अब अन्य कष्ट पानेवाले भी मक्केसे निकलने प्रारम्भ होते हैं । वह मदीने

नहीं जा सकते, इसलिए उतबा के पास ईस में पहुंच जाते हैं, यहाँ तक कि वहां एक बहुत बड़ी नई आबादी बन जाती है और क्योंकि यह लोग उन शर्तों के आधीन नहीं, जो हज़रत साहिब के साथ हदीबिया में निर्णीत हुई थीं, अतः क़ुरैश को चिन्ता हुई कि इनके शाम देश के व्यापार में यह लोग रुकावट डालेंगे। इसवास्ते वह स्वयं नबी करीम के आगे बिनती करते हैं कि हम संधिपत्र की इस शर्त को छोड़ते हैं कि जिसके अनुसार मक्के से भागे हुए लोगों का वापिस करना आवश्यक है।



२१—बादशाहों को निमन्त्रण

——:***:—:*:—:***:——

" कहो—हे किताबी लोगो ! इस बात की ओर आओ कि जो हमारे और तुम्हारे मध्य एक जैसी है कि हम परमेश्वर के अतिरिक्त किसी की उपासना न करें और न उसके साथ किसी को सम्मिलित करें और न हम में से कोई सृष्टिकर्त्ता के अतिरिक्त किसी को परमात्मा बनाएँ ।"

(आल इमरान—६३)

सारे संसार को सत्य सन्देश—हदीबिया की सन्धि को न केवल पीछे की घटनाओं ने ही विजय सिद्ध किया बल्कि मुसलमानों की संख्या को कई गुणा करने के अतिरिक्त खालिद-बिन-वलीद और अमरू-बिन-अलआस जैसे ऊँचे संसार विजेताओं को जो इससे पूर्व काफ़िरों की सेना के श्रृङ्गार थे, इस्लाम की दासता में प्रविष्ट करके बता दिया कि किस प्रकार इस सन्धि से वह फल प्राप्त हुए, जो बड़ी से बड़ी

जंगी-विजय से भी प्राप्त नहीं हो सकते थे, प्रत्युत स्वयं नबी करीम ने अपने कृत्यों से भी बता दिया कि यह सन्धि इस्लाम की उच्चतम सफलताओं का मूल है। बस हदीबिया से लौटते ही आपने सब से पहिला काम यह किया कि पहिले तो एक दिन सब लोगों को एकत्रित करके उन को समझाया कि इस्लाम सारे जगत् के लिये भगवत् कृपा रूप बन कर आया है और अब समय आ गया है 'कि इसका संदेश सारे संसार में पहुंचाया जावे।" इसके पीछे आप ने स्वयं उन सब बादशाहों के नाम, जो आप के आस-पास थे, निमन्त्रण-पत्र लिखे और उनको इस्लाम की ओर बुलाया। यह पत्र नीचे लिखे बादशाहों के नाम भेजे गए—कैसर रूम, किसरा, अज़ीज़ मिसर, नज्जाशी। इसके अतिरिक्त अरब के सीमावर्ती कई रईसों के नाम भी पत्र लिखे गए।

मूक़ूक़स के नाम का असली पत्र—इनमें से जो पत्र मिस्र देश के बादशाह मूक़ूक़स के नाम भेजा गया था, वह पूर्णतया सुरक्षित अवस्था में हमें मिल गया है। हदीसों से भी पता लगता है कि मूक़ूक़स ने इसको एक मूल्यवान् डिब्बे में बन्द करके ख़ूब

सुरक्षित करके रख लिया था। अब इसका फ़ोटो छप चुका है और सोलह आने वही शब्द इस पत्र के हैं जो हदीसों में नक़ल किए गए हैं। मुक़ूक़स ने कुच्छ भेंट आदि भी आप की सेवा में भेजीं, चाहे वह स्वयं मुसलमान नहीं हुआ। इनमें एक खच्चर था, जिस पर हज़रत साहिब स्वयं आरूढ़ होते थे और दो दासियां थीं, जिन में से एक अर्थात् मारीआ किबतीआ को आपने वह उच्च पदवी प्रदान की कि अपने हरम में प्रविष्ट कर लिया अर्थात् उसके साथ निकाह पढ़ा लिया और दूसरी हज़रत हस्सान की धर्मपत्नी बनी। यह दोनों बीबियां मदीने पहुंचने से पहिले मुसलमान हो चुकी थीं।

क़ैसर के नाम पत्र और अबु-सफ़ियान की गवाही–क़ैसर के नाम का पत्र विहया-कलबी लेकर गए। दैवयोग से उन्हीं दिनों अबु-सफ़ियान व्यापारिक क़ाफ़िला लेकर शाम देश में पहुंचा हुआ था। क़ैसर ने इससे हज़रत साहिब का हाल पूछा। इस के प्रश्नों के उत्तर में अबु-सफ़ियान ने, चाहे वह अभी कुफ़र की अवस्था में था, निम्न-लिखित बातें मानीं।

इससे पता लगता है कि अन्दर से इसके हृदय को इस्लाम के गुणों ने वश में कर लिया था। इसने कहा कि हज़रत साहिब एक उच्च घराने में से हैं, आप के मुरीद दिन-प्रति-दिन बढ़ते चले जाते हैं, सारी आयु आप ने झूठ कभी नहीं बोला, कभी वचन भङ्ग नहीं किया, जो व्यक्ति आप के मत में प्रवेश करता है, पुनः तंग होकर भी इसको नहीं छोड़ता। आप की शिक्षा का सार यह है कि परमपिता परमात्मा की भक्ति करो, किसी को ईश्वर का साथी न बनाओ, निमाज़ पढ़ो, क्षमा धारण करो, सत्य बोलो, सगे सहोदरों तथा अन्य लोगों के साथ अच्छा व्यवहार करो। इस वृत्तान्त को सुन कर, पत्र को पढ़ कर और फिर उस स्वप्न के आधार पर जो इसने देखा था, हिरक़ल पर बड़ा प्रभाव पड़ा और उसने बड़े लाट पादरियों को बुला कर उनको समझाने का प्रयत्न किया कि इस मत को ग्रहण कर लेने में हमारा भला है, किन्तु जब उनको बहुत घृणा करते देखा तो कह दिया कि मैंने तो तुम्हारी परीक्षार्थ इस प्रकार कहा था। अंतमें इसी अवस्थामें वह चल बसा।

सभी मतों को एकता की ओर आने का

निमन्त्रण—इस पत्र में तथा इसी प्रकार के कई और पत्रों में आपने क़ुरान की वह आयत लिखी, जो इस अध्याय के प्रारम्भ में लिखी गई है। जिस का भाव यह है 'कि हे किताब! (ईश्वरीय-ज्ञान की पुस्तक) वाले लोगो! एक ऐसी बात को स्वीकार कर लो, जो हमारे और आप के मध्य एक समान है कि हम परमात्मा के अतिरिक्त किसी की पूजा न करें और न इस के साथ किसी अन्य वस्तु को शरीक़ बनाएँ और न हम में से कोई सृजनहार के सिवाय और किसी को रब्ब बनाए। इस आयत में एक ऐसा उच्च कोटि का सिद्धान्त है कि जिसके अनुसार यदि आज संसार कार्य्य करे तो सभी का एक मत पर एकत्रित हो जाना और सच्चा प्रेम तथा एक स्वर उत्पन्न हो जाना बहुत ही सरल है। और वह सिद्धान्त यह है कि सभी मतों में जो एक बात मिलती है, उसको नींव के समान स्वीकार कर लिया जावे और फिर ऐसे साधारण नियम स्थापित किए जाएँ, जो इस मुख्य नियम के विरुद्ध न हों। इस प्रकार से सारे मत इस एक सिद्धान्त पर सरलता से एकत्रित हो सकते हैं। मतों के मुक़ाबिले का जो नियम आज

निकला है, वह अभी एक अधूरा सा यत्न इस स्वर्ण सिद्धान्त को समझने का है, जो आज से तेरह सौ वर्ष पूर्व नबी करीम ने सिखाया था।

किसरा के नाम का पत्र—किसरा के नाम का पत्र अब्दुल्ला-बिन-हुज़ाफ़ लेकर गए थे। किन्तु इसलिये कि इन पत्रों का प्रारम्भ* "बिसमिल्लाह-इर्रहमान-उर्रहीम और मिन-मुहम्मद" से होता था, किसरा इस बात को सहन न कर सका कि इसके नाम पर भी संसार में किसी दूसरे का नाम होवे। उसने क्रोध में आकर हज़रत साहिब को भी बुरा-भला कहा, पवित्र पत्र को भी टुकड़े २ कर दिया और साथ ही आवेश में आकर अपने यमन के गवर्नर को, जिसका नाम बाज़ान था, आज्ञा भेजी कि हज़रत साहिब को पकड़ कर क़ैद कर लिया जावे। बाज़ान ने दो मनुष्य आप को पकड़ने के लिये भेजे। यह लोग अरबों की कुच्छ भी हस्ती नहीं समझते थे। इनके सिपाहियोंका इस प्रकार किसी को पकड़ लेना मामूली बात थी। जब यह लोग हज़रत साहिब की सेवा में पहुंचे और अपना सन्देश सुनाया तो आपने कहा, कि वह जो आप का

*आरम्भ परमात्मा के नाम से जो अति कृपालु और दयालु है और (श्री) मुहम्मद (जी) की ओर से।

स्वामी है, वह तो स्वयं मारा जा चुका है। इस पर वह बड़े आश्चर्य्य में पड़ गए और जब वापिस गए तो उन को पता लगा कि सचमुच उसी रात जब हज़रत साहिब ने कहा था किसरा अपने पुत्र के हाथों मारा गया। बाज़ान इन बातों को देख कर मुसलमान हो गया और ईरान के राज्य का सम्बन्ध यमन से टूट गया। इसके थोड़ी देर पीछे किसरा का सारा राज्य इसी प्रकार टुकड़े-टुकड़े हो गया जिस प्रकार उस ने नबी जी के पवित्र पत्र को टुकड़े-टुकड़े किया था।

नज्जाशी का इस्लाम ग्रहण करना—हबश के बादशाह नज्जाशी को भी एक पत्र भेजा गया। अभी हज़रत जाफ़र वहीं थे। इस पत्र के पहुंचने पर नज्जाशी ने इस्लाम ग्रहण किया और हज़रत जाफ़र के हाथ से मुसलमान बना।

मूता का युद्ध—अरब के रईसों को जो पत्र भेजे गये थे, मैंने उनका संक्षेप में वर्णन किया है। किन्तु इनमें भी एक पत्र विशेष महत्त्व रखता है। बुसरी, जो शाम देश की सीमा पर है, का बादशाह शराह-

बील-बिन-अमरू था। इसके नाम का पत्र भी हारस-बिन-उमीर लेकर गये। शराह बील ने इनका वध कर दिया। राज्य प्रतिनिधि का वध करना मानों युद्ध की स्पष्ट घोषणा था, इललिये हज़रत साहिब ने इससे पूर्व कि शत्रु आक्रमण करे, तीन हज़ार की सेना तय्यार कर के और उस पर ज़ैद-बिन-हारसा को नियुक्त करके शाम की ओर भेज दिया। सैन-तुल-विदाह तक आप भी साथ पधारे। एक स्वतन्त्र किए गए दास हज़रत ज़ैदका इतना सन्मान इस बराबरी का जीवित उदाहरण था, जो इस्लाम सिखलाता है। ऊँचे से ऊँचे मुहाजर क़ुरैशी और अनसार एक दास के आधीन किए गए। चाहे सेनापतित्व करने के योग्य इनमें से भी थे, किन्तु इसका भाव यह शिक्षा देने का था कि इस्लाम बराबरी स्थापित करने आया है; बड़े-बड़े सरदारों को आज्ञा देने के स्थान पर आज्ञा मानने का पाठ भी सिखाना था।

उधर शराह-बील ने एक लाख सेना एकत्रित कर रखी थी और क़ैसर रूम भी तय्यारी कर रहा था। मूता के स्थान पर युद्ध हुआ। ज़ैद शहीद हो गए। इसके पीछे हज़रत साहिब की सम्मति के अनुसार,

हज़रत जाफ़र ने झण्डा सम्भाला । वह भी इतनी शूर-वीरता से लड़े कि नौ घाव खाकर अन्त में शहीद हुए । इस के पीछे अब्दुल्ला-बिन-रवाह सेना-नायक बने, और वह भी शहीद हो गए । हज़रत साहिब ने यहां तक ही व्याख्या की थी । इसके पीछे सर्व-सम्मति से हज़रत ख़ालिद सेनापति नियुक्त हुए और अत्यन्त बुद्धिमत्ता के साथ अपनी सेना को, जो शत्रु के मुक़ाबिले में कुच्छ भी हैसियत नहीं रखती थी, बचाया । यह घटना जमादी-उल-अव्वल सन् आठ हिजरी की है ।

इस्लाम की सफलता पर हज़रत जी का पक्का विश्वास—विचार करने योग्य बात यह है कि संसार के बादशाहोंको यह पत्र कब लिखे जाते हैं ? यदि हज़रत साहिब सारे अरब को जीत लेने के अनन्तर बाहिर के देशों के साथ पत्र-व्यवहार करते, तो यह विचार हो सकता था कि सफलता हो जाने पर अब आप को इस प्रकार की बात सूझी । किन्तु उस समय की दशा क्या है ? अभी बारह मास पहिले मदीने के आस-पास ऐसा घेरा पड़ रहा था कि

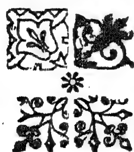
मुसलमानों में से एक जीव के भी बचने की आशा नहीं थी। अब भी यह दशा है कि हज्ज जैसा इस्लाम का आवश्यक कर्त्तव्य रुका हुआ है और आप इस को पूरा नहीं कर सकते। काफ़िरों का इतना ज़ोर है कि जो शर्तें चाहते हैं, मनवा लेते हैं और आप को एक हारे हुए पक्ष की भांति उनकी सब बातें स्वीकार करना पड़ती हैं। अ़रब में चारों ओर शत्रु ही शत्रु हैं तथा जो थोड़े बहुत कहीं कहीं मुसलमान हैं भी वह कर कुच्छ नहीं सकते। परन्तु इस्लाम की भावी सफलता सम्बन्धि आप का विश्वास कितना दृढ़ है कि न केवल इन आशाओं को तोड़ने वाली घटनाओं से इस को कोई हानि नहीं पहुंचती अपितु आप इतना पक्का विश्वास रखते हैं! हां, अपने आन्तरिक नेत्रों के कारण जानते हैं कि इस्लाम सारे संसार में प्रधान होवेगा, तथा उस काल के महान् राज्यों में इस्लाम का प्रचार करते हैं। ईश्वर करे कि इस समय के मुसलमान, जो युरुप में इस्लाम के प्रचार की ओर से इस कारण निराश हो रहे हैं कि मुसलमानों का कोई उच्च प्रभावशाली राज्य नहीं रहा,

आप के जीवन की इन घटनाओं की ओर ध्यान करते। फिर आप के शत्रु भी विचार करें कि क्या यह विश्वास किसी झूठ पर निर्भर हो सकता है? और थोड़े वर्षों में ही आप के इन बादशाहों के पत्र लिखने का परिणाम देखते हुए सोचें कि क्या कोई पागल ऐसे विचारों को मन में लाकर संसार में इस प्रकार सफल हुआ है? और यदि यह घटनाएँ साफ़ तौर पर यह सिद्ध करती हैं कि हज़रत मुहम्मद साहिब न झूठे थे न पागल। तो फिर वह निश्चय ही परमात्मा के सच्चे रसूल हैं। इससे यह भी साफ़ पता लगता है कि आप प्रारम्भ से ही अपने मत के सारे संसार के लिये होने का दृढ़ बिश्वास रखते थे। जो लोग हज़रत ईसा के मत को सर्व साधारण का मत बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं, उन के मार्ग में कितनी कठिनाईयां हैं कि हज़रत ईसा स्वयं यह कहते हैं कि "मैं बनी-इसराईल की भूल चुकी भेड़ों के अतिरिक्त अन्य किसी के पास नहीं भेजा गया" और एक अन्य जाति की स्त्री के लिए प्रार्थना तक करने से इन्कार करते हैं। परन्तु हज़रत मुहम्मद साहिब अपने हाथ से सब दावों को पूर्ण करके

दिखाते हैं। यदि वह सब जातियों के लिये रसूल होने की घोषणा करते हैं तो स्वयं ही समस्त जातियों को निमन्त्रण देकर भी दिखा देते हैं।

नबी जी की मुद्रा (मोहर)—यह पत्र मुहर्रम सन् ७ हिजरी में लिखे गए और इन पर एक मोहर लगाई गई जिस पर खुदा हुआ था "मुहम्मद रसूल अल्लाह" जैसा कि हदीसों में आता है। कई वचनों से यह भी पता लगता है कि इस मुद्रा में अल्लाह का अक्षर सब से ऊपर था और मुहम्मद सब से नीचे तथा रसूल मध्य में था। मूक़ूक़स के पत्र की जो प्रतिलिपि मिली है, उस में भी यह शब्द बिल्कुल ऐसे ही मिले हैं—अल्लाह रसूल मुहम्मद।

इसी वर्ष सन् ७ हिजरी के अंत में आपने सन्धि की शर्तों के अनुसार हज्ज किया। उसी वर्ष हबश के शेष हिजरती मदीने में वापिस आए।



२२—मक्के की विजय

——:***—*—***:——

"आज तुम पर कोई फिटकार नहीं। ईश्वर तुम्हें क्षमा करे और वह सब दयावानों से अधिक दयावान् है।"

(सूरत यूसफ़—६२)

❀ दस हज़ार धर्म्मियों के साथ आया ❀

क़ुरैश का वचन भंग करना—क़ुरैश के अत्याचारों का प्याला अब भरा जा चुका था। सन् ८ हिजरी समाप्त होने वाला था। हदीबिया की संधि को लगभग पौने दो साल गुज़र चुके थे। इस्लाम की उन्नति काफ़िरों को अच्छी नहीं लगती थी। अन्ततः उन्होंने वचन भंग किया। हदीबिया की संधि की शर्तों के अनुसार ख़ज़ाइया हज़रत साहिब के साथी हो गए थे और उनके पुराने शत्रु बनो-बकर क़ुरैशों के साथी हो गए। बनो बकर ने पहिल की और

ख़ज़ाइया पर हल्ला बोल दिया। क़ुरैश के रईसों ने उनकी सहायता की और रात को उनके साथ मिल कर लड़ते रहे। विश्राम लेने के लिये ख़ज़ाइया हरम की सीमाओं में पहुंचे। किन्तु बनो-बकर ने, उन पर वहां भी तलवार चलाई और क़ुरैश ने अपने पत्त वालों को न रोका। ख़ज़ाइया का एक डैपूटेशन (प्रतिनिधि-मण्डल) नबी करीम की सेवा में उपस्थित हुआ, और सब हालात कर्णगोचर किए। हज़रत साहिब ने अपना एक प्रतिनिधि क़ुरैश के पास भेजा कि तीन शर्तों में से एक स्वीकार कर लो। या तो रुधिर बहाने (वध करने) का बदला दें या बनो बकर की सहायता करना छोड़ दें और या यह घोषित कर दिया जाय कि हदीबिया का संधिपत्र टूट गया। उत्तर में क़ुरैश ने कहला भेजा कि तीसरी शर्त स्वीकृत है। पीछे अबु-सफ़यान ने क़ुरैश की इस बेवक़ूफ़ी और बेसमझी पर पर्दा डालना चाहा, क्योंकि इस सन्धिपत्र को खुल्लमखुल्ला तोड़ने में इसको कई भय प्रतीत होते थे। इस वास्ते वह भी हज़रत साहिब की सेवा में उपस्थित हुआ कि प्रतिज्ञापत्र फिर नए सिरे से पुनर्जीवित किया जावे। आप ने क़ुरैश की नीयत

ताड़ ली। प्रतिज्ञापत्र को नया करना केवल एक चाल थी, मांगों के पूरा करने की ओर नितान्त कोई ध्यान नहीं था, इस वास्ते हज़रत साहिब ने इस को स्वीकार न किया और वह बिना कार्य्य सम्पन्न किए वापिस लौट गया।

हज़रतजी की मक्के पर चढ़ाई—हज़रत साहिब ने मक्के पर आक्रमण करने का प्रबन्ध करना आरम्भ कर दिया और अपने पक्ष के क़बीलों को भी बुलाया, ताकि उस जाति को, जिसको अधिकताएँ करते हुए २१ वर्ष व्यतीत हो चुके थे, उन के अत्याचारों का कुच्छ फल चखाया जावे। यह उस जाति पर चढ़ाई थी, जिसने तीन बार मदीने पर चढ़ाई करके मुसलमानों का चिह्न तक मिटाना चाहा था। लोगों ने इस तय्यारी को देख कर यही विचार किया होगा कि अब इस्लाम के इन पुराने शत्रुओं को मलियामेट कर दिया जावेगा। और उस जाति को जिसने इतनी देर अत्याचार करते हुए कभी भी पश्चात्ताप प्रकट नहीं किया, नष्ट कर दिया जावेगा।

हातिब की घटना—एक मुसलमान हातिब-बिन अबी-बुलतहा के कुच्छ सगे-सम्बन्धि मक्के में थे।

उन्होंने एक दूतको पत्र देकर नबी करीम की तय्यारी का समाचार पहुंचाने का प्रयत्न किया, किन्तु सब कुछ करने करानेवाले परमात्मा को यह स्वीकार नहीं था कि शत्रु पहिले से ही मुक़ाबिले के लिए तय्यार हो सके, जिस के फलस्वरूप वध हों और लहू बहे। ईश्वर, संसार के महान् दयालु की खड्ग के साथ विजय को भी वध करने और लहू बहाने से पवित्र रखना चाहता था। परमात्मा ने नबी करीम को इस भेद से सूचित कर दिया और हातिब का दूत पकड़ा गया। मुसलमानों को अत्यन्त क्रोध आया कि इसने मुसलमान होकर द्रोह किया है। हातिब पकड़े गए, परन्तु इसका सम्बन्ध किसी सांसारिक राजा या सेनापति के साथ नहीं था कि कोर्ट-मार्शल होकर उड़ा दिया जाता। यह युद्धात्मक आक्रमण बदला लेने के विचार से नहीं था, प्रत्युत क्षमा प्रदान करने के लिए था। फिर अपने साथियों के दोषों को क्यों क्षमा न किया जाता। हातिब की प्रार्थना स्वीकृत हुई।

दस हज़ार धार्मिक मनुष्य—अन्त में दस हज़ार श्रद्धालुओं के साथ १० रमज़ान-उल-मुबारिक सन्

आठ हिजरी को जगत् के नायक चले, ताकि दो हज़ार वर्ष पहिले के वह शब्द पूर्ण हों, जो हज़रत मूसा के मुख से सुनाए गए थे कि "वह दस हज़ार श्रद्धालुओं के साथ आया"। हज़रत मूसा के पीछे का सारा इतिहास इन शब्दों की सत्यता दिखलाने से असमर्थ दिखाई देता है। कैसा आश्चर्य्य-जनक दृश्य है! दस हज़ार भी हैं और हैं भी परमपिता के पवित्र और प्रसिद्ध लोग, जिन का वास्तविक अभिप्राय संसार में युद्ध करना नहीं, प्रत्युत पवित्र परमेश्वर की प्रतिष्ठा और उसकी भक्ति करना है। मक्के शरीफ़ से एक पड़ाव पर एक स्थान "मरउल ज़हिरान" है। यहां डेरे डाल दिए गए और समस्त आक्रमण-कारियों के नियम के विरुद्ध आज्ञा हुई कि सब डेरे, जिन से मैदान भरा पड़ा था, अलग अलग आग जलावें, ताकि कुरैश, हल्ला करने वालों के बल को देख कर निष्फल संघर्ष से, जिसका परिणाम क़त्ल करना और ख़ून बहाना है, रुक जावें। इस चढ़ाई में एक एक पग पर आपके हृदय का यह जोश प्रकट होता है कि मानुषिक रुधिर की एक बून्द भी न गिरे।

अबु सफ़ियान का मुसलमान होना—ईश्वर की महिमा का आश्चर्य-जनक दृश्य है कि सब से पहिले जो पुरुष नबी करीम के समक्ष लाया जाता है, वह इस्लाम का सब से बड़ा शत्रु अबु-सफ़ियान है, जिस ने कई वार इस्लाम का समूल नाश करने का संकल्प किया। अबु-सफ़ियान जैसा शत्रु और क्षमा! प्रकटतया यह दो विरोधी बातें दिखाई देती थीं, परन्तु संसार के दयालु की क्षमा के सामने कोई बात अनहोनी नहीं थी। अबु-सफ़ियान को छोड़ दिया गया। डेढ़ वर्ष पूर्व जब क़ैसर के समक्ष बात चीत हुई थी तो अबु-सफ़ियान का हृदय तो तभी से ही बिंधा पड़ा था। अब सारी शक्ति के होते हुए अपनी हार और अति दीनता के होते हुए इस्लाम की इस अन्तिम सफलता के दृश्य और नबी करीम की उच्च कोटि की क्षमा—इन सारी बातों ने अबु-सफ़िआन जैसे शत्रु के हृदय को भी अन्त में खींचा। वह प्रबल छाप जो २० वर्ष से लगी चली आती थी, टूटी और वह एकता का कलमा पढ़ कर मुसलमान हो गया।

मक्के वालों के लिए आप की घोषणा—

इस्लामी सेना की प्रतिष्ठा का सिक्का और आतङ्क हृदय में धारण करके अबु-सफ़ियान वापिस मक्के में पहुंचे और लोगों को यह समाचार देकर कि टक्कर लेना निष्फल है, नबी करीम की घोषणा पहुंचा दी कि जो पुरुष अबु-सफ़ियान के घर में प्रवेश कर लेगा, उस का जीवन सुरक्षित होगा। जो पुरुष अपना दर्वाज़ा बन्द कर लेगा, उस को भी कोई भय नहीं होगा तथा जो मनुष्य काअ़बे में प्रविष्ट हो जाए, उसके लिऐ भी क्षमा है। यहां भी इस्लाम के तलवार के ज़ोर से फैला हुआ माननेवालों को निराशा ही होवेगी क्योंकि इस घोषणा में भी यह शर्त नहीं कि जो मनुष्य मुसलमान हो जाए, उसको अभयदान (अमन) दिया जावेगा। प्रत्युत काफ़िरों को काफ़िर रहते हुए भी क्षमा देने की घोषणा की जाती है।

अन्त में नबी जी की सेना अलग-अलग भागों में भिन्न-भिन्न दिशाओं से मक्के की ओर बढ़ी। साअ़द-बिन-उब्बादा के आधीन भी एक भाग था। जब वह अनसार को लेकर आगे बढ़े और अबु-सफ़ियान के पास से गुज़रे, तो ऊँची आवाज़ से कहा :—

" आज युद्ध का दिन है। आज मक्के के लिए

सुख नहीं । नबी करीम ने झटपट झण्डा इनके हाथ से लेकर इनके सुपुत्र क़ैस के हाथ में दे दिया कि स्यात् आवेश में आकर रुधिर बहा दें।

ख़ालिद और इकरमा का मुक़ाबिला—ख़ालिद को आज्ञा थी कि सेनाओं के साथ बाहिर की ओर से आवें । यह वह भाग था, जहाँ हज़रत साहिब के कट्टर से कट्टर शत्रु रहते थे और यह वह भाग था जो खज़ाइया पर आक्रमण में सम्मिलत हुआ था । उन ही में अबु-जहल का पुत्र इकरमा भी था। यह लोग क्षमा की घोषणा होते हुए भी न रुके और ख़ालिद की सेना पर तीर बरसाने प्रारम्भ कर दिये। मजबूर होकर ख़ालिद को हल्ला करना पड़ा। काफ़िरों की ओर से कुच्छ व्यक्ति, जिनकी संख्या १३ से २८ तक बताई जाती है, मारे गए । मुसलमानों की ओर से दो शहीद हुए । हज़रत साहिब इस समय एक ऊँचे स्थान पर पहुंच गए थे, जहां से सारा नगर भली-भांति दृष्टिगोचर होता था । ख़ालिद की सेना की तलवारों की चमक देख कर आप को अत्यन्त शोक हुआ और आप ने कहा कि क्या मैंने यह कड़ी आज्ञा नहीं दी थी कि रुधिर न

बहाया जावे। खालिद से पूछ-ताछ की गई, परन्तु कारण वज़नदार था।

ख़ाना काअ़बा को मूर्तियों की मल से पवित्र करना—मक्के को जीत कर अब आप ख़ाना काअ़बा की ओर बढ़े और इस पवित्र घर को जो संसार के लिये एकता का स्रोत था, मूर्तियों की मैल से पवित्र किया। और क़ुरान की यह आयत जो बहुत मुद्दत पहिले आप पर उतरी थी, पढ़ते हुए मूर्तियों को तोड़ते जाते थे। "कहो! सत्य आ गया और झूठ मिट गया। सचमुच झूठ मिटनेवाला ही था।" और यह झूठ ऐसा मिटा कि एकता का स्रोत फिर कभी इससे अपवित्र नहीं हुआ और न आगे कभी होवेगा। इब्राहीम के स्थान पर आपने दो रकअ़त निमाज़ पढ़ी। फिर उस्मान-बिन-तलहा को, जिनके पास ख़ाना क़ाअ़बा की चाबी थी, बुलाया और ख़ाना काअ़बा खोल कर दो रकअ़त निमाज इसके भीतर पढ़ी। फिर चाबी उस्मान को वापिस दी और कहा कि "यह सदा के लिए तेरे पास और तेरी संतति में रहेगी।" इस सदाचार की उच्चता को देखकर उस्मान मुसलमान हो गया।

अलौकिक क्षमा प्रदान—इसके पीछे आपने एक व्याख्यान सर्वसाधारण के लिए दिया, जिस में ईश्वर की एकता और मनुष्य संतान की बराबरी का वर्णन किया। इसके अनन्तर कुरैश के विशेष समूह को सम्बोधित किया। उस समय आप के सामने सारा मक्का एक दोषी की हैसीयत में उपस्थित था। क्या क्या कष्ट आप को और आप के अनुचरों के छोटे से समूह को यहां मिल चुके थे। किस प्रकार यह भूमि आप के लहू की प्यासी रही थी। किस प्रकार इसके निवासियों ने सदाचार और जाति संबंधि सब नियमों को तोड़ कर एक-एक मुसलमान पर ऐसे २ अत्याचार किए थे, जिनके सुननेमात्र से रोमांच हो जाता है। फिर न केवल इस धरती पर ही उनको भयानक दुःख दिये थे, प्रत्युत जब इन लोगों ने दूसरे स्थान में सिर छिपाना चाहा तो वहां भी उनका पीछा किया और फिर कई बार असंख्य सेनाओं के साथ मदीने को नष्ट करना चाहा। ऐसे ईर्ष्यालु शत्रुओं, ऐसे मानवी अंश के अधिकारों को नाश करनेवाले और निरपराधों पर अत्याचार करने वाले ऐसे मनुष्यों के लिये

जिस नर्म से नर्म दण्ड की व्यवस्था हो सकती थी, वह यही हो सकती थी कि कुच्छ नेताओं को बुद्धि सिखादेने वाले दण्ड दिये जाएँ, कुच्छ शरारती लोगों का चिह्न तक मिटा कर सदा के लिए उन की शरारतों का अन्त कर दिया जावे। बहुत सों के साथ जेलखाने (कारागार) भर दिए जाएँ, उनकी शक्ति और प्रतिष्ठा को सदा के लिए मिटा दिया जावे, उनके साथ ऐसा वर्ताव अवश्य किया जावे कि वह दुबारा सिर उठाने के योग्य न रहें। सभ्य से सभ्य दया और क्षमा यही है कि कुच्छ लोगों को चाहे वह निरपराध हों और चाहे अपराधी, दण्ड देकर दूसरों के लिए उदाहरण स्वरूप बनाया जावे। और शेष को अपमानावस्था में छोड़ दिया जावे। यही व्यवहार संसार के इतिहास में सदा संसार को जीतने वालों ने उन लोगों के साथ किया जिन से उनको कभी थोड़ा-बहुत कष्ट भी पहुंचा था। यही वर्ताव आज कल के सभ्य राज्य अपनी प्रजा से करते हैं, जब उनसे कोई अपराध हो जावे। बदले की इच्छा मनुष्य में बड़ी प्रबल इच्छा है और फिर जब इसका ज़ोर हो और दूसरा पक्ष हारा हुआ

हो, तो बहुत बार यह इच्छा सदाचार की सीमाओं को भी तोड़ देती है । परन्तु कुरैश के हृदय गवाही देते थे कि मुहम्मद रसूल अल्लाह उनके साथ यह व्यवहार नहीं करेंगे । इसलिए जब आप ने इन अपराधियों के टोले से पूछा कि तुम अपनी करतूतों को जानते हो, मुझ से किस कर्तव्य की आशा रखते हो ? तो उन्होंने ने उत्तर दिया कि "आप दयालु हो और दयालु के सुपुत्र हो ।" वह नबी जी के सदाचार से अनजान नहीं थे । वह जानते थे कि चालीस वर्ष की पहिली अवस्था में जैसा सदाचार आपने प्रकट किया, उसमें राज्य-सत्ता आने पर भी कोई अन्तर नहीं पड़ा । परन्तु जो व्यवहार आपने इनके साथ किया, वह इनकी आशाओं से भी अधिक था । आप ने कहा 'आज के दिन आप पर कोई फिटकार नहीं ।" कितना खुला हृदय है । दण्ड तो एक ओर रहा, इन बुरे कामों पर, इन अत्याचारों पर फिटकार का एक शब्द भी नहीं । संकेतके साथ कुछ झाड़ भी नहीं । इन से यह प्रतिज्ञा भी नहीं ली कि हम आगे से ऐसी करतूतें नहीं करेंगे । हिजरतियों की जायदादें काफिरों के अधिकार में थीं,

इनको भी वापिस नहीं मांगा। प्रत्युत हिजरतियों को ही आज्ञा की कि सब अधिकारों को छोड़ दो। अबु-जहल का पुत्र इकरम मक्के की विजय के समय भी शरारत करने से न रुका और मुसलमानों की सेना पर आक्रमण करके दो मनुष्यों को मार दिया। फिर अपनी करतूतों से डर कर कहीं भाग गया। इसकी पत्नी बड़ी परेशानी की अवस्था में नबी के दर्बार में उपस्थित हुई और अपने पति के लिए क्षमा याचना की। आपकी खुली दयालुता के सामने कोई प्रार्थना रद्दी नहीं होती थी। आपने इकरमा को भी क्षमा की आज्ञा दे दी। हिन्दा, जिसने हज़रत हमज़ा का कलेजा चबाया था, उस को भी क्षमा प्रदान की गई। वहशी, जिसने हज़रत हमज़ा को मारा था, उस को भी क्षमा किया गया। हब्बार जिसने हज़रत साहिब की सुपुत्री को मक्के से मदीने जाते समय पत्थर मारे थे, जिस के परिणाम स्वरूप वह अन्त में चल बसीं, उस को भी क्षमा किया गया। इस प्रकार के शरारतियों और फ़सादियों के लिए, ऐसे आततायों के लिए इस प्रकार की क्षमा का उदाहरण संसार के इतिहास में अन्य कोई नहीं और निश्चय ही नहीं तो इस

मनुष्य और मनुष्यों का नेता, मनुष्यता का जीवन और जगत् दयालु होने में किसको सन्देह हो सकता है ? क्षमा की शिक्षा संसार में बहुत लोग दे सकते हैं, परन्तु अपने आप पर अत्याचार करने वालों को, अपना नाश चाहने वालों को, बल्कि इस के लिए पूरा ज़ोर लगाने वालों को, उन पर विजय प्राप्त करके, ऐसी क्षमा प्रदान करना कि फिटकार तक भी उनके इन कामों पर न डाली जावे, यह न ईसा के जीवन में मिलता है और न किसी ईसाई के जीवन में इस का उदाहरण मिलता है । यह प्रतिष्ठा केवल इस्लाम के भाग में ही आई है ।

लोगोंका हुमहुमा के मुसलमान होना—मक्का विजय हो गया और लोग काफ़िर ही रहे, परन्तु इस क्षमा ने सब हृदयों को जीत लिया । अबु-सफ़ियान जैसे शत्रुओं के हृदयों में अपने गुणों के कारण इस्लाम पहिले ही बस चुका था । अब इस अन्तिम दृश्य ने विरोध की कमर तोड़ दी । लोगों ने अपनी आंखों से देख लिया कि दीन दशा में हज़रत मुहम्मद साहिब के साथ ईश्वरीय विजय के जो वचन किए गए थे, वह इनकी आँखों के सामने किस प्रकार

पूरे हुए और संसार की समस्त शक्तियां एकत्र होकर भी आपका कुच्छ न बिगाड़ सकीं। यह आप की सत्यता का पूर्ण प्रमाण था, जिसने रहे-सहे सन्देह को भी दूर कर दिया। आज फिर जब सारा संसार इस्लाम की जड़ें उखाड़ने पर उतारू हुआ २ है, हां, संसार की समस्त शक्तियां इसका चिह्न तक मिटाने के लिये शक्ति भर प्रयत्न कर रही हैं, वही दृश्य परमपिता परमात्मा पुनः दिखाना चाहता है, ताकि शत्रु स्वयं अपनी आँखों से इस्लाम की सत्यता का यह दृश्य देख लें कि वह इन के मिटाने से नहीं मिट सकता। और न सारा संसार ही एकत्रित हो कर ईश्वरीय धर्म का कुच्छ बिगाड़ सकता है।

संक्षेप यह है कि लोग उमड़ २ कर इस्लामके अन्दर प्रवेश करने लगे। आप सफ़ा पहाड़ पर एक उच्च स्थान पर विराजमान् थे। मक्का वासियों में से जो लोग चाहते, वह जगत् के सर्दार के हाथों से इस्लाम ग्रहण करते जाते थे। पुरुषों के अनन्तर स्त्रियों की बारी आई, और उन्होंने भी इस्लाम धारण किया। परन्तु लोग अपनी प्रसन्नता से मुसलमान होते थे. किसी एक व्यक्ति पर भी सख़्ती नहीं हुई। कई

लोग ऐसे भी रह गए, जिन्होंने बहुत दिन बाद इस्लाम ग्रहण किया। ऐसे लोगों से किसी ने पूछ-ताछ नहीं की, यहां तक कि हुनैन के युद्ध में इन में से बहुत से लोग, मुसलमानों के साथी होकर युद्ध करने वाले थे, चाहे वह अभी तक मुसलमान नहीं हुए थे। मक्के की विजय पूर्णतया इस लाञ्छन की तरदीद करती है कि कभी किसी व्यक्ति का तलवार के ज़ोर से मुसलमान किया गया हो। इस से बढ़िया अवसर तलवार के ज़ोर से मुसलमान करने का और कौन सा हो सकता था ? परन्तु विजय की सब घटनाओं में एक व्यक्ति के भी इस प्रकार मुसलमान बनाने की साक्षी नहीं मिलती। म्यूर मानता है :—

"चाहे मक्का नगर ने प्रसन्नता से स्वयं आप के राज्य को स्वीकार कर लिया था, किन्तु सब वासियों ने अभी तक नवीन मत धारण नहीं किया था और न ही आप का पैग़म्बर होना माना था। स्यात् आप वही मार्ग ग्रहण करना चाहते थे, जो मदीनेमें धारण किया था और इनके धार्मिक परिवर्त्तनमें सख़्ती करने के स्थान पर, नर्मी से कार्य्य लेना चाहते थे।

२३—हुनैन का संग्राम और सम्बद्ध घटनाएँ

——:***—*—***:——

" और हुनैन के दिन जब तुम्हारी अधिक संख्या तुम्हें अच्छी लगी (तो) फिर वह तुम्हारे किसी भी काम न आई और पृथ्वी विशाल होते हुए भी तुम्हारे लिये संकुचित हो गई ।"

(सूरत तौबा—२५)

हवाज़िन की एकत्रता—मदीने शरीफ़ से चले हुए अभी पूरा एक मास भी व्यतीत नहीं हुआ था कि मक्के के पूर्व की ओर हवाज़िन जाति का चिन्ताजनक समूह हज़रत साहिब पर आक्रमण करने के विचार से एकत्रित होना प्रारम्भ हुआ। हदीबिया की सन्धि से पीछे इस्लाम की जो उन्नति प्रारम्भ हुई, उसने इन लोगों को दुःखी कर रखा था और मक्के की विजय से बहुत काल पहिले उन्होंने अरब

के क़बीलों में दौरा करके इस्लाम के विरुद्ध उनको उभारना प्रारम्भ कर रखा था। मक्के के विजित होने के साथ ही उन्होंने समझ लिया कि यदि झटपट आक्रमण न किया गया, तो हज़रत साहिब की शक्ति बहुत बढ़ जायगी। युद्ध प्रिय जाति थी, दिनों में ही तय्यारी हो गई। हज़रत साहिब को इसकी सूचना मिली तो आप ने पहिले खोज करने के लिये एक मनुष्य को भेजा और यह जान कर कि बड़े जोश के साथ यह संगठन हो रहा है, एकदम तय्यारी प्रारम्भ कर दी। दस हज़ार मनुष्य तो पहिले ही से आप के साथ थे, दो हज़ार मनुष्य मक्का वासियों में से साथ हो लिए। और कुल बारह हज़ार सेना को साथ लेकर आप हुनैन की वादी की ओर बढ़े, जहां हवाज़िन जाति का संगठन हो रहा था।

सेना का अधिक होना और युद्ध सामग्री की अधिकता—सेना अधिक होने के अतिरिक्त मक्के से युद्ध की सामग्री भी बहुत कुच्छ मिल गई। इस सामान और सेना पर लोगों को बड़ा घमण्ड हुआ कि अब हमारी शक्ति बहुत बढ़ गई है। किन्तु

परमपिता यह दिखाना चाहता था कि इस्लामी विजय केवल ईश्वर की कृपा से है। एक वह युद्ध-क्षेत्र थे, जहां अपने से तिगुनी, चौगुनी अपितु दस गुनी संख्या को मुसलमानों ने हराया परन्तु हुनैन के क्षेत्र में युद्ध के प्रारम्भ में वह दृश्य देखना पड़ा, जिसका चित्र परमात्मा ने इन अक्षरों में खींचा है, जोकि इस अध्याय के प्रारम्भ में लिखे गए हैं, अर्थात् हुनैन के दिन जब तुम्हारी संख्या तुम्हें अच्छी लगी, तो वह तुम्हारे किसी काम न आई और पृथ्वी खुली होते हुए भी तुम्हारे वास्ते तंग हो गई, फिर तुम पीठ दिखा कर भाग उठे।

हवाज़िन बड़े बाण विद्या निपुण थे, मुसलमानों के पहुंचने से पहिले वह सारे अच्छे २ स्थानों को रोक चुके थे और धनुर्धारियों के जत्थे भिन्न भिन्न गुप्त स्थानों पर नियत कर दिए थे। मुसलमानों के भाग में नीचा स्थान आया। युद्ध आरम्भ होते ही मुसलमानों पर चारों ओर से तीर बरसने शुरू हो गए और सामने से सेना ने आक्रमण किया। अगली सेना का नेतृत्व ख़ालिद-बिन्-वलीद के हाथों में था। उनके आधीन मक्का निवासियों की सेना थी, जो अभी

तक मुसलमान नहीं हुए थे। सबसे पहिले यही लोग तीरों के निशानों के नीचे आए और मुक़ाबिला न कर सके। इनके पीछे हटने से सारी सेना में गड़बड़ मच गई और असंगत रूप से सब पीछे हटने आरम्भ हो गए, यहां तक कि हिजरतियों और अनसारियों की सेनाएँ भी इन सब की हार में सम्मिलित हो गईं और नबी करीम इस बढ़ते हुए भयानक शत्रु के सामने अकेले ही रह गए।

नबीजी का अकेले शत्रुओं का मुक़ाबिला करना—नबी जी के साथ केवल हज़रत अब्बास और कुच्छ विशेष साथी थे। आपने देखा कि सारी सेना भागी जा रही है, परन्तु आप के सङ्कल्प और दृढ़ता में ज़रा भी अन्तर न आया। यदि आप अकेले हैं तो क्या? और यदि शत्रु विजय प्राप्त करके शीघ्रता से आगे बढ़ रहा है तो क्या? सब शक्तियां से बड़ी शक्ति आप के साथ है। इस अकेले होने पर भी ईश्वरीय विजय के विश्वास का स्रोत फिर वह चला और शत्रु के मुक़ाबिले में अकेले खड़े होकर आप ने बारबार उच्च स्वर से कहा, "मैं नबी हूं, इसमें कुच्छ भी असत्य नहीं, मैं अब्दुल मतलब का सुपुत्र हूं।"

इधर इस आवाज़ पर और उधर हज़रत अब्बास की पुकार पर कि "हे अनसार के जत्थे !, हे मुसलमानो !" चारों ओर से "हां हां हम आप की सेवा में उपस्थित हैं" की आवाज़ें आईं और पल भर में बिखरी हुई सेनाऐं हज़रत साहिब के आस पास एकत्रित होनी शुरू हो गईं। लोगों ने न घोड़ों की पर्वाह की और न शस्त्रों की और जोश से भरे हुए इस प्रकार बढ़े कि बढ़ते हुए शत्रु के पैर उखड़ गए। कुच्छ भाग दौड़ गया। एक भाग कुच्छ देर और टक्कर लेता रहा। अन्त में उनका ध्वजा धारी मारा गया और वह भी भाग गए।

युद्ध की लूट—हवाज़िन जब घरों से निकले थे तो उनके सेनापति मालिक ने जो एक युवक था, आज्ञा दी थी कि स्त्रियां और बच्चे भी साथ निकलें और युद्ध में सम्मिलित हों। उस का विचार था कि इस प्रकार सेना स्त्रियों की शर्म करके पीछे न हटेगी। परन्तु जब वह समय आया तो स्त्रियों और माल को भी छोड़ गए और चौबीस हज़ार ऊँट, चालीस हज़ार भेड़ बकरीयां, चार हजार 'औकीआ'* चांदी और

---

*एक तोल का नाम है।

छः हज़ार बन्दिजन आपके हाथ आए। लूटके माल को एक सुरक्षित स्थान पर पहुंचा कर आप आगे बढ़े। हारी हुई सेना का एक भाग औतास में चला गया, जहां नबी करीम ने थोड़ी सी सेना भेज दी और उनके संगठन को छिन्न भिन्न करके यह लोग वापिस लौट आए।

ताइफ़ को घेर लिया—शेष भाग ताइफ़ में जा छिपा जोकि एक बचाव की जगह थी। नगर के चारों ओर चार दीवारी थी। लोग युद्ध विद्या को जानते थे और युद्ध के नवीन शस्त्रों यथा मञ्जनीक आदि से भिज्ञ थे। उन्होंने वर्ष भर के लिए रसद नगर के भीतर एकत्रित कर के चारों दिशाओं में युद्ध के शस्त्रादि लगा दिए और स्थान २ पर सैनिक नियत कर दिये। हज़रत साहिब स्वयं सीधे उस स्थान की ओर बढ़े और नगर को घेर लिया। कई जातियों की सहायता से आपने भी इन लोगों के मुक़ाबिले में युद्ध के नवीन शस्त्रों का प्रयोग कराया, परन्तु कुच्छ दिन पीछे जब आप ने देखा कि घेरा लम्बा हो रहा है तो आपने विचार विमर्श किया। एक अनुभवी बद्दू शेख़ ने सम्मति दी कि लूमड़ी अपनी कन्दरा में छुप गई है,

यदि आप अधिक दिन तक प्रतीक्षा करें, तो पकड़ी जाएगी। यदि इसको इसी दशा में छोड़ दें तो आप को कोई हानि न पहुंचा सकेगी। आप का वास्तविक अभिप्राय तो केवल इस्लाम का आक्रमण आदि से बचाव करना ही था, अतः आपने झट घेरा उठा लिया और वापिस हो पड़े। चलते समय किसी ने कहा कि आप इन लोगों को शाप दीजिये। यही वह स्थान था, जहाँ आप पर पत्थर बरसाए गए थे और केवल सत्य के शब्द पहुंचाने के कारण लहू-लुहान करके नगर से निकाला गया था।

शत्रुओं के लिए शुभाशीर्वाद—किन्तु हज़रत साहिब ने चलते समय यह प्रार्थना की "हे परमात्मन्! तू सक़ीफ़ जाति को सुबुद्धि प्रदान कर और उनको मेरे पास ला अर्थात् उनको इस्लाम धारण करने को सामर्थ्य प्रदान कर।" परमपिता ने आप की यह प्रार्थना स्वीकार की और थोड़े ही दिनों के पश्चात यह लोग मुसलमान हो गए। इसी से अनुमान करें कि आप के हृदय में मनुष्यमात्र की भलाई के कैसे विचार हिलोरें लेते थे। शत्रु के लिए भी शिक्षा की प्रार्थना है।

इस्लामी युद्धों का उद्देश्य—विचार करने का स्थान है कि क्या यह लड़ाई इस्लाम ग्रहण कराने के लिये की गई थी। यदि नबी करीम के युद्धों का अभिप्राय तलवार के बल से मत चलाने का था तो इसके क्या अर्थ कि जो लोग कुच्छ दिन घेरा डाल रखने से बात मान सकते हैं उनको यूंही छोड़ दिया जावे। क्या हज़रत साहिब इस आयत के अर्थ नहीं समझते थे कि "युद्ध करते रहो, यहां तक कि झगड़ा न रहे और धर्म्म परमात्मा के लिये हो।" यदि झगड़ा न रहने और धर्म्म परमात्मा के लिए होने के यह अर्थ हैं कि लोग मुसलमानी मत को स्वीकार कर लें तो फिर आप की सारी क्रिया इस के विरुद्ध है। हुदीबिया की संधि में, मक्के की विजय में और ताइफ़ का घेरा उठाने में आपने इसके विरुद्ध व्यवहार किया। अतः सत्य यह है कि आप इस आयत का अर्थ कुच्छ और समझते थे। झगड़े के न रहने से भाव यह था कि लोगों को मुसलमानी मत धारण कराने के कारण दुःख न दिया जावे। धर्म्म परमात्मा के लिये हो, के अर्थ यह थे, कि धर्म्म की स्वतन्त्रता हो, धर्म्म में प्रत्येक मनुष्य

का संबंध परमात्मा के साथ है, जो धर्म्म कोई चाहता है, रखे। यही कारण है कि जिस समय ही आप को यह सम्मति दी जाती है कि अब यह लोग मुसलमानों को दुःख नहीं पहुंचा सकते तो आप झट-पट घेरा उठा कर वापिस आ जाते हैं। फिर इस से भी बढ़ कर यह प्रबल साक्षी है कि उस सेना में जो हुनैन के स्थान पर युद्ध करती है, नबी करीम के साथ ग़ैर मुसलिम युद्ध करने वाले उपस्थित हैं। यदि तलवार के साथ ही मुसलमान करना है तो पहिले इनको क्यों न किया ? यह घटना खुली साक्षी इस बात की है कि हुनैन की लड़ाई भी जाति की रक्षा के लिये थी। आपने बेशक आक्रमण किया, किन्तु पहिल कर के नहीं, प्रत्युत उस समय, जब शत्रु की ओर से आक्रमण का भय उत्पन्न हो चुका था और जब यह एकत्रता छिन्न-भिन्न हो गई और वह लोग पीछे हट कर अपने नगर के भीतर चले गए और उन की ओर से कोई भय न रहा - तो आप ने झट युद्ध बन्द कर दिया। यदि देश की विजय का भी विचार होता तो ताइफ़ को जीतने के बिना वापिस न आते। अतः पता लगा

कि इस उपाय से इस्लाम फैलना तो एक ओर देशों को जीतना भी आप का अभिप्राय नहीं था।

दूध-बहिन का आदर—ताइफ़ से वापिस आकर आपने नियमानुसार लूट के माल का पांचवां भाग जातीय कोष के लिये अलग निकाल कर शेष सैनिकों में बांट दिया। बन्दियों में आप की दूध-बहिन शैमा भी थीं। इनको आप के सामने लाया गया। आपने जब इनको पहचाना तो झटपट अपनी चादर बिछा दी और बड़े आदर सन्मान के साथ उनको इस पर बैठाया। अधिकारों की कितनी तरफ़दारी आप के पवित्र हृदय में है! यह कोई सगी बहिन नहीं, परन्तु आप इतना आदर करते हैं कि संसार में सगी बहिनों का भी इतना आदर कोई नहीं करता। आप की इच्छा थी कि शैमा आपके साथ मदीने जाएँ, परन्तु इन्हों ने अपनी जाति में रहना उत्तम समझा और आपने उन को बड़े आदर सन्मान के साथ बहुत से उपहार देकर विदा किया।

पल भर में छः हज़ार बन्दियों को स्वतन्त्र कर देना—इसके अनन्तर "सक़ीफ़ जाति"

का एक डैपूटेशन, बन्दीजनों की स्वतन्त्रता के संबंध में आप की सेवा में उपस्थित हुआ और जाति के नेताओं ने अपने कष्टों को हज़रत साहिब के सामने वर्णन किया। यदि कोई सांसारिक सभ्य विजयी होता तो यह योग्य उत्तर देता कि अब तुम अपने कष्ट उपस्थित करते हो, हम इनको क्या करें। जब तुमने पहल करके हमें नष्ट करना चाहा था, उस समय इन कष्टों का फ़िकर क्यों न किया? यदि तुम जीत जाते तो तुम इससे भी बुरा व्यवहार हमारे साथ करते। क्या आज कल सभ्यता के सारे दावों के होते हुए अपने हारे हुए शत्रुओं को यही उत्तर नहीं दिया जाता? किन्तु नबी जी का पवित्र हृदय तो साक्षात् दया का स्वरूप था। जब इस क़बीले की ओर से हानि का कोई भय न रहा तो अब शत्रु शत्रु नहीं रहा। उसके लिये आप के हृदय में वही सहानुभूति है, जो प्रत्येक मनुष्य के लिये है। पवित्र हृदय का यदि एक शुभ गुण दूसरे से अधिक प्रकाशमान दृष्टिगोचर होता है तो वह मनुष्य की छोटी से छोटी पीड़ा पर प्रभावित हो जाना है। आपने आदेश किया "मैं अपने और अपने परिवार के हिस्से के बन्दीजनों को तो अभी छोड़ता

हूं, किन्तु अपने भाग पर प्रत्येक मुसलमान सैनिक स्वयं अधिकार रखता है, मैं उसके भाग को नहीं ले सकता।" कैसी अधिकारों की समता की शिक्षा है! जिन लोगों ने आप पर तन, मन, और धन न्योछावर कर दिया, उनके लिए आप की आज्ञा पर बन्दियों को छोड़ देना कौन सा कठिन कार्य्य था? परन्तु आपने तो अधिकारों की समता की शिक्षा देनी थी। राजा को प्रजा की सम्पत्ति पर कोई अधिकार प्राप्त नहीं। साथ ही दुःखी लोगों की सहानुभूति का जोश है। अतः उन से कहा कि आप लोग पेशी के समय की निमाज़ के वक़्त आओ जिस समय लोग मस्जिद में एकत्रित हों तो आकर सब बातें बतलाओ। मैं सिफ़ारिश करूंगा। अतः इसी प्रकार ही हुआ और पल भर में छः हज़ार बन्दि मुक्त हो गए। संसार के इतिहास में इस प्रकार का दृश्य भी कहीं नहीं मिलता। डैपूटेशन काफ़िर मूर्ति पूजकों का और उनकी प्रार्थना पर छः हज़ार बन्दि स्वतन्त्र कर दिये जाते हैं और ईसाई मत की पक्षपात की धुंदली ऐनक भी यहां कोई चित्र ऐसा नहीं दिखा सकती कि आपने इन छः हज़ार बन्दियों में से

किसी एक के लिए भी कलमा पढ़ने का प्रतिबन्ध लगाया हो। आश्चर्य्य होता है कि साक्षात् दया की मूर्ति को, जिसकी दया की उपमा संसार भर उपस्थित नहीं कर सकता, अत्याचारियों ने खूनी का रंग चढ़ा कर उपस्थित किया है, जिस के एक हाथ में तलवार है और दूसरे में कुरान। समझो जो कुरान को स्वीकार नहीं करता, उसका सिर काटा जाता है। हे परमात्मन्! तू इस असमंजस में डालने वाली जाति को सुमति प्रदान कर।

नबी जी का अनसार के साथ प्रेम—लूट का माल जब बांटा जा चुका तो जो भाग जातीय-कोष का था, इसमें से आपने कुरैश के कई सर्दारों और कई बद्दू सरदारों को दिल खोल कर पारितोषक दिया। अनसार में कुच्छ युवक थे, जिन्होंने बुड़बुड़ाना शुरू किया कि रसूल करीम ने अपनी जाति को इतने पारितोषक दिए हैं, हमें कुच्छ नहीं दिया। इससे एक अत्याचारी मनमानी बादशाह की भांति क्रोध में आकर उनके सिर कटवा देने या अन्य कोई दण्ड देने की व्यवस्था करते, किन्तु आपने दण्ड देने के स्थान पर अत्यन्त कृपा करते हुए अनसार

को बुलाया और कहा कि "मैंने सुना है कि तुम लोग कुच्छ गिला करते हो कि मैंने कई क़ुरैशी सरदारों की अकारण रियायत की है। वह लोग भी सत्य के प्रेमी थे।" उन्होंने बिनती की, "हां, हम में ऐसी बातें करनेवाले कुच्छ लोग हैं।" आपने आदेश किया, "क्या यह सत्य नहीं कि मैं तुम्हारे पास उस समय आया, जब तुम भूले हुए थे, अतः परमात्मा ने तुम को सीधे रास्ते पर डाला और तुम कंगाल थे, सृजनहार ने तुम्हें धनवान बनाया। और तुम एक दूसरे के शत्रु थे, परमेश्वर ने तुम्हारे हृदयों में प्रेम डाला।" अनसार ने बिनती की "हां! नबी करीम यह सब सत्य है।" आप ने कहा "हे अनसार! क्या तुम मुझे कुच्छ और उत्तर दे सकते हो?" उन्हों ने विनय की, "नबी करीम! हम क्या उत्तर दे सकते हैं?" आपने आदेश किया, "तुम चाहो तो इस प्रकार कह सकते हो और तुम सत्य पर होवोगे कि तुम हमारे पास इस दशा में आए कि जब आपकी जाति ने आपको झुठलाया था, हमने आपको सत्य करके जाना और आप इस दशा में आए कि कोई आपकी सहायता करने वाला

नहीं था, हमने तुम्हारी सहायता की और आप इकेले घर से निकाले गए थे, हमने तुम्हें आश्रय दिया । हे अनसार ! क्या तुम्हारे दिलों में इस बात से सन्देह उत्पन्न हुआ कि मैंने सांसारिक धन ऐश्वर्य्य का कुच्छ भाग दिल रखने के लिये दे दिया और तुम्हें तुम्हारे इस्लाम के हवाले किया । हे अनसार के जत्थे ! क्या तुम इस बात पर सन्तुष्ट नहीं कि लोग अपने घरों में बकरियां और ऊंट लेकर जाएँ और आप परमपिता के रसूल को साथ लेकर जाओ । मुझे सौगन्ध है, उस सर्वशक्तिमान की जिसके हाथ में मेरी जान है कि यदि लोग एक मार्ग पर चलें और अनसार किसी दूसरे मार्ग का अवलम्बन करें तो मैं उस मार्ग पर चलूंगा जिस पर अनसार चलें ।" इस व्याख्यान से जो सच्चे हृदय से निकला हुआ था और हज़रत साहिबके मन की अवस्था बताता था कि संसार के धन ऐश्वर्य्य की आप की दृष्टि में क्या क़दर है, सुनने वालों के दिलों पर ऐसा प्रभाव हुआ कि कोई नेत्र नहीं था जो अश्रुपूर्ण न हुआ होवे और कईयों की तो रोते रोते डाढ़ियां भीग गईं ।

२४—अरब देश में इस्लाम की चर्चा

——:***—*—***:——

" वही है जिस ने अपने रसूल को शिक्षा और सच्चा दीन देकर भेजा, ताकि इस दीन (मत) को अन्य मतों के जीतने वाला बनाए।"

(सूरत फ़ताह—२८)

ज़ीक़अ़द सन् आठ हिजरी में ताइफ़ से लौटते हुए और उमरा करते हुए इस वर्ष के अन्त में मदीने पहुंचे। मक्का "उम-अलक़रा" के नाम से प्रसिद्ध था और चाहे अ़रब की मुल्की रङ्ग में कोई राजधानी नहीं थी, क्योंकि क़बीले क़बीले, जाति जाति और प्रान्त प्रान्त में भिन्न २ राज्य था, परन्तु आत्मिक तौर पर इस का आदर सन्मान इतना था, कि हज्ज के दिनों में अ़रब की सब दिशाओं से लोग यहां खिंचे चले आते थे।

इसलिए उन लोगों की भी विशेष प्रतिष्ठा थी, जो मक्के पर राज्य करते हों।

अरब में चारों ओर इस्लाम धर्म्म का फैल जाना—अरब के लोग इस्लाम की शिक्षा के मोटे सिद्धान्तों से परिचित थे, परन्तु वह क़ुरैश की ओर देख रहे थे कि उनके विरोध का क्या अन्त होता है। प्रत्युत जब हज्ज के दिनों में नबी करीम किसी क़बीले के समक्ष इस्लाम उपस्थित करते तो आपको यह उत्तर दिया जाता कि जब स्वयं आपकी जाति आपको नहीं मानती तो हम क्यों मानें? अतः जब मक्के की विजय के अनन्तर मक्का निवासियों के समूह के समूह मुसलमान होने प्रारम्भ हो गए तो इस का प्रभाव सारे अरब पर अच्छा पड़ा। स्वयं भी उन्होंने इस विरोध में देख लिया कि किस प्रकार एक अकेला मनुष्य जिस को क़ुरैश पागल कहते थे, इनका कड़ा विरोध होते हुए सफल हो गया। इस वास्ते अब उनके मुसलमान होने में कोई रोक रुकावट शेष न रही और यही कारण है कि सन् नौ और दस हिजरी में अरब में चारों ओर इस्लाम फैल गया। इसका प्रारम्भ नौवें वर्ष के साथ ही होता है,

जब एक दूसरे के पीछे भिन्न भिन्न क़बीले और जातियां इस्लाम में प्रविष्ट होनी प्रारम्भ हो गईं।

ज़क़ात की उगराही—सन् ६ हिजरी के शुरू में नबी करीम ने उन जातियों से जिनका सम्बन्ध अब इस्लाम के साथ हो गया था, ज़कात के उगराहने (इकट्ठी करने) का प्रबन्ध किया और तदर्थ अपने राज कर्मचारी भिन्न भिन्न स्थानों पर भेजे। चाहे ज़कात एक धार्मिक आज्ञा थी, परन्तु इस्लामी जातीय कोष का बड़ा भाग होने के कारण इसका प्रबन्ध नियमानुसार किया गया और इसको केन्द्रीय राज्य सत्ता के आधीन रखा गया।

बनी तमीम का डैपूटेशन नबी जी के दर्बार में—आप के राज्य कर्म्मचारी एक जाति से ज़कात उगराहने के लिए गए। जब वह इन की भैड़ां आदि का एकत्रित कर रहे थे तो पास ही की एक जाति, बनी तमीम ने सन्नद्ध बद्ध होकर उन पर हल्ला बोल दिया और उनको वहां से भगा दिया। एक सर्दार उईना नामी ने झटपट इन पर जवाबी आक्रमण करके इनके पच्चास व्यक्ति बन्दी कर लिए। बनी तमीम चाहे अब तक मुसलमान नहीं हुए थे, किन्तु

अब इसके युद्ध में उन्होंने नबी करीम को सहायता दी थी। उन्होंने झटपट एक डैपूटेशन नबी जी के दर्बार में भेजा। यहां उन्होंने अपने प्रचारकों और कवियों को हज़रत साहिब के प्रचारकों और कवियों के मुक़ाबिले में उपस्थित किया, परन्तु दोनों की बढ़िया लियाक़त को मान गए। हज़रत साहिब के प्रचारक और कवि का विषय दीन इस्लामी मत और एकता के अतिरिक्त अन्य कुच्छ नहीं था। इसका प्रभाव उन के हृदयों पर हुआ और देर से मुसलमानों के हाल से परिचित होने के कारण अब उन्होंने ने निश्चय कर लिया कि इस्लाम धर्म्म ग्रहण कर लेमा चाहिए। और वही मुसलमान हो गए। वास्तव में न केवल वह लोग जिनका सम्बन्ध मुसलमानों के साथ था, इस्लामी धर्म से भली प्रकार परिचित हो गए थे, प्रत्युत इस्लाम की शिक्षा की प्रसिद्धि अब सब ओर फैल चुकी थी और कई वर्षों से हज्ज को आनेवाले लोग इस शिक्षा को अपनी जाति में वापिस ले जाते थे। केवल पुराना पक्षपात ही इस्लाम के विरुद्ध काम करता था, अतः जहां जहां से पक्षपात दूर होता जाता था, लोग अपने आप मुसलमान होते जाते थे।

इन दिनों में ही बनी तय्ये की ओर से शरारत के कुच्छ चिह्न प्रकट हुए तो आपने हज़रत अली को दो सौ अश्वारोहियों के साथ इनको सुधारने के लिये भेज दिया। कैदियों में हातमताई (जिसकी दान-प्रियता जगत् प्रसिद्ध है) की सुपुत्री भी थी जिसका नाम सफ़ाना था।

हातिमताई की पुत्री का आदर सत्कार—

जब नबी करीम को इसकी सूचना मिली तो आप ने इसको बुला कर आदर सन्मान के साथ विदा करना चाहा, परन्तु दानी पिता की पुत्री ने यह पसंद न किया कि नबी करीम की उदारता से केवल स्वयं ही लाभ उठावे। उसने कहा "जब तक मेरे साथकी स्त्रियाँ बन्दीगृह में हैं, मैं वापिस जाने की अपेक्षा उनके साथ क़ैद रहना अच्छा समझती हूँ। नबी करीम ने झट पट आज्ञा दी कि सब बन्दीजन स्वतन्त्र कर दिये जाएँ। इस का भाई अद्दी-बिन-हातम शाम देश की ओर भाग गया था। वह उसकी खोज में निकली। और जब उसको नबी करीम के समाचार और आप के उदार आचार की सूचना मिली तो वह झट पट नबी की सेवा में उपस्थित हुआ और

इस्लाम स्वीकार किया और जाति का नेता नियुक्त किया गया।

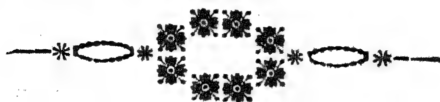
प्रसिद्ध कवि काअ़ब-बिन-ज़हीर का इस्लाम स्वीकार करना—इन दिनों में ही काअ़ब-बिन-ज़हीर ने, जोकि एक प्रसिद्ध कवि था और अब तक इस्लाम के विरोध में कविता लिखता रहा था, इस्लाम स्वीकार किया और प्रसिद्ध स्तोत्र "बुरदा" हज़रत की स्तुति में उच्चारण किया, जिसने काअ़ब के नाम को सर्वदा के लिए अमर कर दिया।

अब इस्लाम सारे अ़रब देश में सर्व-प्रिय हो चुका था और उस की अन्तिम सफलता की प्रसिद्धि अ़रब की सीमाओं तक पहुंच चुकी थी। दूर देश निवासी लोग इन घटनाओं से अनभिज्ञ नहीं थे, जो क़ुरैश और हज़रत साहिब के मध्य उपस्थित होती थीं। वह जानते थे कि किस प्रकार परमात्मा की एकता और सत्य धर्म्म की शिक्षा के कारण क़ुरैश ने आपका विरोध किया, किस प्रकार लोगों को आप की बात सुनने से रोका, किस प्रकार आपको और आप के साथियों को कष्ट दे दे कर निकाल दिया गया, किस प्रकार उनका सत्यानाश करने के

यत्न मदीने में आ जाने के बाद भी बराबर और निरन्तर आठ वर्ष तक जारी रहे। हज्ज के दिनों की एकत्रिता ने इन सब बातों को अरब की सीमाओं तक पहुंचा दिया था और उनको यह भी पता था कि रसूल करीम इस बात का दाअ्वा करते हैं कि आप के विरुद्ध जितनी शक्तियां हैं, परमात्मा इन सब को हार देवेगा और अन्तिम सफलता इस्लाम को प्रदान करेगा।

भिन्न भिन्न क़बीलों के डैपूटेशनों को इस्लाम की शिक्षा से जानकार करना—अब चारों ओर से भिन्न भिन्न जातियों और क़बीलों के डैपूटेशन नबी जी की सेवा में उपस्थित होना शुरू हुए। आप इन डैपूटेशनों का बड़ा आदर सन्मान करते और इनको नर्मी के साथ इस्लाम की शिक्षा से जानकार करते। इस पर जो लोग इस्लाम स्वीकार करते, आप उनके साथ क़ुरान शरीफ़ का एक पाठक भेज देते ताकि उनको धर्म की शिक्षा से भली प्रकार जानकार करे। इसी वर्ष के प्रथम आधे भाग में ऐसे २ दूर के इलाकों से, जैसा कि यमन, हज़र मौत, बाहरैन, अमान तथा शाम और ईरान की सीमाओं से आप

की सेवा में डैपूटेशन आए, जिन का वर्णन आगे जाकर होवेगा। और इस्लाम अरब में चारों ओर फैलने लगा। इस्लामी इतिहास से अनजान लोग सत्य से कितनी दूर चले गए जब उन्होंने यह बिचार किया कि इस्लाम युद्धों तथा लड़ाइयों द्वारा फैला। युद्ध का समय वह था, जब इस्लाम की उन्नति रुकी रही। ज्यूं ही देश में शांति हुई इस्लामी मत इस प्रकार चारों ओर फैलना शुरू हुआ कि ऐसा प्रतीत होता था कि कोई उच्च शक्ति लोगों के हृदयों को इस्लाम के समक्ष नतमस्तक करती चली जा रही है। कोई सेना, उन स्थानों पर नहीं भेजी गई, जहां इस्लाम धारण करने के लिये स्वयमेव डैपूटेशन नबी करीम की सेवा में उपस्थित हो रहे थे और यह एक ऐसा सत्य है, जिस पर आज तक एक भारी पर्दा डालने का प्रयत्न किया गया है। धार्मिक स्वतन्त्रता और शांति का समय यह दो वस्तुएँ ही सर्वदा इस्लाम के फैलने में सहायक सिद्ध हुई हैं और आगे के लिए भी होंगी।



२५—तब्बूक का युद्ध



" यदि लाभ जल्दी पहुंचने वाला होता और मार्ग कम होता, तो अवश्यमेव तेरे पीछे चल पड़ते, परन्तु मेहनत की यात्रा उनको बड़ी दूर की प्रतीत हुई ।"

(सूरत तौबा—४२)

रोम के राज्य को जीतने की भविष्य-वाणी—जब इस प्रकार अरब देश में चारों ओर इस्लाम का शोर मचा तो सब से पहिले निकटवर्ती इसाई राज्य को चिन्ता हुई और उसने इस्लाम की इस उन्नति को ईर्ष्या की दृष्टि से देखा। चाहे इस्लाम की सहानुभूति मूर्ति-पूजकों और अग्नि-पूजकों के विरुद्ध किताब (पुस्तक अञ्जील आदि) वालों अर्थात् यहूदियों और ईसाइयों के साथ थी, जैसा कि उस समय जब कि ईरानी सेनाएँ, रोम राज्य के सारे एशिया स्थित उपनिवेशों और मिस्र देश को विजित करके कुस्तुनतुनिया के द्वार

खटखटा रही थीं और रोमा के राज्य के नष्ट होने में कोई सन्देह शेष नहीं रह गया था, नबी करीम पर क़ुरान की वह आयतें उतरी थीं, जिनमें आप ने नौ वर्ष के भीतर २ रूमी राज्य के ईरान देश को विजित करने की भविष्य-बाणी की थी। "रूमी, समीप की भूमि में हार गए और वह अपनी हार के पीछे फिर जीतेंगे, नौ वर्ष के भीतर २।"* और इसके साथ ही दूसरी भविष्य बाणी यह सुनाई गई कि× "उस दिन परमात्मा की सहायता से मोमन भी प्रसन्न होवेंगे" अतः जिस वर्ष बदर में मुसलमानों को विजय प्राप्त हुई, उसी वर्ष रोमा के राज्य ने अपने विजय किए प्रदेश वापिस लेते हुए ईरान में प्रवेश किया। अतः मुसलमान तो रोमा की राज्य की सफलता पर प्रसन्न होते थे, परन्तु रोमा राज्य को इस्लाम की सफलता अच्छी न लगी। एक बार पहिले भी मूताह के स्थान पर मुठभेड़ हो चुकी थी।

ईसाईयों की तय्यारी की खबरें—अब जिस समय यह समाचार शाम देश में पहुंचे कि सारेका सारा अरब इस्लाम के आगे नत-मस्तक होता जाती

---

*सूरम रूम १—२। ×सूरत रूम ४—५।

है तो सलीब की पूजा करने वालों ने यह विचार किया कि हम तलवार के बल से अ़रब को अपने धर्म्म में ले आएँगे और कम से कम इस्लाम की उन्नति को रोक देंगे। अतः अ़रब में लगातार ख़बरें पहुंचने से यह प्रसिद्ध हो गया कि क़ैसर ने एक बहुत बड़ी सेना इस्लाम की जड़ें काटने के लिए एकत्रित की है और अ़रा के वह सब क़बीले, जो ईसाई मत धारण कर चुके थे, इस चढ़ाई में सम्मिलित हैं। विशेषतया ग़सानियों की ओर से हर समय अ़रब में डर लगा रहता था। नबी करीम ने इन समाचारों के आधार पर शाम देश की सीमा की ओर अपनी सेनाओं को तय्यारी की आज्ञा दी। क़ुरान शरीफ़ का आदेश था कि अपनी सीमाओं को दृढ़ रक्खो, क्योंकि यदि सीमाओं पर निर्बलता हो तो देश बच नहीं सकता। जिस प्रकार परमात्मा ने नबी करीम को उच्च कोटि का संयम प्रदान किया था कि आप अपनी जाति की रक्षा शैतान के सब सम्भव आक्रमणों से भी करते थे, इसी प्रकार देशीय रङ्ग में आप को वह उच्च कोटि की सावधानी प्रदान की थी कि जिस से जाति को शत्रु से

बचाया जा सकता था । आप छोटे २ भयानक अवसरों पर भी सब शैतानी चालों को मलियामेट करने के लिए तय्यार रहते थे । इस वास्ते की क़ैसर की तय्यारी की इन लगातार ख़बरों को आप सरसरी दृष्टि से नहीं देख सकते थे । यदि एक बार भी अ़रब में इनका क़दम आ जाता तो फिर इन लोगों के हौसले बढ़ जाते और मुसलमानों को अत्यन्त भयानक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता ।

तब्बूक पर चढ़ाई की कठिनाइयां—आप ने अ़रब के समस्त क़बीलों को इस आक्रमण में सम्मिलित होने के लिए बुलाया, क्योंकि यह भय केवल मदीने या केवल मुसलमानों के लिए ही नहीं था, प्रत्युत सारे अ़रबके लिए था । किंतु बहुत सी रुकावटें भी थीं—यात्रा बड़ी लम्बी थी, तीव्र ग्रीष्म ऋतु थी, इधर फ़सल बिल्कुल पकी हुई और काटने के लिए तय्यार खड़ी थी । सबसे बढ़कर यह कि क़ैसर रोम की नियमित सुशिक्षित और जत्थेबन्द सेनाओं से टक्कर । बहानाबाज़ तो तभी भान्ति २ के बहाने बना कर रह गए । आप का स्वभाव था कि यदि आप के सामने ननुनच किया जाता तो आप इन्कार नहीं करते थे ।

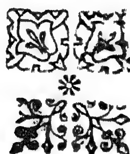
इससे भिन्न दूर की यात्रा में सवारी के प्रबन्ध के सिवाय कोई चारा नहीं था और बहुत से लोग दरिद्रता के कारण सवारी प्राप्त नहीं कर सकते थे। वह रोते थे कि हमें सम्मिलित होने का अवसर नहीं मिला। परन्तु नबी करीम ने कहा, "सवारी नहीं, मैं क्या कर सकता हूं ?" हज़रत उस्मान ने एक हज़ार ऊँट और दस हज़ार दीनार इस लड़ाई की तय्यारी के लिए दिए। बात क्या तीस हज़ार सेना तय्यार हुई और रज्जब सन् ६ हिजरी में मदीने से शाम की ओर कूच किया। सुहाबा को हज़रत साहिब के साथ किस प्रकार का प्रेम था ? यह कई घटनाओं से प्रकट होता है। एक सुहाबी अपने बाग़ में ठण्डी छाया में दोपहर के समय विश्राम कर रहे थे। प्रत्येक प्रकार के सुख प्राप्त थे। एक दम हृदय में एक उबाल उठा और आप ने उच्च स्वर से कहा, "हज़रत साहिब तो इस गर्मी में यात्रा कर रहे हों और मैं यहां बैठा छाया में विश्राम करूं !" झटपट सवारी का प्रबन्ध किया और साथ जा मिले। बात क्या सत्य के प्रेमी इस परीक्षा में पूरे उतरे और किसी भी कष्ट की पर्वाह न करके साथ हो चले। मार्ग में हजर

का स्थान था, जहां कि समूह जाति पर ईश्वरीय प्रकोप हुआ था। आप ने कहा, "यहां से जल्दी गुज़र चलो।" यह जाति को शिक्षा थी कि आततायियों के साथ किसी प्रकारका सम्बन्ध न रक्खें।

बिना लड़ाई के वापिस आना—मदीने और दमश्क के मध्य मदीने से चौदह पड़ाव के अन्तर पर तब्बूक का स्थान है। यहां पहुंच कर आपने डेरे डाल दिए और शत्रु की इच्छा की पड़ताल की। ऐसा प्रतीत होता है कि इस समय में आप का सुप्रबन्ध और शक्ति शाली सेनाओं को देख कर और उस घटना को स्मरण करके जब मूताह के स्थान पर तीन हज़ार मुसलमानों ने लगभग एक लाख सेना का मुक़ाबिला किया था, ग़स्सान लख़म, जुज़ाम आदि क़बीलों के उत्साह भंग हो चुके थे, और क़ैसर ने इस बे-दिली की दशा में कोई अन्तिम निश्चय नहीं किया था। संक्षेप यह कि आप ने देखा कि सीमावर्ती प्रदेश नितान्त शान्त-अवस्था में हैं। यदि आप का प्रयोजन यह होता कि तलवार के बल से लोगों को मुसलमान बनाया जावे तो

इससे बढ़कर अच्छा अवसर और कौनसा हो सकता था। तीस हज़ार मनुष्य, प्रत्येक प्रकारके शस्त्रास्त्रोंसे सुसज्जित और मरने मारने को तय्यार आप के साथ थे। जिधर मुख करते तलवार के बल से मुसलमान करते जाते। परन्तु सारी चढ़ाई में एक इकेले मनुष्य का भी इस प्रकार मुसलमान करना सिद्ध नहीं होता। यदि आपको देशों के जीतने का शौक़ होता तो प्रकट है कि इतने कष्ट सहन करके, तीस हज़ार सेना को साथ लेकर शाम की सीमा पर पहुंच चुके थे और आगे शत्रु टक्कर लेने के लिए तय्यार नहीं था, झटपट आक्रमण करके शाम देश में प्रविष्ट हो जाते और शत्रु के तय्यारी करने से पहिले ही बहुत सा देश ले लेते। यही लोग थे, जिन्हों ने पीछे बड़ी बड़ी बलवती रूमी सेनाओं को परास्त किया था। परन्तु देश जीतने की इच्छा आपके हृदय के किसी कोने में भी नहीं थी। इतना व्यय करने और कष्ट झेलने के पीछे जब देखा कि शत्रु ने पहिल नहीं की तो आपने भी क़ुरान शरीफ़ की इस आज्ञा का पालन किया कि "ईश्वर के मार्ग में उन लोगों के साथ युद्ध करो, जो तुम्हारे साथ युद्ध करते हैं और

अधिकता न करो।" बीस दिन आप ने तब्बूक के स्थान पर निवास किया और फिर वहां से वापिस लौट आए। हां, इस समय में कई छोटे मोटे ईसाई राज्यों के साथ आप की सन्धियां हो गईं, जिस से सीमा प्रदेश पर शान्ति का अधिक विश्वास हो गया।



२६—चालाक विरोधी और उनका अन्त

—— *—***—* ——

"यदि हम आप में से एक जत्थे को क्षमा करेंगे तो एक टोले को कष्ट भी देंगे, क्योंकि वह अपराधी हैं।"

(सूरत तोबा ६६)

चालाक विरोधी और अब्दुला-बिन-उब्बी—जब हज़रत साहिब ने मक्के से मदीने को हिजरत की तो थोड़ी सी स्वतन्त्रता के साथ दस गुणा विरोध से भी टक्कर लेना पड़ी। क़ुरैश की शत्रुता, पहिले तो मुसलमानों को दुःख देने तक ही थी, अब वह इनका चिह्न तक मिटाने पर उतारू हो गए। अ़रब के क़बीले अब तक इस्लाम को भयानक कठिनाइयों में फंसा हुआ देख कर चुप थे। इस्लाम की उन्नति ने अब उन्हें भी उठा दिया। यहूदी दूर बैठे चुप थे, अब घर में इस्लाम की उन्नति ने

इन की ईर्ष्यारूप अग्नि को भड़का दिया । ईसाई भी इस्लाम की सफलता को देख कर अब विरोध करने लगे । परन्तु एक निराले ढंग की शत्रुता उन लोगों की ओर से प्रारम्भ हुई, जिन को इस्लामी कोष के अनुसार 'मुनाफ़क़' (चालाक विरोधी) कहा जाता है । यह वह लोग हैं जिन में इतनी दलेरी नहीं थी कि खुल्लमखुल्ला इस्लाम का मुक़ाबिला करें । उन्होंने प्रकटतया तो इस्लाम धारण कर लिया, परन्तु भीतर से कुफ़र पर स्थित रहे । और न केवल यही, अपितु इस रंग में उन्होंने इस्लाम को सख़्त हानि पहुंचाने का यत्न किया । इनका नेता एक पुरुष अब्दुल्ला-बिन-उब्बी था । नबी करीम के मदीने में पधारने से पहिले अब्दुल्ला-बिन-उब्बीका प्रभाव और आतंक इतना बढ़ा हुआ था कि लोग इसको अपना बादशाह बनाने पर प्रस्तुत थे । परन्तु हज़रत साहिब की हिजरत के साथ ही यह चित्र उलट-पलट गया और अब्दुल्ला-बिन-उब्बी बिल्कुल एक साधारण पुरुष की भांति रह गया । आरम्भ में इसने कुच्छ विरोध भी किया, परन्तु यह देख कर कि इस्लाम उन्नति प्राप्त करता जाता है, इसने भी प्रकटतया इस्लाम ग्रहण कर

लिया और उस समय से लेकर सन् ६ हिजरी अर्थात् अपने शरीरांत तक प्रत्येक सम्भव प्रयत्न से इस्लाम को हानि पहुंचाने का प्रयत्न करता रहा। बाहिर के शत्रुओं से तो बचाव कर लिया जाता है, परन्तु इस प्रकार के भीतरी शत्रु बहुत भयानक होते हैं। समझो यह धार्मिक उत्पाती हैं जो हर समय नाश की चिन्ता में लगे रहते हैं। भीतर रहने के कारण सब हालों से भी जानकार रहते हैं और बाहिर के शत्रु से भी षड्यन्त्र रचते रहते हैं। परमात्मा ने प्रारम्भ में ही हर प्रकार के शत्रुओं को जो सम्भव हो सकते हैं, इस्लाम के विरोध का अवसर देकर यह बतला दिया कि जिस पौदे को वह हरा-भरा करना चाहता है, उस को कोई नष्ट नहीं कर सकता।

इस्लाम के विरुद्ध बैरियों का खुली शत्रुता दिखाना—अब्दुल्ला-बिन-उब्बी की शत्रुता ने उहद के अवसर पर अधिक खुला और साफ ढंग धारण किया। इसने जब देखा कि क़ुरैश तीन हज़ार जवानों के साथ मुसलमानों का समूल नाश करने के लिए उतारू होकर आए हैं तो उस ने अपने

तीन सौ आदमी अलग कर लिए और मदीने वापिस चला आया। इस का विचार था कि इस प्रकार से मुसलमान और भी निर्बल हो जाएँगे और काफ़िर इस बार इनका अन्त कर देंगे। बनी नज़ीर ने जब शरारत की तो उस समय भी अब्दुल्ला-बिन-उबी ने उनको सहायता देने का वचन दिया था, चाहे उसने यह वचन पूरा नहीं किया था। अहिज़ाब के आक्रमण में जब चौबीस हज़ार शत्रु मदीने को घेरे बैठे थे और मुसलमान बड़ी भयानक स्थिति में थे, तो यह लोग यह कह कर अपने घरों को चले गए कि हमारे घर खतरे में हैं, कहीं ऐसा न हो कि शत्रु इन पर आक्रमण कर दे। यह नितांत झूटा बहाना था। बनी-मुसतलक के आक्रमण के समय फिर अबदुल्ला ने प्रकट शत्रुता दिखाई और अनसार तथा हिजरतियों में फूट डलवाने का प्रयत्न किया, किन्तु सफल न हुआ। इस चढ़ाई से लौटने पर हज़रत आइशा सदीक़ा पर जो दोषारोपण किया गया, इसका वास्तविक दोषी यही अब्दुल्ला और इसकी टोली थी, तथा कई मुसलमान भी इनकी बातों में आ गए। कहीं किसी प्रकार की भी गड़बड़

पड़ती तो यह लोग इस प्रतीक्षा में रहते कि मुसलमान नष्ट हो जाएँगे। हर समय इस बात के लिए कटिबद्ध रहते कि बाहिर से कोई शत्रु थोड़ी सी भी सफलता प्राप्त करे, तो भीतर से यह उठ खड़े हों। तब्बूक के हमले में यह कह कर रुक गए कि गर्मी बड़ी सख़्त है, और वास्तविक इच्छा उनकी यह थी कि सारे मुसलमान चले जाएँगे तो पीछे शरारत का अवसर मिलेगा। परन्तु उनके सारे प्रयत्न पूर्णतया असफल सिद्ध हुए। इससे भिन्न यह लोग इस्लाम और मुसलमान के साथ ठट्ठा मखौल करते और इस्लाम के विरुद्ध गुप्त मन्त्रणाएँ भी करते रहते, जिनका वर्णन क़ुरान शरीफ़ में है। नबी करीम ही एक ऐसे व्यक्ति हैं, जिन्होंने इस वाक्य पर स्वयं चल कर बताया है कि अपने शत्रुओं के साथ भी प्रेम करो। इस प्रकार के भयानक शत्रुओं के साथ भी बड़ी नम्रता का बर्ताव करते रहे। और सदा क्षमा और बात आई गई करके ही काम लेते रहे और कभी भी इन की शरारतों का दण्ड नहीं दिया। जब अब्दुल्ला-बिन-उब्बी ने हिजरतियों और अनसारियों में फूट डलवाने का यत्न किया तो हज़रत उमर

ने विनती की कि क्यों न ऐसे शरारती को मरवा दिया जावे ? तो हज़रत साहिब ने कहा, "मैं नहीं चाहता कि लोग कहें कि हज़रत मुहम्मद साहिब अपने सुहाबा को मरवाते हैं।" हां ! जब चालाक विरोधियों ने अबु-आमिर की मन्त्रणा से मदीने में एक मस्जिद बनवाई, जहां इनकी इच्छा एकत्रित होकर मुसलमानों के विरुद्ध षड्यन्त्र रचना था तो ईश्वर आज्ञा से आप ने इस मस्जिद को जलवा दिया। यह मस्जिद आप के तब्बूक को प्रस्थान करने से पूर्व बनाई गई थी और आप के आगे प्रार्थना की गई कि आप पहिले जाकर इस में एक निमाज़ पढ़ा दें। आप ने कहा, "तब्बूक से वापिस आकर देखा जाएगा।" इस के पीछे आप को आकाशवाणी से पता लग गया कि यह मस्जिद नहीं, अपितु केवल इस्लाम को नष्ट करने के लिए षड़यन्त्र रचने की एक जगह बनाई गई है। इस वास्ते आपने तब्बूक से वापिस आते ही उस को जलाने की आज्ञा दी।

अब्दुल्ला-बिन-उब्बी जैसे शत्रु पर दया करना—तब्बूक की चढ़ाई से लगभग दो महीने पीछे अब्दुल्ला-बिन-उब्बी चल बसा। मुसलमान इसको गुप्त

विरोधियों का बड़ा नेता जानते और कहते थे। और इसके भीतर ही भीतर इस्लाम का बड़ा भयानक शत्रु होने में किसी को संदेह नहीं था। परन्तु प्रकटतया वह कलमा शहादत का मानने वाला था और अपने आप को मुसलमान कहता था। इसका सुपुत्र (इनका नाम भी अब्दुल्ला था और वह सच्चे हृदय से मुसलमान थे) हज़रत साहिब की सेवा में उपस्थित हुआ और अपने पिता की ओर से दो प्रार्थनाएँ कीं। पहिली यह कि आप अपना कुर्ता प्रदान करें, जिसका उस को क़फ़न डाला जाए और दूसरी यह कि आप उसके जनाज़े की निमाज़ पढ़ें। ऐसा शत्रु और व्यवहार ऐसा चाहता है जैसा कि सारे सज्जनों को भी नहीं मिलता। परन्तु क्योंकि वह प्रकटतया मुसलमान था, इस लिए हज़रत साहिब ने दोनों प्रार्थनाएँ स्वीकार कर लीं और अपना कुर्ता दे दिया। जब आप जनाज़े के लिए चलने को तय्यार हुए तो हज़रत उमर ने आपका पल्ला पकड़ लिया कि इस्लाम के एक शत्रु का जनाज़ा पढ़ने के लिये आप जाते हैं। परन्तु जगत् दयालु का हृदय तो शत्रु के लिये भी प्रेम पूर्ण था।

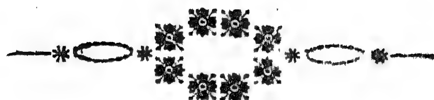
आपने उत्तर दिया, "हां ! हम जनाज़ा पढ़ेंगे ।" हज़रत उमर ने बिनती की कि परमपिता का वचन है " कि यदि तुम सत्तर बार भी इनके पापों के लिए क्षमा की भिक्षा मांगोगे तो भी परमात्मा इनको क्षमा नहीं करेगा ।" आप ने कहा, " मैं सत्तर बार से अधिक उनके पापों की क्षमा की इच्छा करूंगा ।" मक्का वासियों के साथ वह व्यवहार, सब से बड़े अन्दरूनी शत्रु के साथ यह बर्ताव ! क्या हृदय की यह विशालता संसार के किसी अन्य मनुष्य में दृष्टि-गोचर होती है ? संसार में एकही पुरुष है, जो घटनाओं के प्रकाश में जगत् दयालु कहलाने का अधिकारी है। इसके मन में सज्जनों के लिए ही नहीं अपितु शत्रुओं के लिए भी दया भरी पड़ी है।

चालाक विरोधियों का अन्तिम निर्णय–

अब्दुल्ला-बिन-उब्बी की मृत्यु के साथ ही गुप्त विरोधियों की शक्ति घट गई। इस्लाम की सत्यता के जितने छोर दिन प्रति दिन अधिक स्पष्ट होते जाते थे, इस्लाम के साथ उतना ही प्रेम गुप्त विरोधियों के हृदयों में पैदा होता जाता था । अब तक उन्होंने अन्दर ही अन्दर प्रत्येक प्रकार का यत्न करके देख लिया था,

कि यह इस्लाम का कुच्छ नहीं बिगाड़ सके। अतः अब जब कि उनका सरदार असमर्थ हो गया तो इनके हृदय बोल पड़े कि इस्लाम सच्चा है। इनमें से बहुत से लोग सच्चे हृदय से मुसलमान हो गए। हां! थाड़े से कठोर हृदय शेष रह गए, जिन को अन्त में परमात्मा की आज्ञा से नबी करीम ने नाम ले लेकर मस्जिद से निकाल दिया कि अमुक अमुक विरोधी हैं, यहां से निकल जाएँ। इन लोगों का वध नहीं किया गया, नगर से नहीं निकाला गया, केवल मुसलमानों को इन की शरारतों से खुले तौर पर जानकार कर दिया गया। हां! इनसे ज़कात नहीं ली जाती थी और यही एक दण्ड था जो उनको दिया गया। एक ओर इस आज्ञा को रखो कि "हे नबी! काफ़िरों और विरोधियों के साथ जहाद करो।" और दूसरी ओर हज़रत साहिब की इस क्रिया को रखो तो जहाद के अर्थों पर अपने आप प्रकाश पड़ता है। इस प्रकार हज़रत साहिब के जीवन में ही गुप्त विरोधियों का अन्तिम निर्णय हो गया और इस्लाम अन्दर के तथा बाहिर के दोनों प्रकार के शत्रुओं की चालों से शुद्ध हो गया।

बाहिर के वैरियों को तो बल और शक्ति के साथ साफ़ किया जा सकता है, परन्तु अन्दर के शत्रुओं से किसी आन्दोलन शुद्ध कर देना मनुष्य की सामर्थ्य से परे है, और इससे भी बढ़ कर यह कि एक देश के देश को न केवल शत्रुओं से ही साफ़ कर दिया, प्रत्युत इन्हीं शत्रुओं को जीवन न्योछावर करने वाले मित्र बना लिया। यह मनुष्य की शक्ति का काम नहीं। कहां यह बात कि एक मनुष्य इस असम्भव काम को पूर्ण कर सके!



२७—डैपूटेशनों का वर्ष

——:***—*—***:——

"जब परमेश्वर की सहायता पर विजय प्राप्त हो गई और तूने लोगों को ईश्वर के धर्म्म में जत्थों के जत्थे सम्मिलित होते देख लिया और अपने ईश्वर की स्तुति के साथ भक्ति कर, और उस से रक्षा मांग ! वह बड़ी दया करने वाला है।"

(सूरत नसर)

उरवा का मुसलमान होना और ताइफ़ के लोगों की शरारत—हिजरत के नौवें वर्ष का अन्तिम भाग और दसवां वर्ष भिन्न भिन्न जातियों और क़बीलों के डैपूटेशनों के मदीने में आने का वर्ष है। नौवें वर्ष के अन्त में ही ताइफ़ के निवासियों का एक डैपूटेशन हज़रत साहिब की सेवा में आया। यह हम देख चुके हैं कि मक्के की विजय के पीछे जब हवाज़िन के साथ युद्ध छिड़ा तो सक़ीफ़ जाति के शेष लोगोंको ताइफ़ में घेर बैठने से नबी

करीम को उनका घेरा डालना पड़ा । परन्तु जब आप को निश्चय हो गया कि इन लोगों से अब मुसलमानों को कष्ट पहुंचने का कोई भय नहीं रहा तो आपने घेरा उठा लिया। इस घेरे के समय उरवा, जो उनके सर्दारों में से एक थे, उपस्थित नहीं थे और यमन में युद्ध विद्या की कुच्छ बातें सीखने के लिए गए हुए थे। वापिसी पर उन्होंने सीधा मदीने की ओर मुख किया। इस्लाम के गुणों से वह जानकार थे और आप भी हुदैबिया में हज़रत साहिब के दर्शन कर चुके थे और प्रारम्भ से ही इन पर इस्लाम का अच्छा प्रभाव था । इस लिए अब वह सीधे मदीने आए और मुसलमान हो गए । मुसलमान होते ही इन की सब से प्रथम और प्रबल इच्छा यह हुई कि अपनी जाति को भी इस्लाम की बरक़तों से लाभ पहुंचाएँ । हज़रत साहिब ने इनको रोका , क्योंकि आप जानते थे कि ताइफ़ के लोग बड़े सख़्त हैं , परन्तु इनको अपने सर्वप्रिय होने पर भरोसा था। विनती करने लगे कि मैं, उन में उनकी कुमारी कन्याओं से भी अधिक प्रिय हूं । अतः ताइफ़ पहुंचते ही उन्हों ने

सब लोगों को एकत्रित करके इस्लाम का निमन्त्रण दिया। प्रातःकाल होते ही उन्हों ने बांग दी, जिस पर शरारती फ़सादियों ने उनके घर का घेरा डाल कर उन पर तीर बरसाए और आप शहीद हो गए।

ताइफ़ के लोगों का डैपूटेशन—इस के साथ ताइफ़ के वासियों का विरोध और भी बढ़ गया और हवाज़िन के साथ इनका युद्ध प्रारम्भ हो गया, जो उस समय तक मुसलमान हो चुके थे। अन्त में उन्हों ने देखा कि चारों ओर मुसलमान ही मुसलमान हैं। इस लिए उन्हों ने परामर्श किया और इस परिणाम पर पहुंचे कि अब इस्लाम के विरोध का कोई लाभ नहीं है और हम इसका कुच्छ नहीं बिगाड़ सकते और एक डैपूटेशन, जिसमें ६ सर्दार और कोई २० के लगभग अन्य व्यक्ति थे, हज़रत साहिब की सेवा में भेजा। आपने उन से उरवा के वध के सम्बन्ध में भी पूछताछ नहीं की। उन्होंने इस्लाम ग्रहण करने की इच्छा प्रकट की परन्तु कहा कि मूढ़ पुरुष और स्त्रियां लात (मूर्ति) के नाश होने पर संतुष्ट नहीं होंगे, इसको तीन वर्ष के लिए इसी प्रकार छोड़ दिया जावे। आपने यह बात

स्वीकार न की। अन्त में उन्होंने एक मास का अवकाश मांगा। परन्तु इस्लाम और मूर्तिपूजा एक स्थान पर इकट्ठे हो ही नहीं सकते थे। अन्त में हज़रत साहिब ने मुग़ीरा को भेजा कि वह जाकर अपने हाथ से उस मूर्ति को तोड़ दें, क्योंकि यह लोग डरते थे कि हमारे तोड़ने से कुच्छ हानि होगी।

यमन, महिरा, उमान, बहिरैन, और यमामा के डैपूटेशन—इसी वर्ष बनी तमीम का डैपूटेशन नबी करीम की सेवा में उपस्थित हुआ, जिस का वर्णन पहिले हो चुका है। नौवें वर्ष के समाप्त होने से पहिले ही अरब देश के दक्षिण और पूर्व की ओर इस्लाम की चर्चा चल चुकी थी। यमन, महिरा, उमान, बहिरैन और यमामां के बहुत से सर्दारों ने पत्र व्यवहार द्वारा या डैपूटेशन भेजकर इस्लाम स्वीकार कर लिया। क्योंकि अरबी लोग सदा से स्वतन्त्रता और स्वराज्य के आदी चले आते थे, अतः एक क़बीला दूसरे क़बीले को किसी भी रंग में कर देना अपना अपमान समझता था। इस लिए ज़कात की वसूली इन में से कईयों के इस्लाम ग्रहण करने में रोक हो गई। वह इस्लाम

को पसन्द करते थे, परन्तु यह पसन्द नहीं करते थे कि कर के रूप में कुच्छ दें। महिरा और यमन के ईसाईयों ने भी इस वर्ष के अन्तमें इस्लाम धारण कर लिया। आपने मुनज़र बहिरैन के सर्दार के पास भी एक प्रचारक भेजा और मुनज़र ने झट इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया।

मसिलमा कज़ाब—इसके साथ ही बनी हनीफ़ा ने, जो ईसाई थे और यमामा की अन्य जातियों ने एक डैपूटेशन हज़रत साहिब की सेवा में भेजा। इसी डैपूटेशन में मसिलमा भी था, जो पीछे कज़ाब के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस ने विचार किया कि हज़रत साहिब इस प्रकार बैठे २ मुंह से बातें कर के पैग़म्बर बन गए हैं और इसी प्रकार मैं भी बन सकता हूं। परिणाम यह हुआ कि हज़रत अबु-बकर के समय में मारा गया और उसके साथी छिन्न भिन्न हो गए।

बनी तग़लब और नज़रान के ईसाइयों के डैपूटेशन—सोलह व्यक्तियों का एक डैपूटेशन बनी तग़लब से भी आया, जो ईसाई थे। इनमें से कई लोग मुसलमान हो चुके थे। आप ने आज्ञा दे

दी कि जो ईसाई हैं वह अपने धर्म्म पर ही स्थित रहें। परन्तु ईसाई जातियों में से सब से अधिक प्रसिद्ध नज़रान के ईसाइयों का डैपूटेशन है, जिस में लगभग सतत्तर व्यक्ति थे। उनके सर्दार अब्दुल मसीह और अब्दुल हारस थे, जो बनी किन्दा और बनी हारस में से थे। यह लोग रोमन कैथोलिक ईसाई थे। हज़रत साहिब समस्त डैपूटेशनों को बड़े आदर सत्कार के साथ सुहाबा के घरों में उतारते थे, किन्तु इस डेपूटेशन को नबी जी की मस्जिद में निवास दिया गया। अपितु इनको वहां ही पूजा करने की आज्ञा भी दी। आपने इन लोगों को इस्लाम में निमन्त्रण दिया, किन्तु उन्होंने तर्क वितर्क करना चाहा। अतः वह भी हुआ। अंत में जब उन्होंने खुली २ युक्तियों को न माना तो हज़रत साहिब ने परमात्मा की आज्ञा-नुसार "मुबाहले" के लिए बुलाया और स्वयं भी मैदान में निकल आए। परन्तु इनके सर्दार अब्दुल मसीह और अब्दुल हारस "मुबाहले" से डर गए। वह नबी करीम की सत्यता का पता कर चुके थे, परन्तु अपने धर्म्म को छोड़ना पसन्द नहीं करते थे। अन्त में प्रतिज्ञा पत्र लिख कर वापिस लौट गए।

बजीला का डैपूटेशन—दसवें वर्ष यमन के कई अन्य क़बीलों के डैपूटेशन नबी जी की सेवा में उपस्थित हुए। इनमें बजीला का एक डैपूटेशन था, जिन का प्रसिद्ध मन्दिर ज़ूअ़ल ख़लसा था, और यह मन्दिर यमन का काअ़बा कहलाता था। उसकी मूर्ति ख़लसा भी तोड़ी गई।

वाइल और अशअ़स—हज़रत मूत से जाति के दो सर्दार वाइल और अशअ़स एक जत्थे के साथ उपस्थित हुए। इन्होंने रेशमी कपड़े पहने हुए थे। आपने इनसे पूछा कि "क्या आप इस्लाम स्वीकार करोगे" उन्होंने उत्तर दिया कि हम इसी प्रयोजन से आए हैं। आप ने कहा, फिर यह रेशमी वस्त्र उतार दो। अतः वह कपड़े झटपट उतार दिए गए और वह मुसलमान हुए। नबी करीम केवल कुच्छ सिद्धान्तों की शिक्षा देना ही पर्याप्त नहीं समझते थे, अपितु इनके आचार, व्यवहार और आचरणमें एक नवीन रङ्ग उत्पन्न कर देते थे और सब पुरानी बातों को मिटा कर सब को एक मत, एक नियम और एक जैसे आचार, व्यवहार पर एकत्रित कर देते और उनमें जीवन का एक जैसा रंग पैदा कर देते तथा सब

पुरानी आदतों को एक दम छुड़ा देते।

आमर-बिन-तफ़ैल—इसी प्रकार क़बीले क़बीले और जाति जाति का डैपूटेशन आता और इस्लाम में प्रविष्ट होने की इच्छा करता और अपनी जाति की शिक्षा और ज़कात की वसूली के लिए हज़रत साहिब से शिक्षक तथा उगाहने वाले मांगता। इन सब का व्योरा देना आवश्यक नहीं। हां! आमिर-बिन-तफ़ैल की कथा बतलाती है कि किस प्रकार अब भी कई लोग इस्लाम का नाश करने के पीछे पड़े हुए थे। आमिर और अरबद घर से यह सम्मति पक्की करके चले थे कि हज़रत साहिब का अचानक वध कर देंगे। आमिर ने अरबद को कहा कि मैं हज़रत साहिब को बातों में लगाऊँगा, तुम तलवार मार कर उनका अन्त कर देना। अतः आमिर ने इसी प्रकार किया; परन्तु अरबद को साहस न पड़ा। अन्त में जब आमिर ने देखा कि इस प्रकार अवसर नहीं मिलता, तो हज़रत साहिब को कहा कि मैं आप के साथ एकान्त में वार्तालाप करना चाहता हूं। परन्तु आप ने कहा, "जब तक तू एक परमात्मा पर विश्वास लाने की प्रतिज्ञा न

करे, यह नहीं हो सकता।" यह पुरुष एक बड़ी शक्ति शाली जाति का सर्दार था। चलते समय कहने लगा कि मैं इतने सवार और प्यादे आप पर चढ़ाई करके लाऊँगा कि जिनके साथ टक्कर लेने की आप में शक्ति नहीं होगी। इस समय नबी क़रीम ने केवल इतनी प्रार्थना की कि "हे परमपिता! आप आमिर-बिन-तफ़ैल के साथ संघर्ष में मेरे लिए पर्य्याप्त होना।" करनी परमात्मा की कि इस से पहिले कि यह इस्लाम का शत्रु अपनी जाति को जाकर उभारता, स्वयं ही समाप्त हो गया। रास्ते में उस को प्लेग निकली और वह मर गया।

अरब में इस्लाम का ज़ोर—संक्षेप में यह कि नौवें वर्ष के अन्त, और दसवें वर्ष में युद्धों की लड़ी लगभग पूर्णतया समाप्त हो गई और इस्लामी मत में जत्थों के जत्थे लोगों के प्रविष्ट होने प्रारम्भ हो गए, यहां तक कि दो वर्ष के भीतर कुच्छ यहूदियों और नसारा को छोड़ कर अरब देश में एक ही मत अर्थात् इस्लामी मत हो गया, और चारों ओर "अल्लाहू अकबर" की ध्वनियां गूंजने लग गईं। कैसा आश्चर्य्य जनक दृश्य है कि वह पुरुष

जो हज्ज के दिनों में स्वयं हर एक जाति के पास जाता है और कोई उसकी बात नहीं सुनता, आज प्रत्येक जाति स्वयं उसके पास अपना डैपूटेशन भेजती है और उस के मत में प्रविष्ट होना अपने लिए मान और प्रतिष्ठा का कारण समझती है। जिसको दीन पर पागल कह कर धिकारा जाता था, आज उसके साथ एक बात कर लेना सांसारिक और पारलौकिक मान-प्रतिष्ठा का मूल है। यदि बहुत सी अन्य बातों में इतिहास हज़रत मुहम्मद साहिब जैसा उदाहरण उपस्थित करने में असमर्थ है तो इस प्रकार की ऊँचीशान की क्रान्ति की उपमा भी नहीं पेश कर सकता कि एक सारे का सारा देश दो वर्ष के भीतर जब कि लड़ाइयां और झगड़े समाप्त हो चुके हैं, न केवल एक नवीन धर्म्म ही स्वीकार करे, अपितु इसके सभी आचरण परिवर्तित हो जाएं। इनकी सब पुरानी आदतें इस प्रकार नष्ट हो जाएं जिस प्रकार कि वह सभी थीं ही नहीं। संसार के समस्त अवतारों से बढ़कर यह प्रतिष्ठा भी परमात्मा ने हज़रत मुहम्मद साहिब को ही दी है।

२८—अन्तिम हज्ज



"आज के दिन मैंने तुम्हारे लिए तुम्हारा धर्म्म पूर्ण कर दिया और अपनी कृपा को तुम पर पूरा कर दिया।"

(सूरत माइदा—३)

नौवें वर्ष के पीछे मुनकरों का हज्ज में न आना—नौवें वर्ष के अन्त तक अरब देश के अंदर कुच्छ मुनकर (न मानने वाले) शेष थे, इस वास्ते इस समय तक आपने जितने हज्ज किये, वह उमरा के रंग में थे, अर्थात् हज्ज के दिनों में आपने हज्ज नहीं किया। नौवें वर्ष में जब इस्लाम बहुत ज़्यादा फैल गया और मुनकर जातियां कम रह गईं तो आपने हज़रत अबु-बकर को मुसलमानों का नेता (सर्दार) नियत करके हज्ज करने के लिए भेजा और उसके पीछे ही सूरत बरात की प्रारम्भिक आइतों की घोषणा के लिये हज़रत अलीको भेजा कि अब आगे से कोई काफ़िर

काअबे का हज्ज नहीं करेगा। इस विषय में वास्तविक तौर पर एक भविष्य-वाणी भी थी कि एक वर्ष के अन्दर सारा अरब मुसलमान हो जाएगा और कोई मुनकर शेष नहीं रहेगा, जो हज्ज करेगा। अतः जैसा कि हम देख चुके हैं, दशवें वर्षमें सारा अरब मुसलमान हो गया।

अन्तिम हज्ज—इस वर्ष नबी करीम स्वयं हज्ज के लिए निकले। कैसा आश्चर्य्य जनक दृश्य था कि एक लाख चौबीस हज़ार मनुष्य अरब के भिन्न २ भागों से एकत्रित होते हैं और इनमें एक भी काफ़िर नहीं, उसी स्थान पर, जहां हज़रत साहिब अकेले फिरते थे और कोई आप की बात भी नहीं सुनता था, आज यह हाल है कि सभी ओर जीवन न्योछावर करने वालों के झुण्ड दृष्टिगोचर होते हैं और एक इस्लाम ही इस्लाम दिखाई देता है। परमात्मा की महिमा का कैसा चमत्कार था और इससे परमेश्वर की महत्ता का कितना प्रभाव उनके हृदयों में, जो यहां एकत्रित थे, पड़ा होगा। जब सफलता का यह अपूर्व दृश्य हज़रत साहिब को उनकी आंखों से दिखा दिया गया और सारे अरब देश को भी दिखा दिया गया और साथ ही यह भी समझा दिया गया कि अब आप का कार्य्य

संपूर्ण हो चुका है और वह सफलता आप को प्राप्त हो चुकी है, जो न आप से पहिले किसी को मिली और न बाद में मिलेगी ।

पथ पूर्णता और नबीपन की समाप्ति—अतः अब आप के विदा होने का समय आता है। साथ ही यह भी बता दिया गया कि यह सफलता, यह सारे अरब का इस्लाम के समक्ष सीस झुका देना ईश्वरेच्छा के ठीक अनुकूल और ठीक अपने समय पर हुआ है । क्योंकि यदि एक ओर सारा अरब मुसलमान हो गया तो दूसरी ओर धर्म्म भी अपनी उच्चकोटि पर पहुंच गया। अब प्रलय तक संसार को यह आवश्यकता नहीं कि कोई पुरुष परमात्मा की ओर से वकालत के कार्य्य पर स्थापित किया जावे । नबीपन का काम पराकाष्ठा तक पहुंच चुका, परमात्मा की कृपाएँ पूर्ण हो चुकीं। मनुष्य की समस्त धार्मिक आवश्यकताओं का प्रबन्ध क़ुरान शरीफ़ में कर दिया गया और इस एकही स्रोत से लोग सदा के लिए जलपान करके संतुष्ट होंगे। बेशक धर्म्मकी संपूर्णताका शुभ समाचार सुनाने के लिये इस से अच्छे किसी अन्य स्थान पर किसी और इकट्ठ की तज्वीज़ नहीं हो सकती थी। क्योंकि यह

वह स्थान था, जो सांसारिक लड़ाई झगड़ों से और धार्मिक बखेड़ों से सदा ख़ाली रहा और यह वह इकट्ठ था, जो सारे का सारा समस्त धार्मिक संबंधों को काट कर केवल ईश्वरेच्छा के लिए एक स्थान पर एकत्रित हुआ था और जिसमें समानता की यह अवस्था थी कि राजा और रंक का कोई भेद भाव शेष नहीं रहा था। सभी के सभी एक समान अपने परमेश्वर की सेवा में उपस्थित थे और हृदयों में ईश्वर की महत्ता का आतंक था।

जबल उरफ़ात पर उपदेश—इस हज्ज में नबी करीम ने अपना प्रसिद्ध व्याख्यान दिया। आप ऊँटनी पर सवार थे और सब लोग आप के आस-पास मिना के मैदान में एकत्रित थे। आप जो कुच्छ कहते जाते, अन्य लोग ऊँचे स्वर से उसे दोहराते जाते थे, ताकि समस्त समूह में आप की बात पहुंच जावे। उस समय अरब की समस्त जातियों और क़बीलों के लोग जुड़े बैठे थे और इस प्रकार यह आवाज़ मानो सारे अरब देश के कोने २ तक पहुंचा दी गई। आपने कहा :—

"हे लोगो ! मेरी बात को भली प्रकार सुन लो,

क्योंकि मैं नहीं जानता कि इस वर्ष के बाद फिर भी मैं कभी इस अवसर पर आप के मध्य होऊँगा।"

आप ने अपनी मृत्यु के समीप होने को न केवल इससे समझ लिया था कि आप का जो काम था, हो चुका था, अपितु इससे भी कि आप के दीन के पूर्ण होने की आयत उतर आई। यह आयत उरफ़ात के मैदान में ६ जिअ़्लहज्ज को उतरी थी और यह व्याख्यान इसके बाद दिया था। आप को जगत् में इसलिये भेजा गया था कि आप धर्म्म को पराकाष्टा पर पहुंचा दें। अतः प्रकट था कि जब आप को यह बता दिया गया कि आज के दिन धर्म्म सम्पूर्ण हो चुका, तो अब संसार में आप के ठहरने की आवश्यकता न रही। पुनः आप नेक हो :—

"तुम जानते हो कि यह कौन सा दिन है ? यह यौम-उल-नाहर अर्थात् बलिदान दिवस है। तुम जानते हो यह कौन सा महीना है ? यह शहर हराम अर्थात् मानयोग्य महीना है। अतः मैं तुम्हें विदित करता हूं कि तुम्हारा लहू और तुम्हारा माल तथा तुम्हारी मान-प्रतिष्ठा, इसी प्रकार एक दूसरे पर आदर सन्मान

का अधिकार रखती हैं, जैसे इस सत्कार योग्य नगर में, इस माननीय महीने में, यह प्रतिष्ठा का दिन। देखो, दृश्य अथवा अदृश्य को यह बात पहुंचा देने पर तुम अपने ईश्वर के साथ मिलने वाले हो। अतः वह तुम्हें तुम्हारे कर्मों के बारे में प्रश्न करेगा।"

"आज समस्त ब्याज की रक़में छोड़ी जाती हैं और अब्बास-बिन-अब्दुल-मतलब की ब्याज की रक़म भी छोड़ी जाती है। आज वह क़त्ल जो मूर्खता में हो चुके, उनका बदला मौक़ूफ़ किया जाता है और सबसे पहिले रब्बीया-इबन-अलहारस, इबन-अब्दुल-मतलब के वध का बदला मौक़ूफ़ किया जाता है।"

"हे लोगो! आज शैतान इस बात से निराश हो गया है कि तुम्हारी भूमि में फिर कभी इसकी भक्ति हो सकेगी। परन्तु इसके अतिरिक्त (अर्थात् मूर्ति-पूजा को छोड़ कर) यदि और बातों में उसकी पूजा की गई, ऐसे कर्म्मों में, जिन को आप तुच्छ ख़्याल करो तो यह उसकी प्रसन्नता का कारण होवेगा। अतः अपने धर्म्म में उससे बहुत बच कर रहो।"

"फिर हे लोगो! तुम्हारे अपनी स्त्रियों पर अधिकार हैं और तुम्हारी स्त्रियों के तुम पर अधिकार

हैं। वह तुम्हारे हाथों में परमात्मा की अमानत हैं, तुम उनके साथ अच्छा वर्ताव करो। और तुम्हारे दास, देखो! तुम उनको खाने के लिए वह कुच्छ दो जो तुम स्वयं खाते हो, और वह वस्त्र पहनाओ, जो स्वयं पहनते हो।"

"हे लोगो! मेरी बातों को सुन लो और इनको समझ लो। जान लो कि प्रत्येक मुसलमान दूसरे मुसलमान का भाई है और तुम सब भाई एक जैसे हो (अर्थात् एक जैसे अधिकार और उत्तरदायित्व रखते हो) और तुम सब एक ही प्रेम लड़ी में हो। अतः किसी पुरुषके वास्ते अपने भाई से कुच्छ लेना योग्य नहीं, किन्तु वही जो वह अपने हृदय की प्रसन्नता से स्वयं देवे। अतः अपने लोगों पर कोई अत्याचार न करो, अर्थात् उनका कोई अधिकार न छीनो।"

तब आप ने उच्च स्वर से कहा, "क्या मैंने सन्देश पहुंचा दिया है?" और हज़ारों मनुष्यों की ज़बान से इस उत्तर ने कि "निस्सन्देह आप ने पहुंचा दिया," वादी में एक गूंज पैदा कर दी। यदि वह सन्देश पूर्ण था, जो आप लाए तो उसके पहुंचाने में भी आपने कमाल कर दिया।

———

२६—नबी करीम की अकाल मृत्यु

—*—***—*—

" और मुहम्मद (जी महाराज) एक रसूल ही हैं। इस से पहिले सब रसूल मर चुके हैं । फिर यदि वह मर जाए या (उसका) वध किया जावे तो क्या तुम इस वास्ते पैरों से फिर जाओगे ।"

(अल इमरान १४३)

काल रोग—अन्तिम हज्ज से आप वापिस लौटे। जहां न केवल आप को दीन के सम्पूर्ण हो जाने का संकेत दिया गया, अपितु जहां आप ने अपने प्रचार के काम को भी पूर्ण कर दिया। इस के पीछे आप ईश्वर को मिलने की प्रतीक्षा में थे कि सन् ११ हिजरी सफ़र के महीने के अन्तिम दिनों में आप रोग ग्रस्त हुए । उस समय आप शाम की सीमाओं की ओर सेना को तय्यारी की आज्ञा दे चुके थे,

और उस सेना पर उसामा-बिन-ज़ैद को नियत कर चुके थे, जिनके पिता ज़ैद उसी ओर के एक युद्ध में बलिदान (शहीद) हुए थे । रोग के होते हुए भी आप ने अगले दिन उसामा को झण्डा दिया और अबु-बकर और उमर जैसे उच्च महा-पुरुष भी सैनिक के रूप में उसामा के आधीन किये गए। यह अपने जीवन के अन्त में फिर बराबरी की शिक्षा सिखाने के लिए था । सेना ने मदीने से बाहिर पड़ाव किया; परन्तु नबी करीम का रोग अधिक चिन्ता जनक हो गया । अतः सेना का चलना भी रुक गया। इसी दशा में आपने अपनी सारी बीबियों (धर्म्म-पत्नियों) को एकत्रित किया और सब ने इस बात को पसन्द किया कि आप रुग्णावस्था में हज़रत आयशा सदीक़ा के घर में रहें । और आप की मृत्यु पर्य्यन्त हज़रत आयशा ही आप की सेवा शुश्रूषा करती रहीं । सात आठ दिन बीमारी की दशा में ही आप मस्जिद में आकर निमाज़ की अमामत कराते रहे, परन्तु अधिक वार्तालाप नहीं कर सकते थे । एक दिन आपने बहुत सा पानी सिर पर डलवाया और फिर सिर बांध कर बाहिर

निकले। निमाज़ से पीछे आपने लोगों को कुच्छ उपदेश दिया। इस उपदेश के समय आप ने कहा कि "एक सेवक को ईश्वर ने इस जगत् के जीवन और जो उसके पास है, उस में अधिकार दिया। अतः उस सेवक ने जो ईश्वर के पास है उस को चुन लिया।" हज़रत अबु-बकर ने समझ लिया कि हज़रत साहिब अपनी मृत्यु की ओर संकेत कर रहे हैं अतः वह रो पड़े। इस के पश्चात् आपने कहा कि "मस्जिद में जितने द्वार खुलते हैं, वह सब सिवाए अबु-बकर के द्वार के बन्द कर दिए जाएं।" फिर आप ने हिजरतियों को शिक्षा दी कि वह अनसार के साथ सद्व्यवहार करें।

अबु-बकर को अमाम नियत करना—

अगले दिन आप अधिक निर्बल हो गए। जब निमाज़ के समय बलाल के बुलाने पर आपने वुज़ू के लिए उठना चाहा तो अपने आप को इस योग्य न देखा। इस वास्ते आप ने कहा कि "अबु-बकर को कहो कि लोगों को निमाज़ पढ़ादें।" हज़रत आयशा कहती हैं कि मैंने कहा कि "रसूल करीम ! अबु-बकर का स्वर नीचा है, और वह क़ुरान पढ़ाते समय रोते

अधिक हैं ।" आप ने फिर फर्माया कि "अबु-बकर को कहो कि लोगों को निमाज़ पढ़ावें ।" हज़रत आइशा कहती हैं कि मैंने फिर उसी प्रकार विनती की, परन्तु आप ने फर्माया कि "इसी प्रकार होगा ।" अतः इस के पश्चात् हज़रत अबु-बकर निमाज़ पढ़ाते रहे । एक दिन थोड़ा सा आराम होने पर आपने हुजरे का पर्दा उठाया और मस्जिद में पग रखा । लोग उस समय निमाज़ में थे । आप का पवित्र मुख कमल प्रसन्ता से खिल गया । यह इस लिए था कि आपने अपनी आँखों से देख लिया कि किस प्रकार वह लोग, जिनकी शिक्षा आप के सुपुर्द हुई थी, परमात्मा की सेवा में नम्रता पूर्वक नतमस्तक होते हैं और अपने कर्त्तव्यों से किसी प्रकार जी नहीं चुराते । फिर आप अपने आप को निर्बल देख कर लौट गए । यह सोमवार का दिन था । लोगों ने विचार किया, कि आप की शारीरिक अवस्था आगे से कुच्छ अच्छी है । हज़रत अबु-बकर भी अपने परिवार में सुख के लिये चले गए, और लोग भी अपने अपने कामों पर चले गए ।

स्वर्गारोहण—परन्तु नबी करीम की निर्बलता बढ़ गई ।

हज़रत आइशा ने आप को सहारा दे रखा था। इस समय हज़रत अबु-बकर के घर वालों में से एक पुरुष के हाथ में आपने दातुन देखी और संकेत से यह मांगी- और मुंह को अच्छी तरह से साफ़ किया। इसके पश्चात् हज़रत आइशा कहती हैं कि आप अधिक भारी हो गए। अरबी के शब्द आप की जिह्वा पर थे, जिन के अर्थ यह हैं "प्रीतम के साथ मिलाप।" मनुष्यों को साथ का हक़ देकर और उनको उच्च से उच्च स्थान पर पहुंचा कर, अब स्वयं आप सच्चे साथी के साथ जा मिले। यह सोमवार का दिन था और रब्बी-उल-अव्वल की दो तारीख थी। स्वर्गारोहण के समय आप की अवस्था ६३ वर्ष की थी।

उमर का इन्कार और अबु-बकर का उपदेश—आप की मृत्यु का समाचार प्रसिद्ध हो गया, लोग मस्जिद में एकत्रित हो गए। हज़रत उमर भी आ गए और आप ने कहा कि जो पुरुष यह कहेगा कि रसूल करीम चल बसे हैं, मैं उसका सिर तलवार के साथ काट दूंगा। आप ने विचार किया कि स्यात् किसी ने यूंही फ़िक्र डालने के लिये यह समाचार

मशहूर कर दिया है । सारे लोगोंका ध्यान हज़रत उमर की ओर था कि इतने में हज़रत अबु-बकर आए और सीधे हज़रत आइशा सदीक़ा के हुजरे में जा घुसे। पवित्र मुख से कपड़ा उठा कर देखा तो आप चल बसे थे । आपने पवित्र मस्तक चूमा और कहा कि ईश्वर आप पर दो मृत्युएँ इकट्ठी नहीं करेगा। फिर आप बाहिर निकले और मिम्बर पर चढ़ कर परमात्मा की स्तुति के पश्चात् कहने लगे, "हे लोगो! यदि कोई व्यक्ति मुहम्मद की भक्ति करता था तो मुहम्मद चल बसे हैं और जो कोई परमेश्वर की भक्ति करता था तो वह परमात्मा जीवित है और कभी भी नहीं मरेगा।" कितनी एकता की प्रेमी जाति थी और हज़रत अबु-बकर स्वयं कितने बलवान् थे कि एक ओर तो हज़रत उमरकी खींची हुई तलवार है कि रसूल करीम की मृत्यु का नाम न लो, और दूसरी ओर आप ऐसे शब्दों द्वारा नबी करीम जी के चल बसने का वर्णन करते हैं कि यदि एकता का अभिमान लोगों के मनों में अन्य सब अभिमानों से बढ़ कर न होवे तो इन शब्दों का सुनना भी वह सहन न कर सकते । इसके साथ ही आपने क़ुरान की वह आयत पढ़ी, जो प्रारम्भ में वर्णित है, "और मुहम्मद

केवल एक रसूल हैं। इनसे पहिले सब रसूल गुज़र चुके हैं। क्या यदि वह चल बसें या कोई उनका वध कर दे तो तुम अपनी एड़ियों पर वापिस हो जाओगे।" अर्थात् वह तो धर्म्म के कुच्छ सिद्धान्त सिखाने आए थे, उनके चल बसने से इन धार्मिक सिद्धान्तों में कोई अन्तर नहीं पड़ता, अतः इस बात में घबराहट ही कैसी? आयत ने बता दिया कि परमात्मा का यह नियम नहीं कि मृत्यु के मामले में रसूलों के साथ दूसरे मनुष्यों से भिन्न व्यवहार करे और यह भी बता दिया कि यदि पहिले कोई रसूल जीवित रहा होता तो हज़रत मुहम्मद साहिब का जीवित रहना आवश्यक होता। किन्तु जब पहिले सारे रसूल गुज़र गए तो नबी करीम जी की अकाल मृत्यु पर क्यों घबराते हो? इस व्याख्यान और इस आयत ने सब मनों में शान्ति उत्पन्न कर दी और यही आयत प्रत्येक पुरुष के मुख पर थी कि एक परमपिता परमात्मा का नाम शेष रहेगा, बाक़ी सब अपना २ काम करके बिदा होंगे। परन्तु रसूल करीम का पूरी सफलता प्राप्त करने के पीछे इस संसार से विदा होना, संसार के इतिहास में एक अपूर्व घटना रहेगी।

———

३०—पवित्र पत्नियां



"हे नबी! अपनी पत्नियों को कह दो कि यदि तुम्हारा प्रयोजन संसार का जीवन और इसका श्रृङ्गार है तो आओ मैं तुम्हें सामान दूँ और अच्छी प्रकार से विदा कर दूँ।"

(अल अहज़ाब—२८)

बीबी ख़दीजा—हज़रत साहिब का सब से पहिला विवाह उस समय हुआ जब आप की आयु पच्चीस वर्ष की थी। हज़रत ख़दीजा, जिनके साथ यह विवाह हुआ, उस समय चालीस वर्ष की थीं और सिवाए इब्राहीम के आपकी सारी सन्तान इनकी कोख से ही थी। हिजरत से तीन वर्ष पहिले हज़रत ख़दीजा स्वर्गवास हो गईं, समझो आपने पच्चीस वर्ष उनके साथ बिताए। हज़रत ख़दीजा की मृत्यु के समय आपकी आयु पच्चास वर्ष की थी और चाहे अ़रब देश में आम रिवाज कई कई निकाहों का था,

परन्तु आप ने इस समय के भीतर कोई दूसरा निकाह नहीं किया।

हज़रत खदीजा आप के लिए पहिले दिन से ही बड़ी शक्ति देने का कारण हुई थीं और उनका स्वर्गारोहण आपके लिए एक असह्य कष्ट था। उनकी मृत्यु के पश्चात् आप सदैव ही उनका वर्णन बड़े अच्छे शब्दों में करते और उनकी सहेलियों को उत्तम २ पदार्थ भेजा करते थे।

बीबी आइशा—हज़रत ख़दीजा के चल बसने के कुछ देर बाद, हज़रत अबु-बकर ने अपनी सुपुत्री आइशा का निकाह आप के साथ कर दिया। यह निकाह, मानो उन प्रेम सम्बन्धों पर मोहर था, जो हज़रत अबु-बकर सदीक़ और हज़रत साहिब के मध्य थे। हज़रत आइशा की आयु उस समय छोटी थी, इस वास्ते वह अपने पिता के घर पर ही रहीं, यहां तक कि हिजरत से लग भग सात आठ मास पीछे वह हज़रत साहिब के घर में आईं। आप के निकाह में केवल हज़रत आइशा ही कुमारी थीं।

हज़रत सौदाह—हज़रत आइशा के साथ सम्बन्ध हो जाने के पीछे हज़रत सौदाह के साथ आप का

निकाह मक्के में ही हो गया। सौदाह बड़ी आयु की महिला थीं। वह और उनका पति सकरान हिजरत करके हबश चले गए थे। वहां से लौटते हुए सकरान चल बसा और सौदाह विधवा हो गईं तथा अत्यन्त तंगी की दशा में थीं। मुसलमानों की संख्या उस समय कितनी थी, कि कोई रक्षक उनको मिलता? उन्हों ने नबी करीम के समक्ष विवाह के लिए प्रार्थना की और आप ने इसे स्वीकार कर लिया। अतः बीबी सौदाह आप की पवित्र पत्नियों में प्रविष्ट हुईं।

बीबी हफ़सा—हिजरत के पीछे जब आप मदीने में आए तो यहां युद्धों की लड़ी छिड़ गई। सब से पहिले बदर का युद्ध हुआ और इस लड़ाई में हज़रत उमर की सुपुत्री विधवा हो गई अर्थात् इनका पति खुनेस-इबन-हुज़ाफा मारा गया। निकाह करने वाले पुरुषों की उस समय कितनी कमी थी, यह इस से पता लगता है कि हज़रत उमर ने स्वयं पहिले हज़रत अबु-बकर के आगे और पुनः हज़रत उस्मान के प्रति विनती की कि वह इनकी विधवा सुपुत्री से निकाह कर लें, परन्तु दोनों सज्जनों ने

स्वीकार न किया। अन्त में हज़रत साहिब ने सन् तीन हिजरी में उन्हें अपनी सुपत्नी बना लिया।

बीबी ज़ैनब बनत खज़ीमा—इसी वर्ष अब्दुल्ला-बिन-हजश उहद के युद्ध में शहीद हुए और उनकी पत्नि ज़ैनब बनत खज़ीमा विधवा रह गई और आपने उनको अपनी पत्नी बनाया।

बीबी उमसलमा—सन् चार हिजरी में अबु-सलमा चल बसे और उनकी विधवा उम-सलमा के साथ, जिनका वास्तविक नाम 'हिन्द' था, हज़रत साहिब ने उसी वर्ष निकाह किया।

बीबी ज़ैनब बनत उमीम—ज़ैनब-बनत-उमीम बनत-अब्दुल-मतलब, रिश्ते में हज़रत साहिबकी फुफी की पुत्री थीं। आपने उनका निकाह ज़ैद के साथ, जो आप के स्वतन्त्र किए हुए दास थे, कराया, चाहे यह निकाह स्वयं हज़रत ज़ैनब और उनके भाई की इच्छा के विरुद्ध था। हज़रत ज़ैनब उच्च क़ुरैशी वंश में से थीं और उनके स्वभाव में कुच्छ सख़्ती अधिक थी। उनके पति ज़ैद, अरब के प्राचीन विचारों के अनुमार किसी उच्च वंश के साथ निकाह का

सम्बन्ध पैदा नहीं कर सकते थे। परिणाम यह हुआ कि ज़ैद ने ज़ैनब को तलाक़ दे दी और उसके पश्चात् सन् पांच हिजरी में हज़रत साहिब ने उनके साथ निकाह कर लिया।

बीबी ज़ुबेरिया—इसी वर्ष बनी-अल-मुसतलिक की चढ़ाई हुई और उस में बहुत से स्त्री पुरुष बन्दी हो गए। अरब के एक रईस हारिस की सुपुत्री जुबेरिया नाम की भी बन्दियों में आई। हारिस अपनी जाति का सर्दार था। वह अपनी सुपुत्री का मोचनधन लेकर हज़रत साहिब की सेवा में उपस्थित हुआ। यहां आकर अपने दो सुपुत्रों समेत मुसलमान बन गया। हज़रत ज़ुबेरिया का पहिला पति मर चुका था, इसलिए हारिस ने स्वयं ज़ुबेरिया को आप के निकाह में दिया। अतः आपने उनको स्वतन्त्र करके उनके साथ निकाह कर लिया। इस निकाह का परिणाम यह हुआ कि बनी-अल-मुसतलिक़ के लगभग सौ घरानों के बन्दी मुसलमानों ने यह कह कर स्वतन्त्र कर दिये कि जिस वंश में रसूल करीम ने विवाह किया है, वह दास नहीं हो सकता।

बीबी उमहबीबा—जो लोग हिजरत करके हब्शा में चले गए थे, उनमें अबु-सुफ़िआन की सुपुत्री उमहबीबा भी थीं। इनका पति अबैद-उल्ला भी वहां ही था और वह वहां ईसाई हो गया। इस की मृत्यु के पश्चात् जब अभी हज़रत उमहबीबा हब्शा में ही थीं, नबी करीम ने उनके साथ विवाह कर लिया और इसके अनन्तर वह सन् सात हिजरी के प्रारम्भ में मदीने पहुंच गईं।

बीबी सफ़ीआ—सन् सात हिजरी के प्रारम्भ में ख़ैबर का हल्ला पेश आया और यहां के सर्दार हुय्यी-बिन-अख़तब की पुत्री सफ़फ़ीआ कनाना की पत्नी, जो युद्ध में मारा गया था, बन्दियों में आई। यहूदियों की ओर से इतनी शरारतें होती रहती थीं कि हज़रत साहिब ने इनके वंश में विवाहके सम्बन्ध पैदा करके इनकी रोक करनी चाही। अतः उस युद्ध से वापिस आकर आप ने सफ़ीआ को स्वतन्त्र करके इसके साथ निकाह किया।

बीबी मारीआ कबतीआ—इसी वर्ष मारीआ कबतीआ भी, जिस को मिश्र के राजा ने उपहार

रूप में आप की सेवा में भेजा था, आप के हरम में प्रविष्ट हुईं और उनकी कोख से हज़रत इब्राहीम उत्पन्न हुए । मुसलमानों में भी, अन्य मतों वालों में भी साधारणतया यह एक झूठा विचार प्रवेश कर गया है कि हज़रत मारीआ कबतीआ को आप ने दासी की भांति रखा । आप के जीवन की एक एक घटना इस झूठे विचार का खण्डन करती है। आप ने किसी पुरुष को भी, जो आप के पास दास के रूप में आया, दास नहीं रहने दिया, प्रत्युत स्वतन्त्र कर दिया । तो एक ऐसी उच्च पदवी वाली देवी को, जिसकी कोख से आप के घर सन्तान भी पैदा होती है आप किस प्रकार दासी के रूप में रख सकते थे। आप की यह शिक्षा है और हदीस में यह आज्ञा मौजूद है कि जिस मनुष्य के पास दासी होवे, फिर वह उसको उच्च शिक्षा और सद्बुद्धि दे और स्वतन्त्र करके उसका निकाह कर देवे तो वह लोक परलोक में अच्छे फल का अधिकारी है । अब इसमें मुसलमानों को यही प्रेरणा की है कि दासी को स्वतन्त्र करके उसके साथ निकाह करें या उसका निकाह कर दें । अतः जो आप दूसरों को ऐसी

शिक्षा देते थे, तो आप किस प्रकार इस के विरुद्ध कर सकते थे? सफ़ीआ, जुवेरिया भी दासियां थीं आप ने इनको भी स्वयं स्वतन्त्र करके इनके साथ निकाह किया। मारीआ कब्तीआ तो युद्ध की बन्दिनी भी नहीं थीं। फिर पहिले हज़रत साहिब का अमल और दूसरे सुहाबा का अमल दोनों से पक्की और साफ़ साक्षी मिलती है कि हज़रत मारीआ कब्तीआ हज़रत साहिब की विवाहिता थीं और दासियों जैसा बर्ताव उनके साथ नहीं हुआ। क़ुरान शरीफ़ में हज़रत साहिब को आज्ञा हुई कि अपनी विवाहितों को पर्दे की आज्ञा दें अर्थात् वह बाहिर निकलें तो चादर लेकर निकलें तथा पुरुषों को आज्ञा हुई कि वह नबी जी के घर में जाएँ तो जो वस्तु मांगनी होवे, पर्दे के पीछे से मांगें*। यह आज्ञा साफ़ शब्दों में विवाहिता स्त्रियों के लिये है, दासियों के लिए नहीं। परन्तु यह सिद्ध है कि हज़रत मारीआ

---

*हे नबी अपनी विवाहिता (स्त्रियों) और लड़कियों तथा मोमनों की स्त्रियों को कह दो कि अपने ऊपर अपनी बड़ी चादरें ले लिया करें और जब तुम उनसे कोई वस्तु मांगो तो पर्दे के पीछे से मांगो।"
(सूरत अहज़ाब ५६—६३)

कबतीआ भी पर्दा करती थीं । अतः रसूल करीम के अमल ने बता दिया कि आप ने इनको पत्नियों में प्रविष्ट किया । फिर यह भी क़ुरान शरीफ़ में आज्ञा आई है कि मुसलमान आप की विवाहिता स्त्रियों के साथ आप के पीछे निकाह न करें× तो जिस प्रकार दूसरी बीबियों ने इस आज्ञा का पालन किया उसी प्रकार मारीआ कबतिआ ने भी किया, समझो उन्होंने स्वयं भी अपने आप को विवाहिता स्त्रियों में समझा और सुहाबा ने भी।

वही मारीआ कबतीआ को भी दिया जाता था—और जब हज़रत साहिब के पीछे आपके परिवार को खर्च आदि दिया जाता था, तो जो दूसरी बीबियों को दिया जाता था इनको भी वही दिया जाता था। अतः यह सारी ऐतिहासिक घटनाएँ साफ़ बताती हैं कि हज़रत मारीआ कबतीआ हज़रत साहिब की विवाहिता स्त्रियों में सी थीं, दासी नहीं थीं।

बीबी मैमूना—इसी वर्ष मैमूना बनत अलहारिस के साथ—जो कि विधवा हो चुकी थी—आपका निकाह

×और उसके पीछे कभी उसकी पत्नियों के साथ निकाह न करो।
(सूरत अहज़ाब –५३)

हुआ। हज़रत मैमूना ने स्वयं नबी करीम के समक्ष निकाह के लिए प्रार्थना की। इनकी बहिन हज़रत अब्बास के घर में थीं। आप ने इनकी प्रार्थना को स्वीकार किया। यह एक ग़ैर क़ुरैशी कबीले में से थीं।

हज़रत खदीजा और ज़ैनब बनत खज़ीमा, हज़रत साहिब के जीवन-काल में ही मृत्यु का ग्रास बन गईं, और आपकी मृत्यु के समय मारीआ कबतीआ समेत आपकी दस सुपत्नियां थीं।

पैग़म्बरों में विवाहों की संख्या के उदाहरण—बड़े बड़े पवित्र मनुष्यों के जीवन में एक से अधिक स्त्रियों के साथ विवाह करने के उदाहरण मिलते हैं, इस लिए यह कार्य्य अपने आप में बुरा नहीं कहला सकता। हज़रत इब्राहीम, जिनका आदर तथा जिनकी पवित्रता को आधे से अधिक जगत् मानता है, एक से अधिक स्त्रियां रखते थे। हज़रत याक़ूब और हज़रत मूसा भी। तथा हज़रत दाऊद और हज़रत सुलेमान के साथ तो सैंकड़ों का नाम लिया जाता है। हज़रत ईसा का तो अन्जील से निकाह भी सिद्ध नहीं होता, अतः उनका उदाहरण दृष्टान्त

के तौर पर कुच्छ काम नहीं दे सकता । यदि इनके उदाहरण पर सारा संसार चले तो जगत् थोड़े ही वर्षों में समाप्त हो जाए । अतः एक से अधिक स्त्रियों के कारण हज़रत साहिब पर कोई शंका नहीं हो सकती । यह एक पक्ष इस प्रश्न का है ।

आप के जीवन के तीन भाग और इस शंका की निवृत्ति कि आप ने काम-चेष्टा के विचार से अगणित निकाह किये—बहुत से लोग हैं, जिनके हृदयों में यह शंका उठती है कि आप ने इतने निकाह क्यों किए ? साथ ही उनके दिलों में यह शंका होती है कि इसका कारण काम-वासना के विचारों की अधिकता से भिन्न अन्य कोई नहीं हो सकता । और इस एक संशय से ही आप के जीवन का प्रकाशवान् पक्ष और असंख्य गुण, उनके विचार में मलियामेट हो जाते हैं। इस से पूर्व कि आप के सारे विवाहों के कारण वर्णन किए जाएं, इस शंका को दूर करना आवश्यक है कि विवाह के मामले में आपके जीवन के तीन भाग हैं। पहिला भाग अर्थात् पच्चीस वर्ष की आयु कुमारपन की दशा में गुज़रती है । दूसरा भाग जब आपने

निकाह किया और एक ही स्त्री आप के घर में थी, अर्थात् ५३ वर्ष की आयु तक था २८ वर्ष का काल। तीसरा भाग, जब आप के घर में अधिक स्त्रियां थीं, जिन की संख्या अन्त में दस तक पहुंच गई, अन्तिम दस वर्षों का काल है। प्रत्येक मनुष्य जानता है कि काम-वासना के विचारों का काबू से बाहिर होने का काल युवावस्था को प्राप्त होने के बाद जवानी के शुरू होने का समय होता है। गर्म देशों में साधारणतया मनुष्य १५ वर्ष की आयु में बालग़ हो जाता है और पन्द्रह से लेकर पच्चीस वर्ष तक की अवस्था ऐसी है कि जिन लोगों के स्वभावों में काम-वासना की अधिकता होती है, इसी आयु में उनके आचरण बिगड़ते हैं। इस काल में मनुष्य पर पाशविक विचारों का प्रभुत्व होता है और वह कर्त्तव्य को बहुत कम अनुभव करता है और एक विचारके ज़ोर के नीचे वह अपनी सारी आयु को नष्ट कर लेता है। अतः पहिले आप के जीवन के इस भाग पर जो दस वर्ष के समय तक है, विचार करना चाहिए कि इस काल में आप का कोई पग डगमगाया। क्या कोई पुरुष है, जो इस काल में आप के आचरण पर उंगली उठा सके। नहीं!

अपितु इसके उलट आप के जीवन का यह भाग सारे देश में ऐसी प्रसिद्धि रखता है कि आप अपनी उच्च कोटि की पवित्रता के कारण 'अल-अमीन' (धार्म्मिक) के नाम से प्रसिद्ध हो जाते हैं। जो पुरुष इन पाशविक विचारों के प्रभुत्व के काल में अपनी पवित्रता को स्थिर रख सकता है, वह काम वासना के विचारों के नीचे नहीं आता, अपितु अपनी काम-इन्द्रियों पर प्रधान होने का परिचय देता है। आयु का दूसरा भाग जो पच्चीस वर्ष से लेकर पच्चास वर्ष की आयु तक है, इस में आप एक विधवा के साथ निकाह करके उच्च कोटि का अत्यन्त सुन्दर गार्हस्थ्य जीवन व्यतीत करते हैं, हालांकि यह देवी आयु में आप से पन्द्रह वर्ष बड़ी थी, अर्थात् निकाह के समय इनकी आयु ४० वर्ष थी और मृत्यु के समय ६५ वर्ष। परन्तु इस बात के होते हुए भी आप को इनके साथ इतना प्रेम था कि जब आप के घर में हज़रत आइशा सदीका आ चुकी थीं और अन्य निकाह भी हो चुके थे, उस समय भी आप हज़रत ख़दीजा के साथ प्रेम का कई बार वर्णन करते रहते। अतः आप की आयु

का यह भाग भी यही बताता है कि काम-वासना के विचार आपके निकट फटके तक नहीं और पच्चीस वर्ष तक आपका सम्बन्ध अपनी पत्नी के साथ उच्च कोटि के पवित्र प्रेम का था, जो सम्भवतया विचार में आसकता है और पच्चास वर्ष के पीछे वृद्धावस्था का काल है, जिस में पाशविक इन्द्रियां स्वयमेव दब जाती हैं, न केवल यह, प्रत्युत जो पुरुष २५ वर्ष तक ब्रह्मचर्य्य का जीवन बिताए और पच्चास वर्ष तक एक ही पत्नी के साथ, जो आयु में उस से १५ वर्ष बड़ी है, गुजारता है और दूसरी स्त्री की ओर आंख उठा कर भी नहीं देखता, असम्भव है कि उस की आदतों में इसके पीछे ऐसा भारी परिवर्तन होवे कि वह काम-वासना के विचारों के वश में होकर निकाह करता जावे। शोक यह है कि जिन लोगों ने ऐसी शंका की है, उन्होंने आप के जीवन का अध्ययन नहीं किया। नहीं तो उसकी एक एक घटना इस शंका को झुठलाती है कि आप ने काम-वासना के विचारों के वशीभूत होकर निकाह किए।

आप का सादा जीवन तथा धन और सुन्दरता के आकर्षण से ऊपर होना—एक और

बात, जो बताती है कि आप को काम-वासना के भावों पर पूरा प्रभुत्व प्राप्त था और आप इस संसार में रहते हुए भी इससे उपराम थे, आप के जीवन का ढंग है। बालकपन से लेकर मृत्यु पर्यन्त आप इतनी भिन्न अवस्थाओं में से होकर निकलते हैं कि एक मनुष्य के जीवन में इतनी भिन्न भिन्न दशाओं का एकत्रित होना कठिन है। यतीम होने की अवस्था मनुष्य की दीनता की अत्यन्त निकृष्ट दशा है और बादशाह होनेकी अवस्था इसकी उच्च कोटि की शक्ति की दशा है। आप यतीमी की दशा से निकल कर बादशाही पर पहुंचते हैं; परन्तु आप की खाने, पीने की आवश्यकताएँ, पहिनने और रहने-सहने की आवश्यकताएँ, जैसी यतीमी की अवस्था में थीं, वैसी ही बादशाही होने की दशा में हैं। प्रत्युत बादशाही की दशा में संसार के सुखों को और भी कम कर दिया है। बादशाही को छोड़ कर फ़क़ीर हो जाना इतना कठिन नहीं, जितना यह कि बादशाह होकर भी मनुष्य फ़क़ीर का जीवन व्यतीत करे। धन, ऐश्वर्य्य उसके अधिकार में हो और फिर उसको अपने वास्ते ख़र्च न करे और हद

दर्जे की उदारता और विशाल हृदयता से लोगों के लिए खर्च करे। हर समय वह वस्तुएँ आँखों के सामने हों, जो मानवी स्वभाव को अपना दास बना लेती हैं, परन्तु कोई वस्तु उसके लिये किसी समय भी लोभ का कारण न बन सके। इस समय में जब आप मदीने और उसके आस-पास का राज्य प्राप्त कर चुके हैं, आप के घर का सामान एक चारपाई जिस पर खजूर की एक मोटी चटाई पड़ी हुई है और पानी का एक घड़ा है। आप कई बार भूखे पेट ही रात काटते थे। घर में कई कई दिन तक खाने पकाने के लिये आग नहीं जलाई जाती। खजूरों पर जीवन बिताते हैं। यदि आप अपने सुखों के लिए धन के इच्छुक होते तो न केवल आप जातीय कोष में से जितना चाहते ले सकते थे, प्रत्युत आप पर जीवन न्योछावर करने वाले प्रत्येक वस्तु उपस्थित करने के लिये उद्यत थे। परन्तु आप की दृष्टि संसार के इन तुच्छ पदार्थों से बहुत ऊँची थी। संसार की किसी इच्छा ने आप पर अधिकार नहीं किया, न तंगी की दशा में, न बाहुल्य (अमीरी) की अवस्था में। जिस प्रकार संसार के धन ऐश्वर्य्य और

सांसारिक प्रलोभनों को उस समय लात मारी, जब कुरैश केवल मूर्तिपूजा के विरुद्ध उपदेश करना छोड़ देने पर धन, राज्य, आदर, सत्कार और सुन्दरता उपस्थित करते थे, उसी प्रकार उस समय भी लात मारी, जिस समय परमात्मा ने यह सब सामग्री अपनी कृपा के साथ आप को प्रदान की। अतः आप के जीवन का यह व्यवहार और धन, ऐश्वर्य्य के होते हुए इस तर्फ़ आप की आंख का न उठना दूसरी साक्षी इस बात की है कि आप को उन लोगों के साथ कोई संबंध नहीं, जिनको संसार का धन ऐश्वर्य्य या संसार की सुन्दरता अपनी ओर खैंच सकती है।

स्त्रियों को सजाने का सामान देने से इन्कार—तीसरी बात, जो इस मामले का निर्णय करती है, उसकी ओर कुरान करीम की इस अध्याय के आरम्भ में लिखी आयत में ध्यान दिलाया गया है। मदीने में आने के कुच्छ समय पश्चात् मुसलमानों की अवस्था पहिले जैसी नहीं रही थी। कुच्छ तो व्यापार के धन्दे में पड़ जाने से धन में वृद्धि हुई; फिर बदर के युद्ध में बन्दियों का मोचनधन और

लूट का माल हाथ आया; फिर जब यहूदियों को देश निर्वासन मिला तो इनकी सम्पत्तियां भी उनके अधिकार में आईं। इन कारणों से कुच्छ धन ऐश्वर्य्य में और कुच्छ सुख की सामग्री में उन्नति प्रारम्भ हुई। परन्तु नबी करीम का अपना जीवन और आपके घर के लोगों के जीवन में कोई परिवर्तन न आया। आप की सुपत्नियों के मनों में यह इच्छा उत्पन्न हुई कि अब जब कि सुखों की सामग्री सब मुसलमानों को आगे से अधिक प्राप्त हैं तो हम भी इनसे भाग के अनुसार क्यों लाभ न उठावें ? सम्मति करके हज़रत साहिब की सेवा में प्रार्थना की गई। परन्तु परमात्मा की आज्ञा इस प्रकार आई, "हे नबी ! अपनी पत्नियों को कहदो कि यदि तुम सांसारिक जीवन और उसके शृङ्गार की सामग्रियां चाहती हो तो आओ मैं तुम्हें सब कुच्छ दूँ और भली प्रकार विदा कर दूँ।" नबी करीम को अपनी सुपत्नियों से कितना प्रेम था, वह इस वाक्य से प्रकट है कि "तुम में से सबसे भला पुरुष वह है, जो अपनी पत्नि से भला वर्ताव करता है।" परन्तु जब वह पत्नियां एक उचित मांग करती हैं कि

दूसरों की भांति हमें भी धन ऐश्वर्य्य में से अधिक भाग मिले, तो उत्तर यह मिलता है कि अच्छा हो यदि धन लेकर तुम विदा हो जाओ। क्या यह शब्द उस पुरुष के मुंह से निकल सकते हैं, यह विचार उस हृदय के अन्दर आ सकता है जो काम-वासना का दास हो? एक विषयों का दास, अपितु एक साधारण सांसारिक व्यक्ति भी अपनी स्त्री को अधिक शृङ्गार और सजावट की अवस्था में देखना पसन्द करता है। परन्तु यहां आज्ञा होती है कि यदि हार शृङ्गार चाहती हो तो रसूल करीम के घर से चली जाओ और वह सभी पत्नियों को एक ही समय पर विदा करने को उद्यत है। पता लगा कि काम वासना इसके हृदय के किसी कोने में भी नहीं, कोई काम संबंधी विचार उसके पास तक नहीं फटक सकता। इस का प्रयोजन इन बीबियों के साथ विवाह करने का कुछ और है।

बहुत से विवाहों का प्रयोजन—वह प्रयोजन क्या है? इसका उत्तर स्वयं कुरान शरीफ़ देता है। "और यदि तुम्हारा उद्देश्य ईश्वर और उसका रसूल और आख़रत का घर है तो परमात्मा ने तुम में से

भलाई करने वालों के लिए बड़ा बदला लिखा है, और याद करो वह जो परम-पिता परमात्मा की आयतों और काम की बातों में से तुम्हारे घरों में पढ़ा जाता है ।" समझो पहिली आयतों और इन आयतों में बताया यह है कि तुम्हारा प्रयोजन, नबी करीम के निकाह में आने का यह नहीं कि जीवन के कुच्छ दिन सुख के साथ व्यतीत कर लो और मामूली सुख-सामग्री तुम्हें मिल जाए । यदि रसूल करीम का प्रयोजन तुम्हें विवाहने से केवल संसार के जीवन तक ही होता तो फिर तुम्हारी उसके घर में रहने की कोई आवश्यकता नहीं, तुम्हें विदा कर देने की आज्ञा दी जाती है । परन्तु यदि तुम्हारे साथ विवाह करने का उसका प्रयोजन कुच्छ और है, अर्थात् ईश्वर और उसके रसूल की बातों का प्रचार करना और अपनी जाति को आख़रत के घर की ओर ध्यान दिलाना, तो फिर तुम संसार के सुखों पर लात मार कर वास्तविक प्रयोजन की ओर ध्यान रक्खो, तुम्हें फल भी अधिक मिलेगा । अतः तुम मिल कर क़ुरान को याद रखने में और इन बुद्धिमत्ता की बातों को बचा कर रखने में लग जाओ, जिनका

तुम्हारे घरों में चर्चा है अर्थात् जो तुम स्वयं पैग़म्बर से सुनती हो। कितना पवित्र प्रयोजन है! पत्नी का पति से और पति का पत्नी से शान्ति प्राप्त करना विवाह का एक साधारण प्रयोजन है, परन्तु नबी करीम का प्रयोजन केवल इतना ही नहीं, वह इस से भी बहुत उच्च है और वह यह है कि वह बातें जिनको पहुंचाने के लिए स्त्रियां ही योग्य हैं। या वह मानुषिक सदाचार जो स्त्रियां के समक्ष ही प्रकट हो सकते हैं, उन को संसार में पहुंचाने का मार्ग होवें। शरीअ़त की जो बातें आपने सिखाई हैं, उन में से बहुतेरी ऐसी हैं कि आप स्वयं भी खोल कर स्त्रियों के आगे वर्णन नहीं कर सकते थे। अतः हदीसों में कई घटनाएं आती हैं कि जब किसी स्त्री ने कोई मसला (प्रश्न) पूछा तो आपने अपनी किसी पत्नी को आदेश दिया कि तू समझा दे। फिर नबी करीम का वह आचरण, जिसका सम्बन्ध गार्हस्थ्य जीवन के साथ है, केवल पवित्र विवाहिता स्त्रियों द्वारा ही हम तक पहुंचे, नहीं तो हम एक बहुत बड़े भाग से वंचित रह जाते। हज़रत आइशा सदीक़ा मुख से दीन का एक बड़ा भाग हमें मिला है और

इसी प्रकार क्रमशः अन्य विवाहिता स्त्रियों से भी। और यदि यह कहा जाए कि एक ही पत्नी इस कार्य्य को पूरा कर सकती थी तो यह ठीक नहीं। इस लिए कि जब तक भिन्न २ स्वभावों के पुरुष न हों, भिन्न २ सारे काम सुरक्षित नहीं रह सकते। फिर एक ऐसे पुरुष की शिक्षा, जो सारे संसार के लिए नेता बन कर आया, एक अकेली स्त्री का उसको सम्भाल कर रखना कठिन था। यही कारण है कि बड़े २ नबियों ने साधारणतया एक से अधिक स्त्रियों के साथ विवाह किया है। यह लोग काम-वासना की पूर्ति के लिए यह काम नहीं करते, अपितु ईश्वर की बातें ईश्वर की सृष्टि तक पहुंचाने के लिए उनको यह आवश्यकता पड़ती है। फिर अन्तिम नबी को यह आवश्यकता सब से बढ़ कर थी, जिसके वचन और कर्म सर्वदा के लिए संसार में पीछे रहने आवश्यक थे, ताकि संसार के लिए शिक्षा का कारण बनें। इस्लाम एक ऐतिहासिक मत और हज़रत मुहम्मद एक ऐतिहासिक पुरुष हैं। यदि इन के घरेलु (गार्हस्थ्य) जीवन को—जीवन की घटनाओं को—सम्भाल कर

रखने वाली इनकी पत्नियां न होतीं तो मनुष्य सन्तान शिक्षा के लिये इस भाग से सदा के लिये वंचित रह जाती, जिस पर मनुष्यों की प्रसन्नता का अधिक आश्रय है। क्योंकि जिस मनुष्य को अपने घर में सुख प्राप्त नहीं, उसको कभी भी संसार में सुख और शान्ति प्राप्त नहीं हो सकती। अतः आवश्यक था कि परमपिता, हज़रत साहिब के जीवन में इन सामग्रियों के सम्भाले जाने का सामान उत्पन्न कर देता और वह सिवाए इस बात के कि आप के घर में बहुत सी पत्नियां हों, पैदा नहीं हो सकता था।

अधिक विवाहों की आवश्यकता—यदि विचार किया जावे तो आप के जीवन में बहुत विवाहों को नमूने का होना आवश्यक था। इस्लाम एक सर्व साधारण का मत है, और प्रत्येक प्रकार की होने वाली आवश्यकताओं का इलाज करता है। एक ऐसे पुरुष के लिए जो पच्चीस वर्ष तक की आयु कुमारपन में व्यतीत करता और अपनी पवित्रता का प्रमाण देता है और ५२ वर्ष की आयु तक एक स्त्री के साथ उच्च कोटि की वफ़ादारी से जीवन गुजार देता है, जिस आयु में भी उस

से बहुत बड़ी है, अधिक निकाहों की कोई व्यक्ति-गत आवश्यकता वहम में भी नहीं आ सकती। परन्तु निश्चय ही धार्मिक आवश्यकता उपस्थित है। आपने कुमारपन का नमूना भी दिखा दिया और अपने मुरीदों (भक्तों) को बता दिया कि वह किस प्रकार अपनी आयु का पहिला भाग अविवाहित रह कर व्यतीत करें और पवित्रता के साथ जीवन बिताएँ। आपने कपनी आयु का बड़ा और वास्तविक भाग जो पच्चीस से लेकर लगभग पचपन वर्ष तक है, एकही स्त्री के साथ व्यतीत करके यह दृष्टान्त भी दे दिया कि साधारण मनुष्य की दशा में एक ही निकाह पर संतुष्ट रहना चाहिए और बता दिया कि केवल काम वासना के विचारों के साथ निकाह पर निकाह करते जाना आप की शिक्षा नहीं और न ही अधिक निकाहों का प्रयोजन यह है कि एक स्त्री के घर में होते हुए दूसरी का विचारमात्र भी चित्त में लावे। हां, आप की शिक्षा सारे संसार के लिए थी और इस सब के लिए समान शिक्षा में उन आवश्यकताओं को पूरा करने का सामान भी मौजूद होना चाहिए था, जो किसी समय आ उपस्थित

होती हैं। निस्सन्देह निकाह का वास्तविक नियम (क़ानून) इस्लाम के निकट यह है कि एक पुरुष एकही स्त्री के साथ निकाह करे और उस के साथ प्रेम और पत्निव्रत धर्म्मानुसार बर्ताव करे। किन्तु कभी कभी लोगों को जो विशेष आवश्यकताएँ आ उपस्थित होती हैं, उदाहरण के लिए जब स्त्री बाँझ हो या जब जातीय आवश्यकताएँ आ उपस्थित होती हैं तथा जब युद्ध आदि के कारण पुरुषों की संख्या में कमी हो जाए और स्त्रियों तथा बच्चों की सुध लेने वाले जाति में घट जाएँ या अन्य कारणों से स्त्रियों की संख्या अधिक हो जाए, जैसा कि आज कल बहुत से यूरूपीय देशों में है, तो ऐसे समयों में जाति को भयानक रोगों से बचाने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि ऐसी दशा में एक से अधिक स्त्रियों के साथ निकाह करने की आज्ञा दे दी जावे। केवल भावों से काम लेने वाला मनुष्य या तो एक ओर झुक जाता है या दूसरी ओर। परन्तु बुद्धिमान् मनुष्य, संयम को किसी अवस्था में भी नहीं छोड़ता। आज ईसाई प्रदेशों में बहु विवाहों को एक इलाज के तौर पर स्वीकार न

करने वाले लोग जाति के भीतर भयानक रोगों का फैल जाना स्वीकार करते हैं। व्यभिचार के फैलने से इन के हृदयों में कोई घृणा उत्पन्न नहीं होती, परन्तु ठीक उपाय से एक आवश्यकता को पूरा करने के लिये एक पुरुप के घर दो स्त्रियों का होना इनके विचार में सबसे बड़ा पाप है। स्त्रियां स्वाभाविक इच्छा की पूर्ति के लिए या आजीविका की तंगी के कारण अपना सतीत्व बेचें, लाखों की संख्या में व्यभिचार का पेशा ग्रहण करें लाखों की संख्या में हरामकारी (व्यभिचार) द्वारा बच्चे पैदा हों, जिनकी सुध-बुध लेने वाला कोई पिता न हो, इन बातों पर यूरूप के फिलास्फरों का मन नहीं कुढ़ता। परन्तु इस्लाम ने जो इन रोगों के नष्ट करने का उपचार बताया, इस पर वह क्रोध तथा आवेश में आ जाते हैं। किसी रुग्ण जाति या रोगी मनुष्य की इससे बढ़ कर खोटी प्रारब्ध और क्या हो सकती है कि एक रोगी रहना स्वीकार करे, परन्तु औषध सेवन से घृणा करे। कुरान एक बुद्धिमत्ता से परिपूर्ण पुस्तक है और इसने प्रत्येक वस्तु को अपने दर्जे (स्थान) पर रक्खा है। इसने व्यभिचार के रोग की चिकित्सा के लिये विवाहों की

अधिकता और तलाक़ के दो योग (नुस्खे) दिये हैं। इन दोनों योगों से ईसाई युरुप घृणा करता रहा, किन्तु धीरे २ अब एक योग धारण करता जा रहा है, और वह समय दूर नहीं कि दूसरे नुस्खे को भी ग्रहण करेगा। और अन्त में बुद्धिमान् लोग यह प्रश्न करेंगे कि क्या जाति के भीतर सीमा से बढ़ा हुआ व्यभिचार सहने योग्य चीज़ है या दूसरी स्त्री से निकाह कर लेना। अब प्रकट है कि कुरान करीम की प्रत्येक शिक्षा के इस भाग का जो विवाहों की गिनती के साथ सम्बन्ध रखता है, आप को अपने व्यवहार में लाकर बताना आवश्यक था। आपका पच्चीस वर्ष तक कँवारे रहना और पवित्रता का जीवन बिताना और पचपन वर्ष तक एक ही स्त्री के साथ उच्च कोटि के पत्नि-व्रत धर्म्म का पालण करते हुए जीवन व्यतीत करना बताता है कि आपको अपने व्यक्तित्व के लिए या इन्द्रियों की स्वाभाविक इच्छा की पूर्ति के लिए बहु-विवाहों की आवश्यकता नहीं थी, अपितु अपनी जाति को मार्ग दिखाने के लिए आप को वह बात करनी पड़ी, जिस से आप आयु भर पर्हेज़ करते रहें।

आप के जीवन में दो अद्भुत नमूनों का मिलाप—केवल यही एक बात नहीं, जिससे नबी करीम को अपनी व्यक्तिगत इच्छा के विरुद्ध एक काम अपनी जाति के लिए करना पड़ा हो। जिस प्रकार पच्चीस वर्ष तक आप का कँवारे रहते हुए पवित्र (निर्दोष) रहना और पचपन वर्ष तक एक ही स्त्री के साथ, जो आप के यौवन-काल में वृद्धावस्था को पहुंची हुई थी, वफ़ादारी के साथ जीवन व्यतीत करना। इस बात की अन्तिम और पक्की दलील है कि आप के स्वभाव का झुकाव काम-वासना के विचारों की ओर कभी नहीं हुआ और बुढ़ापे में आप को अपने स्वभाव के झुकाव के विरुद्ध जातीय और धार्मिक आवश्यकताओं के लिए अधिक विवाह करने पड़े। यदि आप के स्वभाव का थोड़ा सा झुकाव भी काम-वासना की ओर होता तो एक ऐसे देश में जहां व्यभिचार पाप नहीं समझा जाता था, प्रत्युत इसका मान किया जाता था। आप पच्चीस वर्ष की आयु कँवारे रहकर पवित्रता के साथ न गुज़ारते और जहां तक पुरुष के घर कितनी २ स्त्रियों का होना देश की साधारण दशा थी, वहां पचपन वर्ष

तक आप एक स्त्री पर ही संतोष न करते। जिन लोगों ने ऐतिहासिक घटनाओं पर विचार नहीं किया, उन को विवाहों की संख्या का शब्द सुनते ही धोका लगता है, जिस प्रकार कि आप के युद्धों से उनको धोका लगता है। आप के जीवन की सब घटनाएं इस बात की साक्षी देती हैं कि आप युद्ध से घृणा करते थे। एक ऐसे देश में और ऐसे नगर में जहां युद्ध मनुष्य का सब से बड़ा काम था और प्रति दिन का मन-बहलावा था , आप नबी होने से पहिले की चालीस वर्ष की आयु व्यतीत करते हैं, परन्तु आपके स्वभाव में युद्ध में भाग लेने का झुकाव बिल्कुल नहीं देखा जाता । छिद्र निकालने वाले मूर्ख, गुणों को भी अवगुण बना लेते हैं और कहते हैं कि आप डरपोक थे, इस वास्ते आप युद्धों में भाग नहीं लेते थे। कहते हैं कि आप शत्रु के मुक़ाबिले में खड़े नहीं हो सकते थे। परन्तु जब युद्ध के लिए जातीय और धार्मिक आवश्यकता पड़ी तो आपने अपनी शूरवीरता का वह परिचय दिया कि जिसके समक्ष अरब जैसे लड़ाके देश के लब्ध-प्रतिष्ठ शूरवीर भी लज्जित थे। सारी सेना भाग उठती है, आप अकेले विजयी शत्रु से

टक्कर लेने के लिए केवल खड़े ही नहीं होते अपितु इसकी ओर बढ़ते चले जाते हैं। मदीने में डाके का भय होता है तो आप अन्धेरे में अकेले घोड़े पर चढ़ कर समाचार जानने के लिए निकल जाते हैं। आपके पहिले जीवन ने बता दिया कि आप के स्वभाव का झुकाव युद्ध की ओर नहीं। आप जहां तक वश में हो, इस से बचना चाहते हैं। आपके पिछले जीवन ने बतला दिया कि आप डरपोक नहीं, शूरवीरता का जौहर आप में इतना अधिक है कि एक युद्ध प्रिय जाति के वीर से वीर पुरुष में भी वह वीरता नहीं। शत्रु से टक्कर लेने से आप डरते नहीं, प्रत्युत अकेले ही हज़ारों शत्रुओं से युद्ध करनेका साहस आपके अंदर मौजूद है। इसी प्रकार आप ने कुमारपन में ब्रह्मचर्य्य धारण करके और पचपन वर्ष की आयु तक एक उधेड़ अवस्था की स्त्री के साथ पत्निव्रत धर्म्म का पालन करते हुए जीवन व्यतीत करके यह बता दिया कि आपके स्वभाव का झुकाव काम-वासना के विचारों की ओर नहीं। और जब जातीय और धार्मिक आवश्यकता पड़ी तो दस स्त्रियों के साथ विवाह करके यह बतला दिया कि आप में वह बल उच्च

कोटि का मौजूद है। आप नपुंसक अथवा थोड़े बल वाले नहीं और वास्तव में पवित्रता भी वही सराहनीय है, जो शक्ति-शाली काम-इन्द्रियों के होते हुए भी धारण की जावे और शत्रु पर तलवार न उठाना भी वही सराहने योग्य है, जब इतनी वीरता अन्दर मौजूद हो कि अकेला हज़ारों शत्रुओं का मुक़ाबिला कर सके। नबी करीम का पहिला और पिछला जीवन इन सत्यताओं का साफ़ प्रमाण है। आप वीर और साहसी हैं, परन्तु इसके होते हुए भी शत्रु पर तलवार नहीं चलाते, युद्ध में भाग नहीं लेते। आप बलवान्, शक्ति तथा पौरुष सम्पन्न युवक हैं, परन्तु इसके होते हुए भी कुमारपन में पवित्रता स्थित रख सकते हैं और आप की काम-इन्द्रियां आप के वश में हैं। न तो आप इन अर्थों में नपुंसक हैं कि आप की काम-इन्द्रियां ही अत्यन्त निर्बल हों और न आप इन अर्थों में नपुंसक हैं कि आप काम-इन्द्रियों के दास हों।

अधिक विवाहों के विशेष कारण—पुरुषों की कमी—यदि बहु विवाहों में आप का वह पवित्र प्रयोजन था और वह जातीय एवं धार्मिक आवश्यकता थी, जो ऊपर वर्णन की गई है तथा जिसके बिना

इस्लाम का सारे संसार का धर्म्म होने का दाअ़वा ठीक नहीं रहता था, तो कारण अन्य भी कई थे। इन सब के अतिरिक्त, बड़ा कारण यह है कि इस समय तक मुसलमानों की संख्या बहुत थोड़ी थी। इन में से यदि कोई स्त्री विधवा हो जावे तो उसको काफ़िरों के हवाले तो किया नहीं जा सकता था। अब युद्धों के साथ ही एक बड़ा परिवर्तन इस इस्लामी सोसाईटी में यह आया कि पुरुष, लड़ाईयों में मारे जाते तो स्त्रियां विधवा रह जातीं। इनकी सुध-बुध लेने और रक्षा करने का क्या प्रबन्ध हो सकता था? फिर जो वासनएँ प्रकृति ने मनुष्य के अन्दर धरी हैं, उनका पूरा होना भी आवश्यक है। कई दूर की न सोचनेवाले देश के बुद्धिमान् लोग ऐसी अवस्थाओं में जब युद्धों के कारण या किसी अन्य कारण वश पुरुषों से स्त्रियों की संख्या अधिक हो जावे, तो केवल उनके रोटी कपड़े का प्रबन्ध कर देते हैं जिसका फल यह होता है कि जाति में भयानक बीमारी पैदा हो जाती है और कई बार जातियां इससे नष्ट हो गई हैं। परन्तु एक सुधारक, जो आचरण की

चिन्ता खाने पीने से भी अधिक करता है, कभी भी यह सहन नहीं कर सकता था कि निर्धन स्त्रियों के खाने पीने का प्रबन्ध करके उनको पुरुषों के भावों का अनुचित शिकार बना दे। अतः आवश्यक प्रतीत हुआ कि मुसलमानों को एक से अधिक स्त्रियों की आज्ञा दी जावे। यही कारण है कि नबी करीम के लगभग सारे के सारे विवाह युद्ध के समय में विधवा स्त्रियों से हुए। नहीं तो यदि आप के पवित्र हृदय के किसी कोने में काम-वासना का विचार होता, तो क्या आप को अविवाहित (कंवारी) स्त्रियां नहीं मिल सकती थीं? कौन सा मुसलमान पिता होता, जो नबी करीम का श्वसुर होने में गर्व न समझता? आप को कंवारे रिश्तों की कोई कमी नहीं थी, परन्तु क्योंकि आपका प्रयोजन अपने बन्धुओं की विधवाओं की रक्षा था, इस वास्ते आप ने पांच ऐसी स्त्रियों के साथ विवाह किया जिनके पति युद्धों में या अन्य प्रकार से मृत्यु को प्राप्त हो चुके थे। अतः न केवल एक उच्च धार्मिक प्रयोजन ही इन निकाहों में लक्ष्य था, अपितु इस के लिये अन्य भी बड़े २ धार्मिक कारण थे और

हज़रत साहिब को, अपितु सब मुसलमानों को बहु-विवाह करने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं था। अन्य उपायों द्वारा वह स्त्रियों के खाने-पीने का प्रबन्ध तो कर सकते थे, परन्तु स्त्री के अमूल्य कोप—उसके सतीत्व की रक्षा—बिना बहुत से विवाहों का तरीका धारण करने के और किसी तरह हो नहीं सकती थी।

राष्ट्रीय आवश्यकताओं की मांग—पुनः एक अन्य कारण यह था कि किसी किसी समय राष्ट्रीय आवश्यकताओं की भी यही मांग होती थी। हज़रत जूयरीया के साथ विवाह और उसके साथ ही क़बीला-बनी-मुसतलिक का मुसलमानों के साथ ऐसा संबंध हो जाना कि वह इनके किसी व्यक्ति को दास बना कर नहीं रख सकते; फिर भयानक शत्रुओं का सज्जन बन जाना, यह एक छोटा सा चमत्कार इस निकाह का था। अतः क्या यह प्रयोजन धार्मिक नहीं था? इसी प्रकार ही यहूदी अ़रब में मुसलमानों के भयानक शत्रु थे और आप ने इनका अन्तिम इलाज यही सोचा कि इनकी एक प्रतिष्ठित देवी के साथ विवाह करके, उनके साथ रिश्ते का संबंध पैदा कर लिया। चाहे इस अभागिनी

जाति ने इसके पीछे भी अपनी शरारतों को न छोड़ा, परन्तु आप ने अपनी ओर से कोई कसर नहीं छोड़ी। मैमूना भी एक अन्य क़बीले की स्त्री थी, चाहे उसके निकाह में आने के समाचार कुछ अलग हैं। परन्तु वह भी विधवा थीं और उनकी अपनी इच्छा हज़रत साहिब के साथ विवाह करने की थी। क्योंकि उनकी बहिन हज़रत अब्बास के घर में थीं, इस लिये इस निकट संबंध के कारण आप इन्कार न कर सके।

तलाक़ के नाम से कलङ्क को दूर करना—यदि आपने इतनी विधवा स्त्रियों के साथ विवाह किया, और उनको अपनी रक्षा में लिया, तो आप ने यह भी चाहा कि छोड़ी हुई स्त्री के नाम पर जो अप्रतिष्ठा लगी हुई है, उसको भी संसार से दूर कर दें। इस में कुछ सन्देह नहीं कि तलाक़, पसन्द न आने के कारण ही होती है और इस वास्ते छोड़ी हुई स्त्री कुछ कलंकित हो जाती है। फिर जहां मनुष्य का अपना कोई प्रियजन अथवा सज्जन ही अपनी पत्नी को तलाक़ दे देवे, तो वहां और भी अधिक कठिनाईयां होती हैं। अब हज़रत ज़ैद का जो सम्बन्ध हज़रत साहिब के साथ था, वह प्रकट ही है। लोग उसको

आप का पुत्र कहते थे, क्योंकि आप उस के साथ अत्यन्त प्रेम करते थे। आप ने स्वयं ही अपनी एक प्रिय, उच्च कुल की बीबी ज़ैनब के साथ उनका विवाह कर दिया था, किन्तु पति पत्नि में न बनी। ज़ैद ने तलाक़ देने का इरादा किया। हज़रत साहिब ने उसको रोका, जैसा कि कुरान शरीफ़ में स्पष्ट वर्णन आता है। अतः आप का इनको निकाह में लेना, यह प्रकट करने के लिए था कि यदि स्त्री एक पति के साथ सहमत न हो तो इसके कारण उसके नाम पर कोई कलंक का धब्बा नहीं आना चाहिए। आप ने उसका यह आदर सत्कार किया कि ऐसी छोड़ी हुई स्त्री को झटपट अपने निकाह में ले लिया। वह बहुत ही अनजान हैं, जो यह विचार करते हैं कि हज़रत ज़ैनब आप को इतनी पसन्द आईं कि इसके कारण ज़ैद को तलाक़ देनी पड़ी। ऐसी अवस्था होती तो ज़ैद मुसलमान ही नहीं रह सकता था; कहां यह बात कि ऐसा प्राण न्योछावर करने वाला रहता कि आप अपनी सेनाओं की अध्यक्षता उसके हाथ में देते। फिर ज़ैनब आपकी फूफी की लड़की थीं और बचपन से

ही आप इसको जानते थे और इसके हाल से परिचित थे। आपने ही इनका निकाह ज़ैद के साथ किया था, हालांकि इनका भाई उस समय भी चाहता था कि नबी करीम स्वयं इसके साथ विवाह करें। वह कौनसी बात थी कि एक बीबी के साथ आप उसकी कँवारपन की दशा में विवाह नहीं करते, जब कि वह स्वयं और उसका भाई भी इच्छुक है, और फिर जब वही स्त्री छोड़ दी जाती है तो उसके साथ निकाह कर लेते हैं? प्रत्युत यह निकाह इन अवस्थाओं में कितनी सफलता से निर्णय करता है कि काम-वासनाओं की इच्छा का लेश मात्र प्रवेश भी आप के विचारों में नहीं था। यदि विषय-वासनाओं की इच्छा होती तो जब ज़ैनब कुमारी थीं, तब उनके साथ निकाह करते, न कि तब जब कि वह छोड़ी जाकर कलंकित हो गईं। पहिली दशा में इन्कार करना और दूसरी में उनके साथ निकाह कर लेना साफ़ बताता है कि आप का प्रयोजन केवल यह था कि छोड़ी हुई स्त्री के नाम से लोग घृणा न करें क्योंकि साधारणतया मनुष्य की दशा में तलाक़ की आवश्यकता आ ही जाती

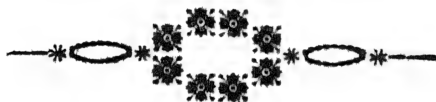
है। विधवाओं और छोड़ी हुई स्त्रियों के साथ निकाह करके आपने संसार में एक उच्च कोटि के सुधार की नींव रक्खी।

विजातीय स्त्रियों को बराबर की पदवी देना—स्यात् किसी के मन में यह विचार उत्पन्न होवे कि मारीआ क़बतीआ को नबी के हरम में क्यों प्रविष्ट किया गया ? इसके लिए तो कोई ऐसा कारण नहीं था। यह सत्य है, परन्तु इसके वास्ते एक और कारण था और वह यह कि मारीआ क़बतीआ एक अन्य जाति में से थीं और अ़रब की रहने वाली नहीं थीं। हज़रत साहिब की विवाहिता स्त्रियों में क़ुरैशी स्त्रियां भी थीं और अ़रब की ग़ैर क़ुरैशी स्त्रियाँ भी। सफ़ीआ बनी-इसराईल में से थीं, परन्तु फिर भी अ़रबी ही थीं। किन्तु आप ने यह भी बता दिया। कि आप दूसरी जातियों का इसी प्रकार आदर करते हैं, जिस प्रकार अपनी अ़रब जाति का। इसलिये जब एक अन्य जाति की स्त्री आई तो आपने इसका भी क़ुरैशियों के समान आदर सत्कार कर के इनको अपनी पत्नी बना लिया। और इस प्रकार अपने अनुयाईयों के लिये एक आदर्श स्थापित

किया कि अन्य जातियों का मान अपनी ही जाति की भांति करें और उनको मुसलमान स्त्रियों के समान अधिकार देने में कोई हानि न समझें। प्रत्युत अन्य जातियों की विदेशीय स्त्रियों के साथ विवाह करके अपने पवित्र तथा शुद्ध निष्कलङ्क जीवन का परिचय दे दिया, क्योंकि पुरुष के हाल स्त्री से छिपे नहीं रह सकते तथा ईसाई जाति की एक स्त्री को यह स्थान देकर समझो आपने अपने जीवन को इस जाति के समक्ष खोल कर रख दिया।

अतः इन सब निकाहों में आपका प्रयोजन, एक अत्युच्च धार्मिक प्रयोजन था। इससे भिन्न अन्य कारण भी ऐसे उत्पन्न हो गए कि इन अवस्थाओं में एक से अधिक स्त्रियों को निकाह में न लेना, स्त्री जाति को एक अत्यन्त निकृष्ट अवस्था में छोड़ देना था, जिसको सांसारिक लोग जो काम वासनाओं से प्रेरित होकर या अन्य पापाचारों के पीछे चलने वाले होते हैं, धारण करें तो करें, परन्तु वह पुरुष जो जन साधारण के आचार व्यवहारों के सुधार के लिये आया था, उसका ऐसा करना असम्भव था। उसके सारे काम

बुद्धिमत्ता से मनुष्यमात्र की भलाई पर निर्भर थे। उसने संसार की फिटकार को सहन कर लिया, किंतु सुधार के कार्य्य को न छोड़ा। उसने अपनी समस्त युवावस्था तथा बुढ़ापे का भी एक बड़ा भाग एक स्त्री के साथ गुज़ार कर बता दिया कि साधारण मानवी दशाओं में एक ही बीबी का सम्बन्ध एक पति के साथ होना चाहिये। फिर जब राष्ट्रीय और धार्मिक आवश्यकताएँ पड़ीं तो विवाहों की अधिकता पर आचरण करके यह भी दिखा दिया कि मनुष्यमात्र की भलाई के लिये तथा स्त्री की मान मर्य्यादा स्थिर रखने के लिये, उसके सतीत्व और प्रतिष्ठा के बचाव के लिये लोगों की फिटकार की पर्वाह नहीं करनी चाहिए।



हज़रत साहिब का स्वभाव और आचरण

"निश्चय ही तुम्हारे लिए ईश्वर के रसूल में पवित्र आदर्श है, उस के लिए जो ईश्वर और पिछले दिनों की आशा रखता है और ईश्वर को बहुत याद करता है।"

(अल अहज़ाब [illegible])

क़ुरानी स्वभाव की जीवित मूर्ति—हज़रत साहिब के आचरण और स्वभाव का चित्र आप का सब से अधिक भेद जानने वाली आप की पत्नी हज़रत आइशा सदीक़ा ने इन शब्दों में खैंचा है, "आपका स्वभाव क़ुरान था।" अर्थात् क़ुरान करीम की शिक्षा क्रियात्मिक रूप में आप के नित्य के जीवन में दृष्टि गोचर होती थी और आप क़ुरान शरीफ़ की शिक्षा स्वरूप थे। अतः जिस प्रकार क़ुरान शरीफ़ जीवन

के समस्त अंगों में और मानवी इन्द्रियों की सारी टहनियों के पालने के लिए उच्च कोटि की सदाचार संबंधी शिक्षा देता है, इसी प्रकार नबी करीम का जीवन हर प्रकार के सदाचार का पूर्ण मिलाप है। और एक मुसलमान के लिए यदि साहित्यक रूप में शिक्षा क़ुरान करीम में मौजूद है तो क्रियात्मिक रूप में हज़रत साहिब के जीवन में मौजूद है।

सादगी और आचरण—हर प्रकार के काम स्वयमेव कर लेना—आप के स्वभाव और आचरण की आत्मा सादगी और प्रेम थे। समझो, पवित्रता के साथ प्रेम और शुभ आचरण आपके स्वभाव में जड़ दिये गए थे। यह बातें प्रारम्भ से ही अर्थात् जन्म से ही आप के स्वभाव में थीं, कोई यत्न के साथ प्राप्त नहीं हुई थीं। आप हर प्रकार का काम अपने हाथ से कर लेते थे। यदि किसी याचक को कुछ देना होता तो अपने हाथ से उसके हाथ में देते। घरेलू (गार्हस्थ्य) कामों में अपनी स्त्रियों को सहायता देते थे। आप अपनी बकरियों का दूध दुह लेते, अपने कपड़ों की मुरम्मत कर लेते, अपनी जूती गांठ लेते, स्वयं घर में झाड़ू दे लेते, अपने ऊँटको

बांध लेते और उस के आगे घास डाल लेते थे । संसार के किसी काम को आपने नीच नहीं समझा। जब मस्जिद बनाई गई तो आप मज़दूरों के साथ टोकरी उठाते थे। शत्रु से रक्षा के लिए खाई खोदनी पड़ी, तो आप अपने सैनिकों के मध्य एक मामूली मज़दूर की भांति काम करते दृष्टि गोचर होते थे। आप बाज़ार से अपना सौदा स्वयं ख़रीद लाते, प्रत्युत दूसरों का भी ख़रीद कर ला देते थे। बात क्या किसी प्रकार के काम को भी-इस बात के होते हुए भी कि आप नबी भी थे और बादशाह भी-अपने लिए नीचा नहीं समझा और इस प्रकार बता दिया कि मनुष्य की सज्जनता या अप्रतिष्ठा का अनुमान कोई व्यवसाय (पेशा) नहीं, प्रत्युत उसका बर्ताव और उसकी सत्यता है। एक मोची, एक दर्ज़ी और एक मज़दूर जो टोकरी उठाता है, इसी प्रकार इस्लामी समाज का एक सदस्य है, जैसा कि एक व्यापारी, एक नौकर या एक राज्य-कर्मचारी।

बेतकल्लुफ़ी (निम्सङ्कोचता)-संकोच आप बिल्कुल नहीं करते थे। आप किसी पशु पर सवार होते तो दूसरे को पीछे बिठा लेते। क़ैस-बिन-साअ्द कहते हैं कि एक बार

आप साद को मिलने के लिए पधारे। जाती बार साद ने अपना गधा हजरत साहिब को सवारी के लिए दिया और कैस को कहा कि तू साथ जा। आप ने कैस को कहा कि मेरे साथ सवार हो जा, प्रत्युत आगे तू बैठ क्योंकि पशु का स्वामी इसका अधिक अधिकारी है और क्योंकि आपने यह शर्त लगा दी कि साथ जाना है तो साथ चढ़ कर चलो, नहीं तो वापिस चले जाओ इसलिये मैं साथ न गया। जब सभा में आते तो पसंद न करते कि सुहाबा आप के लिये खड़े हों। एक बार कहा कि मेरे लिये खड़े न हुआ करो, जिस प्रकार अ़जमी (दूसरे) लोग करते हैं और फ़र्माया, "मैं बन्दा (सेवक) हूं। जिस प्रकार बन्दे खाते हैं, खाता हूं। जिस प्रकार बैठते हैं मैं बैठता हूं।" एक बार एक पुरुष आप का हाथ चूमने के लिये आगे बढ़ा तो आपने अपना हाथ पीछे हटा लिया और फ़र्माया, "यह अ़जमी लोग अपने बादशाह के साथ करते हैं।" यदि दास भी आप को बुलाता तो आप चले जाते। खाने पर बैठते तो बिल्कुल निस्सँकोच होकर। हर प्रकार के लोगों

यहाँ तक कि दासों के साथ भी बैठ कर रोटी खा लेते। सभा में बैठते तो कई बार बड़ी देर तक चुपचाप ही बैठे रहते। कोई बात आ जाती तो कर लेते। हर समय बातें करते रहना, जिस प्रकार कि तकल्लुफ़ से लोग सभा को काम में लगाए रखने का प्रयत्न करते हैं, आप की तबीयत में नहीं था। जब चलते तो लोग आप के आगे और पीछे चलते। जब बैठते तो भी दूसरों के मध्य इस प्रकार मिले हुए कि कोई नव-आगन्तुक आप को पहचान भी नहीं सकता था और पूछने की आवश्यकता प्रतीत होती कि नबी करीम कौन से हैं? आप का घुटना अपने सुहाबा से आगे न बढ़ना। जब कोई दूसरा बात करता तो आप उसकी बात को काटते नहीं थे। जब लोग किसी बात पर हँसते तो आप भी उनके साथ सम्मिलित होते। आप इस प्रकार शनैः शनैः वार्तालाप करते थे कि आप के शब्द गिने जा सकते थे और इतनी द्रुत गति से चलते थे कि आप के साथ वालों को कई बार दौड़ना पड़ता था।

खान पान का स्वभाव—आप के भोजन करने के स्वभाव में इसी प्रकार सादगी मौजूद थी, जिस प्रकार

अन्य स्वभावों में । कोई वस्तु खाने के लिये सामने उपस्थित होती तो यदि उसको इसी योग्य समझते कि खा लें तो खा लेते । यदि इसमें कोई त्रुटि होती, जिसके कारण कि वह खाने के योग्य न होती, तो उसको न खाते, परन्तु इसका नक़्स न निकालते । खजूर, जौ, गन्दम, मांस, दूध, जो वस्तु अनुचित संकोच के बिना मिल जाती, उस को खा लेते । यदि आतिथ्य में कोई अच्छी वस्तु सामने रख देता तो वह भी खा लेते । यह संकोच नहीं करते थे कि इसे न खाएँ । हां ! साधारणतया एक ही खाना खाते थे । सफ़ाई पसंद थे, मैले बर्तनों में खाना पसंद नहीं करते थे, सड़ी हुई या बदबूदार वस्तु के समीप भी नहीं जाते थे । शहद आप को ख़ास तौर पर भाता था । सब्ज़ियों में कद्दू को बहुत पसंद करते थे, ऐसी वस्तुएँ जिनके खाने से मुंह से बू आवे, आप पसंद नहीं करते थे जैसा कि प्याज़, सिरका । खाने पर बैठते तो सहारा ले कर बैठते । यदि कहीं आप का आतिथ्य होता और आप के साथ और भी होते तो खाने से पहिले बिना झिझक घर वालों को कह देते

कि इतने पुरुष बुलाए हुए हैं और यह अधिक हैं। खाने से पहिले और पीछे हाथ धोते और मुंह को भली प्रकार साफ़ करते।

पहिरावा—आप के पहिरावे में भी सादगी थी। गांठा हुआ कपड़ा पहन लेने में कोई हर्ज न समझते। अच्छा कपड़ा मिल जाता तो उसको फेंक न देते, हां, रेशमी वस्त्र आप पुरुषों के लिए पसन्द नहीं करते थे। जिस कपड़े में जरा बू आने लग जावे, आप उसको झट उतार फेंकते, और कपड़े चाहे सादा परन्तु साफ सुथरे ही रखते थे, अंगूठी आप ने उस समय बनवाई और पहनी, जब बादशाहों को पत्र लिखने के लिये मोहर लगाने की आवश्यकता प्रतीत हुई और पीछे से यह अंगूठी आपने पहिने रक्खी।

आदतों में सादगी और सफ़ाई—अन्य आदतों में भी इसी प्रकार सादगी और सफ़ाई को एक ही स्थान पर इकट्ठा रखते थे। मकान, जिसमें रहते थे, बड़ी सादी प्रकार से बने हुए थे। कच्ची ईंटों और गारे के छोटे २ कमरे थे, इनके अंदर सामान कोई नहीं था। एक चारपाई, एक पानी का घड़ा और बस! यह उस

समय का वर्णन है, जब आप खैबर विजय कर चुके थे। खैबर की विजय से वापिस आते हुए हज़रत सफ़ीआ के साथ विवाह के पीछे विवाह का सहभोज किया तो सहाबा को कहा कि जो कुछ किसी के पास है, दस्तरख़्वान पर ले आए। सत्तू और खजूरें इकट्ठी हो गईं और यही विवाह का सहभोज था। आप के घरों में निरन्तर कई २ दिन आग नहीं जलती थी, केवल खजूरें खाकर और पानी पीकर गुज़ारा करते थे। संसार को आप एक सराय समझते थे। आप का वचन है कि "संसार में मेरी उपमा उस सवार जैसी है, जो चलते २ दोपहर के समय एक वृक्ष की छाया के नीचे कुछ विश्राम कर ले।" सांसारिक धन सम्पत्ति और सांसारिक सुखों के लिए कोई प्रेम आप के हृदय में नहीं था। दातुन का प्रयोग आप बहुत करते थे और दिन में कई कई बार मुंह साफ़ करते थे। जैसा कि अब पता लगा है कि मनुष्यों की अरोग्यता अधिकतया मुख की पवित्रता पर निर्भर है। शरीर को भी आप बहुत साफ़ रखते थे। डाढ़ी और सिर के केशों को कंघी करने और धोने से साफ़ रखते थे। सुगन्धि

का भी प्रयोग करते थे । आप के पास बैठने वाले यह साक्षी देते हैं कि कभी भी आपके शरीर में से अथवा कपड़ों में से या मुख में से दुर्गन्धि नहीं आई, प्रत्युत आप के पसीने में भी सुगन्धि थी। आप अपने शरीर तथा कपड़ों आदि को हर प्रकार से शुद्ध और पवित्र रखते थे । आवश्यक क्रियाओं से निवृत्त कर मिट्टी और पानी को वर्तते और हाथ पानी करने के पीछे हाथ को मिट्टी से रगड़ कर साफ करते । आप का अन्तरात्मा तो अत्यन्त पवित्र और केवल नूर (प्रकाश) ही नूर था, परन्तु आप का बाह्य शरीर सादगी के होते हुए भी अत्यन्त पवित्र था ।

सज्जनों तथा मित्रों के साथ सम्बन्ध—अपने मित्रों के साथ आप के सम्बन्ध उत्तम कोटि के प्रेम के थे । जब कोई पुरुष आपके साथ हाथ मिलाता तो आप उसका हाथ छोड़ने में पहल न करते । जिसके साथ मिलते, बहुत ही विकसित बदन से मिलते थे । जरीर बिन-अब्दुल्ला कहते हैं, " मैंने जब भी आप को देखा, हंसते हुए ही देखा अर्थात हर समय विकसित बदन देखा ।" आप अपने मित्रों तथा

साथियों के साथ प्रसन्नता में आकर खुली बातें, बिना किसी झिझक के कर लेते। पीरों के समान संकोच की चुप्पी धारण न करते और न बात करने में अपनी प्रभुता दिखाते। अपने सुहाबा के बच्चों को गोदी में लेते और उनके साथ प्यार करते। कई बार बच्चे आप पर मूत्र भी कर देते, परन्तु आपके माथे पर बल न पड़ता। अपने पास बैठने वालों को फ़र्माते कि मेरे पास मेरे किसी सज्जन की बुराई का वर्णन न करो, क्योंकि मैं चाहता हूं कि सब की ओर से मेरा हृदय साफ़ हो। आप अपने सुहाबा के साथ सलाम करने और हाथ मिलाने में पहिल करते थे। इनको बुलाते तो बड़े ही आदर मान से बुलाते या इनका प्यारा नाम लेते। जिस मनुष्य ने एक बार आपके साथ मित्रता डाली, आपने सदा उसकी मित्रता की क़दर की। हज़रत अबु-बकर के साथ आपका सम्बन्ध अत्यन्त प्रेम और मित्रता का था। हज़रत ख़दीजा के संयोग को उस समय भी याद करते थे, जब आपके घर में कई स्त्रियां विद्यमान् थीं। एक स्वतन्त्र किए गए दास ज़ैद को, जब उसके पिता ने अपने साथ चलने के लिए कहा, तो उसने

घर जाने से नबी करीम के साथ रहना अच्छा समझा। यदि आपके किसी सज्जन से कोई अपराध हो जाता तो आप इसे अनदेखा करते और संकेत द्वारा भी उसका अपराध उसको न जतलाते। हां! साधारण उपदेश में समझा देते कि किस प्रकार मनुष्य को ऐसी बातों से बचना चाहिए। झूट से आप बहुत घृणा करते थे और इसी प्रकार ही उस पुरुष से भी घृणा करने लग जाते जो झूट बोलता। किन्तु केवल अपराध के कारण, चाहे वह कितना ही बड़ा क्यों न हो, आप पकड़ नहीं करते थे। जब उहद के युद्ध-क्षेत्र में धनुषधारियों के स्थान छोड़ देने के कारण मुसलमानों पर घोर आपत्ति आई, आप को छः घाव लगे, आपके बहुत से प्रिय-मित्र भी मारे गए, तो आपने उस समय भी न इन आज्ञा भंग करने वालों का कोर्ट मार्शल किया और न इनको कोई दण्ड दिया, यहां तक कि झाड़ फिटकार तक नहीं डाली। जो लोग युद्ध के क्षेत्र से भाग गए, उनको जब वह तीसरे दिन लौट आए, केवल इतना ही कहा कि तुम बहुत दूर चले गए।

शत्रुओं के साथ भलाई—शत्रुओं तक के साथ आप इतनी उदारता करते कि इसका उदाहरण किसी अन्य मनुष्य के जीवन में नहीं मिल सकता। अब्दुल्ला-बिन-उब्बी जिसकी सारी आयु आप के साथ घोर शत्रुता रखने में व्यतीत हुई और कई बार यहूदियों को और काफ़िरों को मुसलमानों के विरुद्ध भड़काता रहा, जब मरा तो आप ने उसके भले के लिये प्रार्थना की और अपनी कमीज़ प्रदान की, जिसका उसको कफ़न डाला गया। मक्के के भयानक शत्रु, जिन्होंने ऐसे २ अत्याचार मुसलमानों पर और आप पर किए थे, जिनको सुनकर रोमांच हो आता है, जब अन्त में हज़रत साहिब इन पर विजय प्राप्त करते हैं, तो उनके अपराध पर उनको फिटकार तक नहीं डालते। ऐसी दशा में यदि कोई और विजयी होता तो मक्के के वासियों को शिक्षादायक दण्ड देता। परन्तु बीस वर्ष के निरन्तर अत्याचारों को, हां उन षड्यन्त्रों को, जो इस्लाम का चिह्न तक मिटाने के लिये किए गए थे, बिना किसी प्रार्थना के क्षमा कर दिया। शत्रुओं के छः छः हज़ार बन्दीजन कई अवसरों पर केवल उनके प्रार्थना करने पर स्वतन्त्र

कर दिये। हजरत आइशा कहती हैं कि आपने अपने व्यक्तित्व के लिए कभी किसी से बदला नहीं लिया। हां ! ऐसे लोगों को किसी समय दण्ड भी दिया, जिन्हों ने द्रोह करके इस्लाम का नाम तक मिटाना चाहा था। जहां क्षमा कर देने से सुधार हो जाता वहां आप क्षमा कर देते, परन्तु जहां दण्ड की आवश्यकता होती वहां दण्ड भी देते। उन शरारतियों को जो शराफत से नहीं टलते थे, दण्ड न देना पाप की सहायता करना था। आपकी उदारता, बिना जाति विशेष या धर्म विशेष के भेदभाव के काम करती थी। एक ईसाई, एक यहूदी या एक काफिर के साथ भी आप उसी तरह की विशाल हृदयता प्रकट करते, जिस प्रकार एक मुसलमान के साथ। मुसलमानों के दान को आपने मुसलमानों तक ही नहीं रक्खा।

न्याय—न्याय के बारे में आप ऐसे उन्नत सिद्धान्त पर स्थित थे कि कट्टर से कट्टर शत्रु और प्रिय से प्रिय बन्धु में कोई भेद नहीं करते थे। नबी होने से पहिले भी आप की न्याय-प्रियता, व्यवहार कुशलता तथा अमानत इतनी प्रसिद्ध थी कि लोग

अपने झगड़ों के निर्णय आप से कराते थे। जब मदीने में पधारे तो काफ़िरों और यहूदियों ने भी आपको अपने मुक़द्दमों और झगड़ों में न्यायाधीश माना। यहूदियों को इस्लाम के साथ जितनी शत्रुता थी, वह गत् पृष्ठों में प्रकट हो चुकी है, परन्तु एक यहूदी और एक मुसलमान का मुक़द्दमा आप के सामने आता है तो आप निर्णय यहूदी के पक्ष में करते हैं और इस बात की पर्वाह नहीं करते कि इस समय एक एक मुसलमान इस्लाम की रक्षा के लिए कितना अमूल्य सहायक है और किसी समय एक का पृथक् होना एक क़बीले का अलग होना है। आप ने अपनी सुपुत्री सैदुतनिसा—जो नारियों में देवी थीं—को कहा कि "कर्म्म ही तेरे काम आएंगे।" और कहा कि 'यदि फ़ातमा—मुहम्मद की सुपुत्री—चोरी करे तो उस के भी हाथ काटे जाएं।' स्वर्गारोहण से पहिले एक भारी सभा में आदेश किया कि "किसी का कुच्छ ऋण मुझ पर हो तो वह वसूल कर ले, किसी को मुझ से कुच्छ कष्ट पहुंचा हो तो वह बदला ले ले।"

बड़प्पन से संकोच—आप दूसरों के साथ व्यवहार

में किसी प्रकार का भी बड़प्पन धारण नहीं करते थे। लेने देने और अन्य समस्त मामलों में अपने आप को एक साधारण मनुष्य की भांति रखते थे। एक यहूदी का आप पर कुछ ऋण था, वह मांगने आया और बड़ी बुरी प्रकार से और रूखा होकर पेश आया और बोला कि आप बनी हाशम जब किसी से कुछ लेते हो तो देने में ही नहीं आते। यह मदीनेका समाचार है, जहां आप बादशाहकी हैसियत रखते थे। हजरत उमर को उसकी धृष्टता पर बहुत क्रोध आया, परन्तु आपने कहा, "हे उमर! योग्य यह था कि तुम हम दोनों को उपदेश देते। ऋण लेने वाले वाले को यह कि मांगते समय शान्ति के साथ काम लेना चाहिये और मुझे यह कि ऋण सज्जनता से वापिस देना चाहिए। पुनः उस के ऋण से अधिक रकम उसे दे दी। इस शुभ आचरण का यह प्रभाव हुआ कि वह मुसलमान हो गया। एक बार आप अपने मित्रों तथा बन्धुओं के साथ किसी बन में थे। भोजन तय्यार करने की आवश्यकता प्रतीत हुई तो सब के सुपुर्द एक एक काम कर दिया और कहा कि जलाने से लिए

लकड़ियां चुन लाता हूँ । बादशाह और आत्मिक गुरु होते हुए भी प्रजा के एक साधारण व्यक्ति की भांति काम करते थे। अपने आधीनस्थ और नौकरों के साथ भी ऐसा ही बर्ताव करते थे । हज़रत उनसे कहते हैं "मैं दस वर्ष आप की सेवा में रहा, मुझे आप ने कभी झिड़का तक नहीं।" नौकर से कोई अपराध हो जावे तो उसको बुरा भला नहीं कहते थे। आप ने अपने पास कोई दास नहीं रक्खा। जो आया उसको स्वतन्त्र कर दिया । आपने सारी आयु कभी किसी दास और स्त्री को नहीं मारा।

निर्धनों से सहानुभूति और दीन दुःखियों की सहायता—दान शीलता और विशाल हृदयता आप के स्वभाव में इतनी थी कि किसी इच्छुक को आपने कभी "नहीं" नहीं कहा । यदि पास कुच्छ न हो तो इस प्रतीक्षा में रहते थे कि कहीं से कुच्छ आ जाए तो उसकी इच्छा पूर्ति कर दी जावे । आप कष्ट तथा भूख सहन करके भी इच्छुक की इच्छा पूरी कर देते थे। संसार के धन ऐश्वर्य्य को पास रखना पसंद नहीं करते थे। स्वर्ग-वास होने से पूर्व कहा कि जो कुच्छ हमारे घर

में है वह निकाल कर ले आओ । और जो कुछ था, वह ईश्वरार्पण कर दिया । निर्धनों के साथ प्रेम आप के स्वभाव में था । अनाथों, निराश्रयों और विधवाओं के लिये आप रक्षा का स्थान थे और यह बात बाल्यावस्था से ही आप के स्वभाव में थी । कंगालों, बूढ़ों और निर्धनों के साथ ऐसा कोई सहानुभूति रखने वाला इन्सान नहीं हुआ । आप कहा करते थे कि जो मनुष्य अनाथों की रक्षा तथा संभाल करता है वह मेरे साथ इस प्रकार मिला हुआ है जैसे उंगली के साथ उंगली । कुरान शरीफ़ की एक सूरत में आया है कि जो व्यक्ति अनाथ को धुत्कारता है और दीनों को खाना खिलाने की प्रेरणा नहीं करता, वह धर्म को झुठलाता है । कुरान शरीफ़ अनाथों, निर्धनों और दीनों से सहानुभूति के उक्त नियमों से भरा पड़ा है । आप पर जो बड़ी से बड़ी विपत्ति आती, उस को सहज में ही सहन कर लेते । किन्तु दूसरों के दुःख पर आप का मन बहुत पिघलता था । जिस मनुष्य पर अत्याचार होते देखा, आप उसी की सहायता पर खड़े हो गये । बच्चों और स्त्रियों के

अधिकार आप ने पुरुषों पर स्थापित किए । दासों के अधिकार, स्वामियों पर स्थापित किए । आज्ञा मानने वालों के अधिकार, आज्ञा चलानेवालों पर और प्रजा के अधिकार राजा पर स्थापित किये । परमात्मा ने आप के सीने में एक अद्भुत मन प्रदान किया था कि जिसमें से परमेश्वर की सृष्टि के साथ सहानुभूति जोश मार मार कर फूटती थी। बच्चों के साथ आप को बहुत प्रेम था । मार्ग में चलते चलते बच्चों के साथ प्यार करते। किसी मित्र की बीमारी का समाचार सुनते तो झट पूछने के लिए जाते और तसल्ली देते । कोई मर जाता तो उसके जनाज़ा के साथ जाते ।

पशुओं पर दया—केवल दीन दुःखियों के साथ ही आप को सहानुभूति नहीं थी, प्रत्युत ईश्वर की बेज़बान सृष्टि के लिये भी आप के भीतर दया का भाव भरा पड़ा था । अरब देश में जो अत्याचार पशुओं पर होते थे, उनको समाप्त किया । एक स्त्री के संबंध में कहा " कि वह नरकों में है क्योंकि वह बिल्ली को भूखा बांध छोड़ती थी ।" पशुओं का आपस में लड़ाना और निशाना करना

भी बन्द किया । एक सुहावी ने एक पक्षी का अण्डा उठा लिया तो आप ने फ़र्माया, "इसको वहीं रख दो।" एक ने किसी पक्षी के छोटे २ बच्चे झाड़ी में से निकाल लिए, आप ने आज्ञा देकर वहीं रखवा दिए । निर्बल पशुओं को देखते तो आदेश करते कि बेज़बानों के बारे में परमात्मा से डरो ।

अतिथि सेवा—अतिथि सत्कार का शुभ गुण भी आप में पराकाष्ठा को पहुंचा हुआ था । अपने अतिथि की हर प्रकार की सेवा आप करते थे । जितना स्थान आप के घर में होता उतने अतिथियों को रख कर शेष को सुहाबा पर बांट देते । वह भी अपने गुरू के रंग में रंगे हुए थे। और कई समयों पर ऐसा हुआ है कि आप भूखे सो रहे हैं और घर में जो खाना है, वह अतिथि को खिला दिया है ।

नम्रता—आपने कभी किसी को कुवचन नहीं कहा, अपितु सख्त या कड़वे वाक्य भी किसी को नहीं कहते थे । जिसको समझाना होता अति नम्रता

और प्रेम के साथ समझाते। साथ ही दूसरों को भी कड़वा बोलने से रोकते। यहूदी आप को "असलाम अलैकम" के स्थान पर "असाम अलैकम" कहा करते थे अर्थात् तेरे पर मौत (मृत्यु) आवे (तुम मरो)। बीबी आइशा ने सुना तो झट बोल पड़ीं, ईश्वर तुम्हें मार दे, तुम पर मौत आवे। आप ने कहा, "आइशा! ईश्वर कड़वे वचन पसन्द नहीं करता।"

धार्मिक, विश्वासी और सत्यवादी—आप का सिदक (विश्वास) और सत्यता सारे अरब में प्रसिद्ध थी। यहां तक कि आप का नाम ही "अल अमीन" (धार्मिक और सत्यवादी) पड़ गया था। अबु-जहल की अपनी मानी हुई बात है, जब उस ने नबी करीम को कहा कि हम आप को झूठा नहीं कहते। प्रत्युत उस सन्देश को झूठा कहते हैं, जो आप लाए हैं। नजर इबनुल हरस ने आप अपने साथियों को जब वह हजरत साहिब के विरुद्ध सलाहें कर रहे थे, इस प्रकार दोष लगाया, कि "मुहम्मद तुम में से एक लड़का था, सब से प्रिय, वचन में सब से सच्चा धर्म्म में सब से बढ़ कर

और जब वह बूढ़ा हो गया और तुम्हारे पास कुछ संदेश लाया तब तुम उसको छलिया कहते हो। ईश्वर की सौगन्ध वह छलिया नहीं। आपने जो प्रतिज्ञा की, उसको बड़ी २ हानियां सहन करके भी पूरा किया। काफिरों के साथ जो प्रतिज्ञा हुदैबिया में हुई कि मक्के के निवासियों में से कोई मुसलमान होकर आपके पास आवे तो उसको वापिस कर देंगे, उसको आपने ऐसे ऐसे हाल में पूरा किया कि मुसलमानों की आंखों में लहू उतर आया। पवित्रता और परहेज़गारी में भी आप ने पूरा नमूना बनाया। पच्चीस वर्ष की आयु तक विवाह नहीं किया, परन्तु आप की पवित्रता पर कोई भी व्यक्ति छोटे से छोटे धब्बे का चिह्न भी नहीं बता सकता।

क्षमा—क्षमा का गुण आप में इतना पूर्ण होकर प्रकट हुआ कि संसार में इसका कोई उदाहरण नहीं मिलता। आप की कुरान में यह आज्ञा दी जाती है, जिसकी व्याख्या यह बताई गई कि ईश्वर तुम्हें आदेश करता है कि जो मनुष्य तेरे साथ निर्दयता का बर्ताव करता है उसके साथ दया का व्यवहार कर। जो पुरुष तुझ से छीनता है, उसे तू दे और

जो पुरुष तुझ पर अत्याचार करता है, उस को तू क्षमा कर" । मौखिक क्षमा की शिक्षा देने वाले बहुतेरे हो गुज़रें हैं, परन्तु इसको समय पड़ने पर कार्य्य रूप में परिणत करने वाले बहुत कम हैं । उहद के युद्ध में आपके पवित्र दान्त शहीद हो गए, मुख ज़ख्मी हो गया और आप गिर पड़े । कई सुहाबा ने कहा, "हे नबी करीम ! उन लोगों को जिन्हों ने रब्ब के रसूल को इतना दुःख दिया है, शाप दो ।" आप ने फ़रमाया कि "मुझे फिटकार डालने के लिए नहीं भेजा गया, अपितु शान्ति और दया पहुंचाने वाले बना कर भेजा गया है । हे ईश्वर ! मेरी जाति को बुद्धि प्रदान कर, क्योंकि वह अनजान है ।" हृदय में कितनी दया ठाठें मार रही है कि अत्यन्त कष्ट झेलते हुए भी केवल शाप से ही चुप नहीं साधी, प्रत्युत अपने शत्रुओं के लिए क्षमा की प्रार्थना करते हैं । एक बार एक अरबी ने आप के गले में चादर डालकर जोर से खैंचा । जब आप ने उस को कहा कि "क्या तुझसे इसका बदला लिया जावे ?" तो उसने कहा कि "नहीं, इस लिए कि आप बुराई का मुक़ाबिला, बुराई से नहीं करते ।" मक्के की विजय

में जो क्षमा का नमूना आप ने दिखाया, अत्यन्त ज़ोर में जो नर्मी उन शत्रुओं के साथ की जिन्हों ने मुसलमानों को दुःख देने में, उन को क़त्ल करने में, इस्लाम का चिह्न तक मिटाने में और स्वयं हज़रत साहिब को मार डालने में कोई कसर बाक़ी नहीं रखी थी आश्चर्य है। ऐसा क्षमा किया कि उन से पूछ-ताछ तक भी नहीं की। अबू सुफ़ियान जैसा शत्रु जब सामने आया तो उसके किसी कर्म पर पकड़ नहीं की, चाहे वह इस्लाम का समूल नाश करने के लिए पूरा ज़ोर लगा चुका था और उहद के युद्ध में हज़रत हमज़ा के शव का अनादर भी इसी की स्त्री द्वारा हुआ था। प्रत्युत इस प्रकार फ़रमाया कि "हे अबू सुफ़ियान! तुम पर क्या अफ़सोस! अभी समय नहीं आया कि तू जान ले, परमात्मा से भिन्न भक्ति के योग्य अन्य कोई नहीं!"

लज्जा—लज्जा आप में इतनी थी कि सहाबा कहा करते थे कि हज़रत साहिब पर्दे में बैठने वाली कुंवारी लड़कियों से भी अधिक लज्जाशील हैं। क़ुरान शरीफ़ में साक्षी मौजूद है कि जब कई लोगों की मूर्खता के कारण आप को महान् कष्ट पहुंचता तो आप उनको

कुच्छ न कहते। "इस बात से नबी को दुःख होता है, परन्तु वह तुम्हारी लज्जा करते हैं।" नाम लेकर किसी का दोष न बताते, प्रत्युत इस प्रकार समझा देते कि उन लोगों का क्या हाल है, जो इस प्रकार करते हैं। एक पुरुष पर कुच्छ रंग देखा तो दूसरों को कहा, "भला होवे कि कोई इसको समझा दे कि वह इसको धो डाले।" आपने लज्जा को धर्म्म का एक अंग स्थापित कर दिया, किन्तु धर्म्म के मामले में बड़े गैरत वाले थे। धर्म्म के विरुद्ध कोई बात देखते तो रोक देते। जब आप के सुपुत्र इब्राहीम ने स्वर्गारोहण किया, तो उसी दिन सूर्य्य को ग्रहण लगा, ऐसा कि बिल्कुल अन्धेरा हो गया। लोगों ने परस्पर बातें करनी शुरू कीं कि हज़रत इब्राहीम के चल बसने के कारण सूर्य्य को ग्रहण लगा है। आपने व्याख्यान दिया और कहा कि सूर्य्य को ग्रहण किसी के जीने या मरने के कारण नहीं लगता। हां! यह परमात्मा की ओर से चिह्न हैं। इस प्रकार से वहमों और भ्रमादि को जड़ से काटा।

दया-कृपा—आप के उच्चकोटि के प्रेम, क्षमा

और कृपा की साक्षी कुरान करीम के इन शब्दों में मिलती है कि आप को दयालु और कृपालु का नाम दिया गया है । आप को अपनी जाति का बड़ा ध्यान रहता था, कि आप के किसी उपदेश के साथ उन पर कोई ऐसा बोझ न हो, जिसको वह सहन न कर सकें । आपने अपनी जाति के लिए प्रार्थनाएँ भी बहुत की हैं और अन्तिम ज़माने में जो आपत्तियाँ उन पर आने वाली थीं, उनका चित्र भी खींच दिया है और उनको इन [illegible] में आश्वासन भी दिया है । अपनों पर दया का क्या अनुमान हो सकता है, जब दूसरों के लिए इतनी कृपा हो कि परमात्मा स्वयं कहता है कि क्या तू अपने आप को इस गम में मार लेगा कि लोग सत्य को नहीं मानते ? जिन लोगों के सम्बन्ध आपके सज्जनों मित्रों के साथ हुए, या इन पर कोई उपकार उन्होंने किया, उनके उपकारों को नहीं भुलाया । बीबी ख़दीजा के साथ जिन स्त्रियों के कोई प्रेम-सम्बन्ध थे, अन्तिम आयु तक उन को उपहार भेजते रहे । हबश के बादशाह नज्जाशी की ओर से जब एक डेपूटेशन आया तो आप अपने

हाथों से उनकी सेवा करते । जब सुहाबा ने विनती की कि " हे ईश्वर के रसूल ! हम हर प्रकार सेवा के लिए तय्यार हैं ।" तो कहा कि इन लोगों ने मेरे सुहाबा का मान किया है, इस लिए मैं चाहता हूं कि मैं स्वयं उन की सेवा करूं । हातमताई की सुपुत्री बन्दियों में आई तो आप ने फ़र्माया कि " ऐसे दानशील मनुष्य की सुपुत्री क़ैद में नहीं रह सकती ।" और फिर उस के कारण सब बन्दियों को स्वतन्त्रता प्रदान की ।

बड़ों और छोटों का आदर—बड़ों और छोटों का एक समान आदर करते थे । यदि एक ओर अपनी दूध-माता और दूध-बहन के लिए खड़े हो जाते और अपनी चादर उनके बैठने के लिए बिछा देते तो दूसरी ओर अपनी सुपुत्री की भी उसी प्रकार प्रतिष्ठा करते । आप की शिक्षा में है कि " अपनी सन्तान का मान करो ।" जब माता पिता सन्तान का आदर करते हैं तो सन्तान भी अवश्य ही उनका आदर करती है । माता का इतना आदर सिखाया कि फ़र्माया " स्वर्ग माता के चरणों के नीचे है ।" सादा और बे-झिझक होते हुए भी प्रत्येक

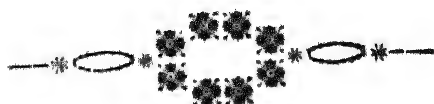
पुरुष के साथ उसकी अवस्था और पद के अनुसार बर्ताव करते।

मृदुता, नम्रता, और वीरता—मृदुता, और नम्रता के गुणों में भी आप इतने बढ़े हुए २ थे, परन्तु इसके होते हुए भी वीर थे । शत्रु का भय कभी आप के हृदय में नहीं पैठा । जब मक्के में आप का वध करने के षड्यन्त्र रचे जा रहे थे, तब भी आप स्वतन्त्रता के साथ दिन को और रात के अन्धेरे में अकेले निकलते थे । मक्के से सब सज्जनों को विदा कर दिया और स्वयं शत्रुओं के अन्दर अकेले रहे । गौर की कन्दरा में जब शत्रु सिर पर था, तब भी आपके मुख से यह वाक्य निकला, "कोई चिन्ता की बात नहीं।" युद्ध-क्षेत्र में जब सारी सेना [illegible] गई तो आप ने अत्यन्त सुशीलता से आवाज देकर सब को एकत्रित कर लिया । एक अन्य अवसर पर जब सेना भाग उठी तो आप अकेले ही शत्रु की ओर बढ़ रहे थे और ऊँचे स्वर से कह रहे थे कि "मैं अल्लाह (ईश्वर) का रसूल हूँ।" डाके का भय हुआ तो आप सब से पहिले बिना काठी के घोड़े पर चढ़ कर पता लेने के लिए बाहिर निकल गए। किसी

सफ़रमें अकेले वृक्ष के नीचे लेटे हुए थे कि शत्रु सिर पर आ पहुंचा और तलवार खैंचकर और आप को जगा कर कहने लगा, कि अब कौन तुम्हें मेरे हाथ से बचा सकता है ? आप किञ्चिन्मात्र भी नहीं घबराए और कहने लगे "ईश्वर।" परमात्मा की लीला, तलवार उसके हाथ से गिर पड़ती है। आप उसी तलवार को उठाकर उस से वही प्रश्न पूछते हैं। इस पर वह दीनता प्रकट करता है और आप उस की अवस्था में छोड़ देते हैं।

दृढ़ता—दुःखों और कष्टों में जो मज़्बूती और दृढ़ता आपने दिखाई है, उस पर आज आपके शत्रु जीवनी-लेखक भी वाह वाह कर उठते हैं। बड़ी से बड़ी निराशा-जनक अवस्था में भी निराशा आप के पास नहीं फटकी। और चारों ओर से असफलता के दृश्यों ने एक पल के लिए भी आप के अन्तिम सफलता के भरोसे को नहीं हिलाया। आप एक पर्वत के समान थे और भयानक से भयानक कष्ट भी आप को अपने स्थान से नहीं हिला सके। आप कारणों से काम लेते थे और फिर परिणाम को ईश्वर पर छोड़ देते थे और कभी भी इस बात से नहीं घबराते थे

कि परिणाम आशा से उलट निकला। उहद के मैदान में इतने कष्ट सहन करके अगले ही दिन शत्रु का पीछा करने के लिए उद्यत हैं। मक्के में जब चारों ओर असफलता दिखाई देती है, मित्र-बन्धु बिछड़ जाते हैं, लोग सत्य का सन्देश सुनने से इनकार कर देते हैं, उस समय भी आप का विश्वास अन्तिम सफलता पर उसी प्रकार दृढ़ है और असफलता का भय भी आप के मन में नहीं आता।



३२—" संसार के सुधारकों में आप को उच्च करने वाली बातें "



" और हमने तुझे समस्त संसार के लिए दया स्वरूप बनाकर भेजा है ।"

(अल अम्बीआ—१०७)

अद्वितीय सफलता—संसार में बहुत से सुधारक आए । प्रत्येक देश और प्रत्येक काल में आए । परन्तु कई बातें हैं, जो हज़रत मुहम्मद साहिब को इन सब से ऊँचा दर्शाती हैं । इन बातों में से सब से पहिली बात आप की चकित कर देने वाली सफलता है, जिस को शत्रु और मित्र सभी मानते हैं । ऐनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका (Encyclopedia Brittanica) में 'क़ुरान' नामिक शीर्षक के नीचे जो

लेख है, उस में तीसरे निर्भय स्पष्ट शब्दों में हज़रत साहिब सम्बन्धि यह बात मानी हुई मौजूद है, कि "आप संसार के सब नबियों और धार्मिक पुरुषों में से अधिक सफल व्यक्ति हैं।" यह मानना बिना कारण के नहीं। यह नितान्त सत्य है कि संसार में कोई सुधारक नहीं आया, जिसने अपनी जाति को ऐसी गिरी हुई दशा में देखा, जिस में हज़रत साहिब ने अरब को देखा। यह लोग न तो धर्म के सत्य सिद्धान्तों को जानते थे, न राष्ट्रीय, न सभ्यता, न रहने सहने के नियमों को। न इन में विद्या थी, न बाहिर के लोगों के साथ इन के सम्बन्ध थे, न इन में कोई एकता या मेल मिलाप था, न यह एक जाति की हैसियत रखते थे। बात क्या? प्रत्येक ओर से इस जाति का सुधार होने वाला था और बड़ी भयानक अविद्या में फंसी हुई थी। केवल यही नहीं, प्रत्युत यहूदी अपनी पूरी शक्ति इनके सुधार में लगा चुके थे, ईसाई सारा बल लगा कर ऐसे थके और ऐसे असफल हुए कि किसी एक बात में भी देश का सुधार न कर सके। हनीफ़ियों का आन्तरिक आन्दोलन भी उत्पन्न होकर समाप्त हो चुका

तो हज़रत साहिब प्रकट हुए और थोड़े से वर्षों में एक ऐसा परिवर्तन करके दिखा दिया कि अरब देश के पृथिवी आकाश बदल गए। बुरी से बुरी मूर्तिपूजा और भ्रम पूजा से निकाल कर एकता के इतने ऊँचे से ऊँचे स्थान पर पहुंचा दिया, जिस पर न इस से पहिले कोई जाति पहुंची, न आगे पहुंच सकेगी। फिर इस एकता के लिये इतना जोश कि संसार के देशों में चारों ओर निकल गए और दूर २ तक सत्य का सन्देश दिया। ईश्वर की भक्ति में इन लोगों का स्थान सारे सन्तों और संसार से मुख मोड़ लेने वालों से बढ़ कर था। इसलिये कि वह दिन आजीविका (रोज़गार) में व्यतीत करते हुए "अल्लाहो अकबर" की ध्वनि सुन कर मस्त हुए हुए ईश्वर की सेवा में जा खड़े होते, और रातें जागते हुए ईश्वर भक्ति में लगे रहते। वह संसार में होते हुए भी संसार से निर्लेप रहते थे। अतः जो स्वाद और जो नम्रता इन को भक्ति में प्राप्त होती थी, वह किसी एकान्त वासी साधु को प्राप्त नहीं हो सकती। फिर यदि आत्मिक दृष्टि से भक्तिके उच्च से उच्च स्थान पर खड़े थे, तो सांसारिक

दृष्टि से भी इस पुरुष ने ...

गए थे, जहां मनुष्य पहुंच ...

संसार के अधिनायक ...

उनके सामने इस प्रकार ...

थे ही कुन्द नहीं ...

थे, प्रत्युत विनय से ...

स्थापित किया कि ...

हुए भी बालक ...

हानि न पहुंचा ...

बड़े मस्त और ...

हुए और इन ...

में उन्हों ने ...

पवित्रता और विनय के ...

शिखर पर पहुंचाया कि ...

विद्या के प्रकाश से ...

मुहम्मद साहिब ने ...

जिस से बढ़ कर ...

विचार में नहीं आ सकता ...

धार्मिक उन्नति के ...

से आगे कोई स्थान नहीं और यह ...

वर्ष के भीतर हो गया । इसमें यह भी बताने का प्रयोजन था कि आप की शिक्षा मनुष्य रूपी वृक्ष के अङ्ग रूपी समस्त टहनियों पर स्थित है और संसार का कोई रोग नहीं, जिसका इलाज आप की शिक्षा में नहीं । जिस प्रकार सबसे बड़ा चिकित्सक वह नहीं, जो सब से बड़ी बड़ हांके, प्रत्युत वह है जो सबसे अधिक रोगियों को अच्छा करे । इसी प्रकार संसार के सुधारकों में से सब से बड़ा वह नहीं, जैसा कि कईयों का विचार है, जो सब से बड़ा दाअ़वा करे, प्रत्युत वह है जो सबसे अधिक सुधार करे । और यह वह बात है, जो हज़रत मुहम्मद साहिब को संसार के सब नबियों और सुधारकों का शिरोमणि बनाती है ।

सब जातियों के सुधार के लिए खड़े होना— संसार में प्रत्येक नबी एक जाति के सुधार के लिए आया । वह प्रकाश और उपदेश लाया, किन्तु केवल एक विशेष जाति और एक विशेष देश के लिए । उसके संसार में आने का प्रयोजन मनुष्यों के हृदय पवित्र करना था, किन्तु केवल उनके, जिन की ओर वह भेजा गया । परन्तु हज़रत साहिब

सारे संसार की शिक्षा के लिए भेजे गए। वह प्रकाश और शिक्षा, जो आप को दी गई, एक जाति के लिए नहीं थी, अपितु संसार की सब जातियों के लिए। मन को शुद्ध करने के लिए आप की शिक्षा का क्षेत्र इतना खुला हुआ है कि इसने सारे संसार को अपने में सम्मिलित कर लिया। यही वह बात है, जिस की ओर इस अध्याय की प्रारम्भिक आयत में ध्यान दिलाया गया है। इसी प्रकार की अन्य आयतों के साथ कुरान शरीफ भरा पड़ा है। "ईश्वर को यही अच्छा लगा कि जिस समय मानव सन्तति पृथक २ देशों में भिन्न भिन्न पड़ी हुई थी और जातियों के परस्पर मेल मिलाप के साधन बहुत कम थे, इनकी आवश्यकताएँ और इनके विचार भी सीमित थे, तो परमपिता परमात्मा ने प्रत्येक जाति के सुधार के लिए एक नबी भेज दिया।" कई जातियों में कई कई नबी भेज दिये। इन नबियों ने अपने अपने देश कालानुसार इन जातियों का सुधार किया। परन्तु जिस प्रकार वह जाति सीमा के भीतर थी, इसी प्रकार उनकी शिक्षा भी उस परिधि के अन्तर्गत थी और न केवल स्थान के कारण ही प्रत्युत काल

के कारण भी उनकी पवित्रता की शक्ति का कार्य्य-क्षेत्र एक स्थान पर पहुंच कर समाप्त हो जाता, जहां आकर दूसरे नबी की आवश्यकता प्रतीत होती। परन्तु जहां इस उपाय से परमात्मा ने सारे संसार की आत्मिक तृप्ति के लिए पर्याप्त सामग्री जुटा दी, उसके साथ ही मनुष्यों की संकीर्ण हृदयता के कारण प्रत्येक जाति में यह विचार उत्पन्न हो गया कि परमात्मा ने अमुक विशेष जाति को ही अपनी कृपा के लिये चुन लिया है, और दूसरी किसी जाति को इस दान का भाग नहीं मिला। अतः एक भयानक जातीय विरोध उत्पन्न हो गया और देशीय सीमा-करण ने प्राणीमात्र के परस्पर संबंधों के भीतर ऐसे प्रतिबन्ध लगा दिए कि प्रत्येक जाति अपने से भिन्न दूसरों को तुच्छ समझने लगी। इस लिये परमात्मा ने इस प्रकार निर्णय कर दिया कि सारे नबियों के अन्त में एक ऐसा नबी भेजे, जो सब जातियों के लिये हो और जिस की पवित्र शक्ति जिस प्रकार स्थानीय विचार से सारी पृथिवी के आस-पास हो, उसी प्रकार काल के विचार से उसका घेरा प्रलय (क़यामत) तक खुला होवे, इस लिए जब

जातीय नबियों का सेत्र हज़रत ईसा पर आकर समाप्त हो गया तो हज़रत ईसा को भी यही कहना पड़ा कि मैं बनी इसराईल की गुम हुई हुई भेड़ों से भिन्न अन्य किसी की ओर नहीं भेजा गया। तब जगत् दयालु श्री जगत् गुरु मुहम्मद जी महाराज संसार में प्रकट हुए। पिछले नबियों का उदाहरण ऐसा था, जिस प्रकार एक अन्धेरी रात में भिन्न २ गृहों में भिन्न २ दीपकों का प्रकाश हो। इनका अस्तित्व अन्धेरे में प्रकाश देने वाला एक दीपक था। परन्तु जिस प्रकार दीपक एक कमरे में ही प्रकाश कर सकता है, उसी प्रकार उनके प्रकाश, उनकी शिक्षा और उन की पवित्रताके बल का घेरा भी उस जातिकी सीमा में ही था। परन्तु हज़रत मुहम्मद साहिब का प्रकाश सूर्य्य का चढ़ना है, जिस के साथ संसार की चारों दिशाओं में प्रकाश पहुंच जाता है, जिस की किरणें पृथिवी के सब कोनों को प्रकाशित कर देती हैं। संसार के सब नबी चमकते हुए दीपक थे, परन्तु रसूल करीम चमकते हुए सूर्य थे। दीपक का प्रकाश एक मकान की सीमा तक होता है और कुछ समय के पश्चात् वह समाप्त हो जाता है। यही

दशा इन नबियों की शिक्षा की थी। सूर्य्य सारे संसार को प्रकाशित करता है और इसकी दीप्ति प्रलय पर्यन्त इस विश्व को प्रकाशित करती रहेगी। यही अवस्था रसूल करीम की शिक्षा की है। अतः यह दूसरी बात है, जो आपको संसार के सुधारकों में उन्नत बनाती है।

मानव सन्तति का मिलाप—संसार में कोई उन्नति बिना किसी प्रतिबन्ध (पाबन्दी) लगाने के सम्भव नहीं। इस वास्ते प्रत्येक जाति ने अपनी जाति की उन्नति को ही अपना मुख्य मन्तव्य नियत किया है। परन्तु यदि हजरत साहिब भी इन लोगों के पीछे ही चलते तो आप के आने का वास्तविक उद्देश्य पूर्ण नहीं होता था। आपके आने के बहुत से प्रयोजनों में से एक प्रयोजन जातीय और देशीय प्रतिबन्धों को तोड़ कर एक विश्व-व्यापी धर्म्म की नींव रखना और एक सार्वजनिक प्रेम-लड़ी का आरम्भ करना था। यदि विचार किया जावे तो जातीय और देशीय मतभेद बनावटी भेद थे। अतः एक प्राकृतिक धर्म्म बनावटी मतभेदों को स्थित नहीं रख सकता था। यदि अन्य धर्मों का उद्देश्य एक एक मनुष्य को इकट्ठा करके एक जाति बनाना

था तो इस्लाम का ध्येय जातियों को एकत्रित करके मनुष्य सन्तान की एकता उत्पन्न करना था। अतः इस्लाम की शिक्षा ने जातीय भेद भावों को तोड़ कर इस प्रकार मनुष्य सन्तान की एकता की नींव रक्खी है जिस प्रकार भिन्न २ धर्मों ने व्यक्तित्व के भेद भाव को तोड़ कर जातीय एकता और मिलाप की नींव रखी थी। यह भी एक बड़ा काम था, जो पहिले नबियों के हाथों किया गया, परन्तु यह काम उससे बहुत ही बड़ा है। इसकी कठिनाइयों का कोई अनुमान नहीं हो सकता। बेशक व्यक्तिगत मत भेदों को तोड़ कर जातीय एकता पैदा करना एक बड़ा भारी काम है, किन्तु जातीय मतभेदों को दूर करके मनुष्य सन्तान की एकता स्थापित करने के समक्ष तुच्छ है। यह तीसरा विशेष गुण है, जो नबी करीम को सारे नबियों में से ऊँचा करता है कि वह जातीय एकता और जातीय उन्नति का भेद सिखाने आए और यह मनुष्य सन्तान की एकता तथा मानवी वंश की उन्नति के उच्च भेद को प्रकट करने के लिये प्रकट हुए।

मनुष्य स्वभाव की सारी शाखाओं की शिक्षा—चौथी विशेष बात जो आप को सब सुधारकों

में उच्चासन प्रदान करती है। यह है कि जहां प्रत्येक नबी मनुष्य स्वभावों की एक विशेष शाखा का पालन करने के लिए आया और उसके अस्तित्व में मनुष्य के आचरण का कोई एक विशेष पक्ष प्रकट हूआ, वहां हज़रत मुहम्मद साहिब ने मनुष्य के स्वभावों की समस्त शाखाओं की ऐसी पूर्ण पालना की और आप के पवित्र अस्तित्व में मनुष्य आचरण के समस्त पक्ष ऐसे प्रकाशित हुए कि आप के पीछे किसी नबी की आवश्यकता संसार में न रही। बनी इसराईल की लड़ी में कितने ही नबी आते हैं, किन्तु प्रत्येक व्यक्ति मनुष्य-स्वभाव की एक विशेष शाखा का पालन करने के लिए, मनुष्य जीवन के लिए एक विशेष पक्ष में उदाहरण स्वरूप बन कर, परन्तु मुहम्मदी उम्मत में एक ही आता है और वह उन पहिले से आए हुए नबियों में से सब से बढ़ कर, हर एक पक्ष में स्वयं ही उदाहरण स्वरूप है। वह मूसा की वीरता, हारून की मृदुता, यशूह के सेना नेतृत्व, अयूब का सन्तोष, दाऊद का सेनानीपन, सुलेमान का वैभव, यहय्या की सादगी और मसीह की नम्रता तथा सरलता सब को, प्रत्युत प्रत्येक से

बढ़ कर अपने अन्दर क्षमा रखता है। यदि मसीही जहाँ
के मुख्य हज़रत ईसा प्रेम को प्रकट करते हैं और
इसके अन्तिम नबी हज़रत ईसा प्रेम के प्रकट करने
वाले हैं तो हज़रत मुहम्मद साहिब इन दोनों से
बहुत बढ़ कर पूर्णता सहित सज्जनता और सुन्दरता
तथा प्रेम का भण्डार हैं। यदि आप पशु समान
तथा आलस्य सहित जातियों को सभ्य और सदाचारी
मनुष्य बना सकते हैं तो सभ्य और सदाचारी मनुष्यों
को ईश्वर का भक्त भी बना सकते हैं।

हर प्रकार के कमाल एकत्रित करना—

पाँचवीं विशेषता यह है कि जहाँ प्रत्येक हुनर जानने
वाले की पूर्णता, स्वभाव या मनुष्य की दशा के
किसी विशेष भाग से संबंध रखती है, वहाँ हज़रत
साहिब मनुष्य के स्वभाव और मानवी दशा के
प्रत्येक पक्ष में पूर्ण हैं।

यदि कोई पुरुष संसार में इसलिए बड़ा कहलाता
है कि उसने अपनी जाति को दीनावस्था से उभार
कर उच्चता पर पहुँचा दिया तो यह बड़प्पन सब
से अधिक उस पुरुष को मिलता है, जिसने एक
अत्यन्त गिरी हुई जाति को, जो न कभी अपने

देश से बाहिर निकली थी, न सभ्यता और विद्या का ही इसमें कोई चर्चा था, थोड़े से वर्षों में न केवल संसार के एक बड़े भाग का विजेता, अपितु जीतने के साथ २ सभ्यता और रहने सहने एवं विद्या के प्रकाश को अन्धेरे से अन्धेरे कोनों तक पहुँचाने वाले बना दिया।

यदि कोई मनुष्य संसार में इस लिए बड़ा कहला सकता है कि उसने अपनी जाति के बिखरे हुए अंगों को एकत्रित कर दिया तो अरब वासियों जैसी बिखरी हुई जाति को जिस का एक २ कबीला कई पीढ़ियों की गार्हस्थ्य लड़ाईयां के कारण सर्वदा के लिए एक दूसरे से अलग हो चुका था, एक करने वाले से बढ़ कर कौन पुरुष बड़ा कहला सकता है, जिसने रेत के कणों को एकत्रित करके एक दृढ़ पहाड़ बना दिया, वह पर्वत जो काल के कुचक्रों के साथ भयानक से भयानक टक्कर लेने के पश्चात् आज भी उसी प्रकार सुदृढ़ है, जिस प्रकार पहिले दिन था।

यदि कोई पुरुष इस लिए बड़ा है कि उसने एक परमपिता के नाम को संसार में ऊँचा किया तो

हज़रत मुहम्मद से बढ़ कर संसार में अन्य कौन हो सकता है, जिसके खड़े होने का मन्तव्य ही ईश्वर का नाम जपाना था और जिस ने इस अभिप्राय को ऐसे अद्वितीय ढङ्ग से पूर्ण किया कि मूर्ति-पूजा और कुफ़र के मुख पर जो पर्दा पड़ा हुआ था, वह सर्वदा के लिए उठ गया। और एकता के प्रकाश से जगत् जगमगा उठा।

यदि कोई पुरुष इस लिए बड़ा कहला सकता है कि उसने उच्च कोटि के आचरण की शिक्षा संसार में फैलाई, तो उस से बढ़ कर अन्य पुरुष संसार में कौन सा होगा, जिसने पशुओं को मनुष्य बना दिया और जिसके आचरण की महक से संसार की वायु गुलाब और चम्बेली के इत्र से भरी हुई महक रही है और जिस का इस दृष्टिकोण से संसार पर सर्वदा के लिए उपकार रहेगा। जिसने यह सुगन्धि सूंघनी हो, वह कुरान शरीफ़ का पाठ करे*।

यदि कोई पुरुष विजयी और विजय प्राप्त करके

* कुरान शरीफ़ का गुरुमुखी और हिन्दी अनुवाद दफ़्तर अख़बार 'नूर' क़ादियां से मंगवाओ, मूल्य गुरुमुखी केवल २।), डाक व्यय अलग।

बड़ा हो सकता है तो कौनसा पुरुष बड़ा है, इस संसार विजयी से जो अनाथ अवस्था में पला और सगे सम्बन्धि न होते हुए भी न केवल विजयी अपितु बादशाह, प्रत्युत बादशाह बनाने वाला बन गया। और उस ऊच्च मान और प्रतिष्ठा वाले राज्य का प्रवर्त्तक हुआ, जो आज तेरह सौ वर्ष के पीछे भी संसार के सम्मिलित प्रयत्नों से, जो इसका नाम निशान मिटाने के लिए जारी हैं, टक्कर ले रहा है।

यदि न्याय प्रियता, सत्यता या अमानत बड़प्पन के नापने का कोई अनुमान है, जिस का सभ्य ससार को आज कल जबानी तौर पर इक़रार, किन्तु क्रित्यात्मक तौर पर इन्कार है तो उस से बड़ा और कौन होवेगा, जो आरम्भ से लेकर अन्त तक अपने जानने वालों में "अल अमीन" (महा धर्म्मात्मा) और सौभाग्य-शाली के उपनामों से बुलाया जाता है।

यदि कोई पुरुष इस लिए बड़ा कहला सकता है कि उसका नाम एक बड़ी जाति के लिए एक जीवित शक्ति का काम देता है तो स्मरण रक्खो कि हज़रत मुहम्मद साहिब के नाम में जो शक्ति है, उस से बढ़ कर अन्य कोई शक्ति नहीं। इस लिए कि यह

नाम पूर्व-पश्चिम और उत्तर-दक्षिण के चालीस करोड़ मुसलमानों को बिना रंग की विभिन्नता और बिना देश के भेद-भाव के संगठन की रस्सी में बांधने वाला सिद्ध हो रहा है और होता रहेगा। हां! यदि अनुयाइयों के लिए यह नाम एक जीवित शक्ति का काम का देता है तो शत्रुओं के लिए भी (मुझे एक मास की यात्रा के साथ काम करने वाले दबदबे के साथ सहायता दी गई है) का काम दे रहा है और इस्लाम के नाश की इच्छा करने वाली समस्त सामग्री के होते हुए और मुसलमानों की इस गिरी हुई दशा में भी उन से डर रहे हैं।

नबी जी के कमालों का काल के चक्रों से ऊँचे होना—छठी विशेषता यह है कि जहां प्रत्येक हुनरमन्द ने उस पथ में कमाल दिखाया है, जिस को उस का ज़माना या उसकी जाति या उसके देश की अवस्था उत्पन्न करने की योग्यता रखती है, हज़रत साहिब के कमाल ऐसे हैं कि आप के काल, और आपके देश और आप की जातिकी दशा उनके उत्पन्न करने की योग्यता अपने में नहीं रखती थी। जब किसी जाति अथवा देश में एक ईश्वर को मानने

की चर्चा हो तो एक एकता का प्रचार करने वाले का पैदा हो जाना; जब दार्शनिक खोज का सर्व साधारण में प्रचार हो, तो एक दार्शनिक का उत्पन्न हो जाना; जब जाति और देश की दशा बाहिर के आक्रमणोंके कारण जातिके भीतर युद्ध का जोश पैदा कर रही हो तो एक महान् विजयी का पैदा हो जाना; जब जाति का ध्यान साधारणतः सदाचार की ओर हो तो आचरण के एक बड़े शिक्षक का उत्पन्न हो जाना, जब जाति में कविता की ओर रुचि अधिक हो रही हो तो एक बड़े कवि का पैदा हो जाना; ठीक उन मानवी हालात के अनुसार है, जो इतिहास हमें दिखाता है। परन्तु एक अत्यन्त मूर्तिपूजक जाति के अन्दर, जो कुफ़र की गन्दगी से लत-पत हो रही हो और ईश्वर की एकता से नितान्त अनभिज्ञ हो, एक ऐसे पुरुषका उत्पन्न हो जाना जिस के स्वभाव के अन्दर ही मूर्तियों से घृणा होवे, और पन्द्रह सोलह वर्ष की आयु में ही* लात और अजाका वास्ता डाले जाने पर बड़ी दिलेरी से यह कह देवे कि मुझे संसार

*यह मूर्तियों के नाम हैं। नबी जी से पहिले अरब देश में जिन की बड़ी पूजा की जाती थी।

मैं किसी वस्तु से इतनी घृणा नहीं, जितनी इन
पत्थर की मूर्तियों से है और जो केवल ईश्वरीय
एकता का अकेला शिक्षक हो; एक ऐसी जाति के
भीतर जो धर्मों की पूजा में सीमा का उल्लंघन
कर गई हो, एक उच्च कोटि का दार्शनिक मस्तिष्क
रखने वाले धर्मों और मज़हबों के शत्रु का पैदा हो जाना;
एक ऐसी जाति के अन्दर जिस पर विद्या के प्रकाश की
एक किरण भी न पड़ी हो, इस प्रकाश को संसार के
अंधेरे से अंधेरे कोनों तक पहुंचाने वाले मनुष्य का पैदा
हो जाना; एक ऐसी जाति के अन्दर, जो जत्थे बन्दी के
टूट जाने के कारण इस बात के समझने से भी
रहित हो चुकी होवे कि जातीय एकता भी कोई
वस्तु है, जत्थेबन्दी की आवाज़ ऊँची करने वाले का
पैदा हो जाना; एक ऐसी जाति के अन्दर, जो शुभाचरण
से इतनी दूर जा पड़ी हो कि नीच आचरण पर
गर्व करना उसका स्वभाव बन चुका हो, महान्
उच्च आचरण की शिक्षा देने वाले का पैदा हो
जाना; हां! उस जाति के अन्दर जो शराब पीने और
जूआ खेलने में, संसार की सब जातियों से बढ़
चुकी हो, संसार से मद्य सेवन और द्यूत क्रीड़ा को

समूल उखाड़ने का प्रयत्न करने वाले का उत्पन्न हो जाना; फिर उस जाति के अंदर जो स्त्रीको इतनी नीच समझती हो कि जीवित लड़की को गाड़ देना इसके बड़े मनुष्यों के लिए गर्व का कारण हो, स्त्रियों की प्रतिष्ठा और स्त्रियों के उन अधिकारों के स्थापित करने वाले का पैदा हो जाना, जो आज कल की सभ्यता भी स्त्री जाति को नहीं दे सकी और अन्त में उस जाति के अन्दर, जिस में सैंकड़ों वर्षों की परस्पर लड़ाईयों के कारण लड़ाकेपन को मनुष्यता का गर्व समझा जाता था, एक ऐसे पुरुष का पैदा हो जाना, जो संसार में प्रेम, एकता और मानव सन्तति के प्यार की नींव रखने वाला हो, यह वह बातें हैं जिनके लिए इतिहास किसी दूसरे पुरुष का उदाहरण उपस्थित नहीं कर सकता और जिस से पता चलता है कि ऐसे अन्धकार और गन्दगियों के अन्दर इस प्रकाश और इस सुन्दरता को तय्यार करने वाला वही परमपिता परमात्मा था जो पृथिवी और समुद्र के अन्धेरे में हीरे और मोती पैदा करता है और हजरत मुहम्मद साहिब के अस्तित्व में उसने अपनी इस पूर्ण अलौकिक

शक्ति का वह पूर्ण परिचय दिया, जिस का उदाहरण नहीं मिलता।

मनुष्यों, जातियों और धर्मों में एकता की नींव रखना—सातवीं और सबसे बड़ी विशेषता जो आप को सब नबियों से उच्च आदरणीय बनाती है, और सारे संसार के लिए कृपालु बनाती है, वह आप का एक बड़ी एकता की नींव रखना है, न केवल भिन्न २ मनुष्यों में, न केवल भिन्न २ जातियों में, अपितु इन सब में से कठिन अर्थात् भिन्न २ धर्मों में एकता की नींव रखना, सब मनुष्यों में, बराबरी (समानता) का रंग इस भांति पैदा किया कि बड़े से बड़े मनुष्य के सम्बन्ध में भी यह शिक्षा दी, "मैं भी तुम्हारे जैसा ही एक मनुष्य हूं।" पति और पत्नि, दास और स्वामी, मूर्ख और बुद्धिमान्, राजा तथा प्रजा, सब एक दूसरे पर अधिकार रखते हैं और प्रत्येक पुरुष दूसरे के प्रति एक उत्तरदायित्व रखता है। मनुष्यता की श्रेणी में वह सब एक स्थान पर खड़े हैं। हज्ज के अन्दर इसका एक क्रियात्मिक दृश्य भी दिखा दिया कि लाखों मनुष्य एक ही पोशाक में, एक ही हैसियत में, एकही

अवस्था में, एक ही रूप में एकत्रित करके दिखा दिया। मनुष्य सन्तान की उस समानता, जिसका दृश्य संसार में कहीं भी नहीं दीखता, खाना काअ़बा के इर्द गिर्द और मिन्ना तथा अरफ़ात के स्थानों में, वह दृश्य प्रत्येक आंख देख सकती है। फिर पांच समय की निमाज़ में भी लगभग समानता का यह दृश्य दृष्टिगोचर होता है। ईश्वर के दर्बार में राजा और रंक, कंधे से कन्धा भिड़ा कर खड़े होते हैं। देश के प्रबन्ध में एक दास को क़ुरैश पर हाकम नियत करके दिखा दिया; विद्या की प्राप्ति में पुरुष तथा स्त्री का कोई भेद नहीं रक्खा, न छोटे का और न बड़े का। जातीय समानता के लिए यह नियम तज्वीज़ किया कि यह जातियां और क़बीले, एक दूसरे पर बड़प्पन प्रकट करने के लिए नहीं प्रत्युत केवल एक दूसरे को पहचानने के लिए हैं। और अब संसार में बड़ाई का अनुमान जातीयता नहीं रहेगा, अपितु पर्हेज़गारी और पवित्रता। काले गोरे का फ़र्क़, पूर्वी पश्चिमी का प्रश्न सब मिटा दिया, सब एक पिता के पुत्र हैं और फिर सब से कठिन काम करके भी दिखा दिया, अर्थात्

धर्म्मों में सुलह, जो संसार के किसी सुधारक के विचार में भी नहीं आया था । एक साधारण (मोटा सा) नियम स्थापित कर दिया कि सब जातियों में रसूल होते रहे, कोई जाति ईश्वर की कृपा तथा दया से वंचित नहीं रही । और एक मुसलमान का कर्त्तव्य निश्चित कर दिया कि न केवल अपने रसूल पर ही विश्वास लाए, अपितु जितने भी भिन्न २ जातियों में, संसार में नबी और रसूल हुए हैं, सब पर विश्वास लाए । आप से पहिले किसी पुरुष के मुख से यह वाक्य नहीं निकला था कि संसार की प्रत्येक जाति में रसूल आते रहे हैं । जब हमने सब संसार के नेताओं को सच्चा मान लिया तो मानव सन्तति में एक ऐसी एकता की नींव रख दी जो कभी भी नष्ट नहीं हो सकती । हम सब भाई भाई हो गए । फिर सब नेताओं का आदर करना हमारा कर्त्तव्य बनाया, यहां तक कि जिनको हम असत्य पूजक समझते हैं, उनको भी गाली निकालने से रोक दिया । फिर जाति के सच्चे और पवित्र नेताओं की मानप्रतिष्ठा क्यों न करें ? फिर न केवल धर्म्मों में ही प्रेम की नींव रखी, प्रत्युत उन भिन्न २ मतों में भी जो एक

दूसरे के विपरीत दृष्टि गोचर होते हैं, सुलह का मार्ग दिखा दिया और फ़र्माया कि सब धर्म्मों में जो बातें एक समान हैं, उन को एक नींव के तौर पर ठीक और सत्य मान लिया जावे और फिर सारे विश्वास को इस समान सिद्धान्त पर परखा जावे कि वह इस के विपरीत तो नहीं।

संक्षेप में यह कि यदि एक ओर आप ने परमपिता परमात्मा की प्रतिष्ठा और बड़प्पन को संसार में स्थापित किया तथा उसकी एकता को सब मैलों से पवित्र कर दिया तो दूसरी ओर समानता और मानव सन्तति की एकता को भी उच्चतम शिखर पर पहुंचाया और मनुष्य की मान-मर्यादा को संसार में ऊँचा किया।

बोलो श्री जगत्-गुरु मुहम्मद जी महाराज की जय!

